समाज सन्देश

गुरुकुल विद्यापीठ हरियाणा, भैंसवाल कलां
तथा
कन्या गुरुकुल खानपुर कलां का मासिक-पत्र

प्रकाशन तिथि : 25 मार्च, 1981

वर्ष 21 जनवरी / फरवरी / मार्च, 1981 अंक : 9/10/11

आयुर्ज्योति

महिला आयुर्वेदिक डिग्री कालेज
कन्या गुरुकुल, खानपुर कलां (सोनीपत)

विशेषांक

हुतात्मा भक्त फूलसिंह जी

1980–81

प्रार्थना

— डा० चन्द्र दत्त कौशिक
'काव्यशिरोमणि'

धरा के पोंछ दो आंसू, अमित उल्लास से भर दो,
निराशा छा रही पग में, नवल शुभ आस से भर दो।
अन्धेरा छा रहा मग में, प्रभव आलोक से भर दो,
अभय कर दो धरातल को, सकल संत्रास भय हर दो ॥

अपावन है बना तन-मन, विमलता-दिव्यता भर दो,
सिसकती मान-मर्यादा, मान को मान से भर दो।
जगाकर दिव्य ज्योति को, विमल विश्वास से भर दो,
अभय कर दो धरातल को, सकल संत्रास भय हर दो।

प्रेम से प्रेम को भर दो, वैर को प्रेम से हर दो,
मिटाकर भूत-भीति को, सुधारस प्रीति से भर दो।
सरलता-शीलता भर दो, शान्ति-सद्भावना भर दो,
अभय कर दो धरातल को, सकल संत्रास भय हर दो।

सकल दूषण मिटा जग के, अलौकिक भव्यता भर दो,
मलिनता-दीनता जग की, मिटाकर दिव्यता भर दो।
प्राण को प्राण से भर दो, सुखद सुख शान्ति का वर दो,
अभय कर दो धरातल को, सकल संत्रास भय हर दो ॥

कुशल व्यवहार गुण वर दो, विचारों में सुरभ भर दो,
सदा शिव लोक हितकारी, सत्य सुन्दर सुभग वर दो।
विभो ! सद्श्रेष्ठ वर वन्दन, मनुज को मनुज सा कर दो,
अभय कर दो धरातल को, सकल संत्रास भय हर दो ॥
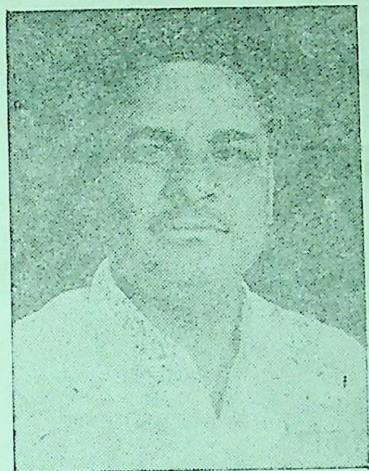
मुख्य मन्त्री, हरियाणा
चण्डीगढ़

26 दिसम्बर, 1980

★

सन्देश

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि महिला आयुर्वेदिक डिग्री कालेज, खानपुर कलां अपनी मासिक पत्रिका 'समाज सन्देश' का आयुर्वेदिक विशेषांक निकाल रहा है।

आयुर्वेद भारत की सब से पुरानी चिकित्सा पद्धति है। यह पद्धति सरल और सस्ती है। देश की वर्तमान स्थिति में इसके प्रसार की बहुत आवश्यकता है ताकि हमारे आर्थिक रूप से कमजोर भाई अपने परिवार की शारीरिक अरोग्यता के लिए इस चिकित्सा पद्धति से पूरा लाभ उठा सकें।

मैं विशेषांक के सफल प्रकाशन के लिए शुभ कामनाएं भेजता हूँ।

भजन लाल

* समाज सन्देश *

[सम्पादक। आचार्य हरिश्चन्द्र — आचार्य विष्णुमित्र — आचार्या सुभाषिणी]

महिला आयुर्वेदिक डिग्री कालेज अङ्क

(आयुर्ज्योति)

卐

संरक्षक :—

डॉ० अनन्तानन्द जी 'आयुर्वेदालंकार'
(प्राचार्य, महिला आयुर्वेद महाविद्यालय)

विशिष्ट सम्पादक :—

डॉ० चन्द्र दत्त कौशिक 'काव्यशिरोमणि'
बी० ए० एम० एस०, आयुर्वेदाचार्य, आयुर्वेदभास्कर, आयुर्वेदरत्न,
एम०ए०, साहित्यरत्न (संस्कृत-हिन्दी), प्रभाकर-एच० आनर्स,
विज्ञानरत्न, साहित्य-सरस्वति
प्रोफेसर, महिला आयुर्वेदिक कालेज, खानपुर कलां (सोनीपत)

★

समाज सन्देश के पाठकों की सेवा में

महिला आयुर्वेदिक डिग्री कालेज, खानपुर कलां का "आयुर्ज्योति" समाज सन्देश का विशेषाङ्क प्रस्तुत है। हमें आशा है कि हमारा यह प्रयास भी सफल रहेगा। इसके लिए हम महिला आयुर्वेदिक कालिज की छात्राओं, प्राध्यापक एवं प्राध्यापिकाओं तथा प्राचार्य महोदय के प्रति आभारी हैं। इसी प्रयास में समाज सन्देश का अगला अङ्क भी प्रकाशित होने जा रहा है।

समस्त हरियाणा जहां बिजली की अव्यवस्था तथा अभाव के कारण प्रभावित रहा है, इससे हमारा 'समाज सन्देश' भी प्रभावित हुए बिना न रह सका। विलम्ब के लिए खेद प्रकट करते हुए हम क्षमा प्रार्थी हैं।

—धर्म चन्द शास्त्री

महिला आयुर्वेद महाविद्यालय खानपुर कलां (सोनीपत)

के आचार्य
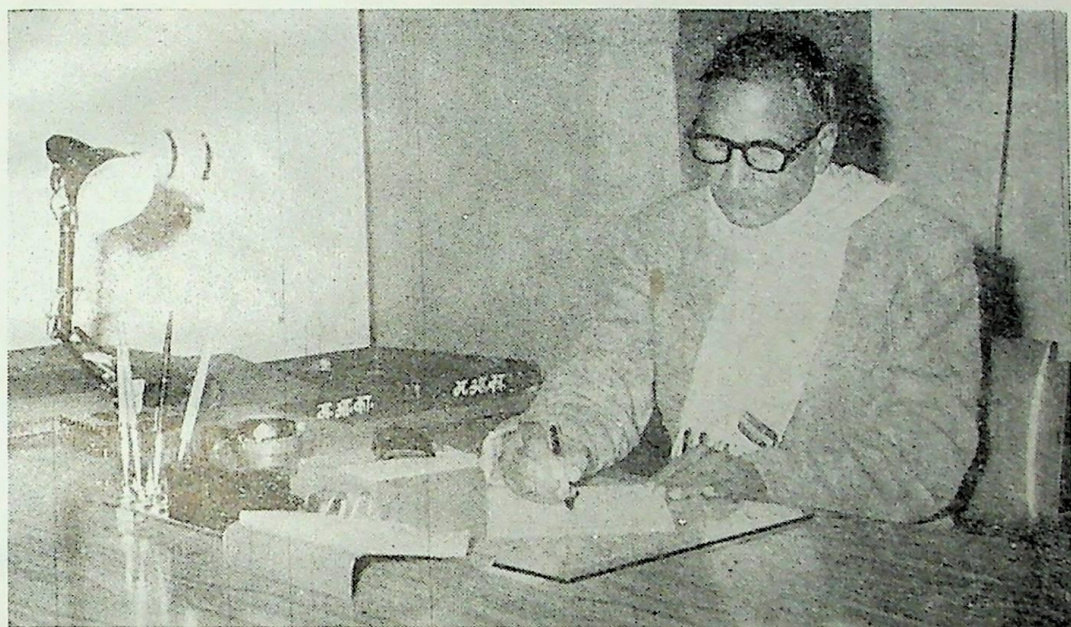
डॉ० अनन्तानन्द जी

'आयुर्वेदालंकार'

महिला आयुर्वेदिक डिग्री कालेज, खानपुर कलां (सोनीपत) हरियाणा

(महर्षि दयानन्द विश्वविद्याल, रोहतक से सम्बद्ध)

के अध्यापकों का फोटोग्रुप 1980–81

प्रथम पंक्ति— श्री समरसिंह वेदालंकार (संस्कृत विभागाध्यक्ष), डा० निशिकान्त A.L.I.M. (शालाक्य विभागाध्यक्ष), डा० राधामोहन ओझा G. A. M. S. (संहिता विभागाध्यक्ष), डा० अनन्तानन्द जी (प्रिंसिपल), आचार्य विष्णु मित्र जी विद्यामार्तण्ड (उपकुलपति), बहिन सुभाषिणी देवी 'पद्मश्री' (आचार्या, कन्या गुरुकुल), डा० सुदेवचन्द्र पाराशरी शास्त्री D.I.M.S. (चिकित्सा विभागाध्यक्ष), डा० विद्यारत्न आयुर्वेदालंकार M. A. (शरीर रचना विभागाध्यक्ष), डा० चन्द्र दत्त कौशिक B A M. S., M. A., D. Sc. Ay. (विभागाध्यक्ष फॉरनेन्सिक मेडिसिन, प्रबन्धक फार्मेसी एवं मुख्य सम्पादक 'आयुर्ज्योति')।

द्वितीय पंक्ति— डा० उपमा त्यागी G.A.M.S. (प्रशिक्षु), डा० कृष्णा सहरावत B.A.M.S. (प्रसूतितन्त्र विभाग), डा० सरिता सुल्लेरे B.Sc., B.A.M.S. (शरीर क्रिया विभागाध्यक्ष), डा० लता वैद्या G. A. M. S. (शरीर रचना विभाग), डा० निर्मला चौधरी B.S.A.M., M.D. (स्त्री-बाल रोग विभागाध्यक्ष), श्रीमती कौशल्या देवी (टंकणकार), श्री शेरसिंह (लेखाकार), श्री भीम सिंह (कार्यालयाध्यक्ष), श्री आत्मा राम B. Sc., M. Ed. (विज्ञान विभाग)।

धरती पर— श्री अरुण कुमार मेहन्दीरत्ता।

छात्राएँ —
जिन पर महिला आयुर्वेद महाविद्यालय को गर्व है
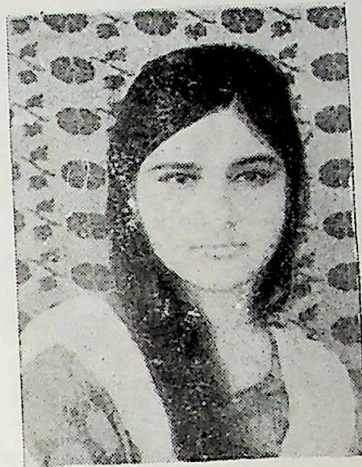
सुश्री शाहजहां बेगम, G. A. M. S. अन्तिम उपाधि परीक्षा 1980 में
महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय रोहतक में सर्व प्रथम स्थान प्राप्त

सुश्री चांद अग्निहोत्री
G. A. M. S. अन्तिम उपाधि परीक्षा
1980 में
महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय रोहतक में
द्वितीय स्थान प्राप्त
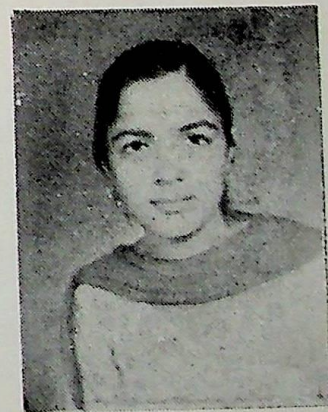
सुश्री कमला कुमारी
G. A. M S. अन्तिम उपाधि परीक्षा
1980 में
महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय रोहतक में
तृतीय स्थान प्राप्त
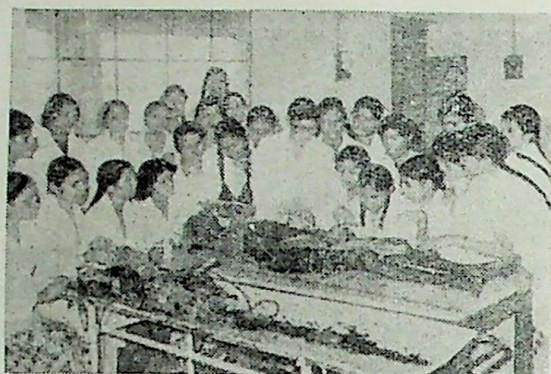
शवच्छेदन करती हुई छात्राएं

क्रियाशारीर विज्ञान में
कार्य करती हुई छात्राएं

पुस्तकालय में अध्ययन करती हुई छात्राएं

'फोटो ग्रुप' सांस्कृतिक कार्यक्रम टीम

प्राक्कथन

"समाज सन्देश" अपना आयुर्वेद विशेषांक 'आयुर्ज्योति' निकाल रहा है, यह प्रसन्नता की बात है। समाज को अपनी प्राचीन भारतीय संस्कृति से परिचित कराना और ऋषि-मुनियों के सन्देश को उन तक पहुँचाना इस पत्रिका का मुख्य उद्देश्य है। अत: प्राचीन चिकित्सा पद्धति से पाठकों को परिमित कराने के लिए इसका यह प्रयत्न सर्वथा स्तुत्य है।

"धर्मार्थं काममोक्षाणामारोग्यमूलमुत्तमम्" अर्थात् धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को यदि प्राप्त करना है तो इसके लिए स्वास्थ्य का ठीक रखना आवश्यक है। ऋषियों ने इस तथ्य को हृदयंगम करने के बाद जहां आध्यात्मिक उन्नति के लिए विभिन्न दर्शनों के माध्यम से इस ओर प्रयत्न प्रारम्भ किया वहां शारीरिक स्वास्थ्य की उन्नति के लिए भी प्राणायाम तथा यौगिक आसनों के अतिरिक्त विशेष प्रकार की चिकित्सा पद्धति का भी विकास किया, जिसमें आहार विहार के नियमों के अतिरिक्त रोग उत्पन्न होने पर उसके निदान और चिकित्सा की भी पूर्ण व्यवस्था थी। आयुर्वेद चिकित्सा की सब से प्रमुख बात यह है कि जहां इसके चिकित्सा सिद्धान्त अत्यन्त सरल और युक्तियुक्त हैं वहां चिकित्सा के लिए भी हमें परमुखापेक्षी नहीं होना पड़ता। गांव के एक कोने में बैठा हुआ वैद्य वहां मिलने वाले औषध द्रव्यों से ही अपनी बहुत कुछ चिकित्सा कर सकता है। आजकल बच्चों की छोटी-मोटी बीमारियों के लिए भी हमें डाक्टरों के पास भागना पड़ता है पर पहिले घर की वृद्धाएं ही रसोई घर के मसाले के डिब्बों में पाये जाने वाले पदार्थों से यह चिकित्सा कर लेती थीं और परम्परा से घर की बहुएं यह विद्या सीख लेती थीं। ठण्ड लगने पर दूध में केसर घिस कर देना, अतिसार तथा निमोनिया में जयफल का, इसी तरह प्रयोग। पेट में दर्द होने पर नाभी पर हींग का लेप। आँखें दुखने पर अफीम

तथा जस्ते के फूले को मलाई में मिला कर आंखों में डाल ऊपर रूई और पट्टी बांधना। चाक़ू से कटने पर मुलट्ठी मिला कर पकाया हुआ गरम-गरम सुहाता घी लगाना आदि प्रतिदिन के व्यवहार में आने वाली चिकित्सा थी। जीरा, काला नमक, हींग, काली मिर्च, धनिया, हल्दी, लौंग के साथ जावित्री, जायफल, केसर, कपूर, काला जीरा आदि से संयुक्त उमदा मसाले का डिब्बा 75 प्रतिशत रोगों को प्रारम्भ में ही शान्त करने की क्षमता रखता था। भोजन में किस सब्जी या दाल को किस के साथ छौंकना, जिस से उसके दोष दूर हों, इसमें भी उनका अनुभव असामान्य था। कद्दु को मेथी तथा मिर्च से छौंकने, उड़द को हींग से छौंकने तथा घुइयां को अजवायन से छौंकने में केवल स्वाद का ही ध्यान नहीं रखा जाता था, अपितु कैसे ये पदार्थ सुपच तथा गुणकारी हों इसका भी वे ध्यान रखते थे। खूनी बवासीर के रोगियों को बैंगन खाने का निषेध उनके बरसों के अनुभवों का परिणाम था। इसी तरह किन पदार्थों को एक साथ नहीं खाना चाहिए इसका भी विस्तृत वर्णन आयुर्वेद के ग्रन्थों में उपलब्ध होता है। निर्धन से निर्धन व्यक्ति को भी चिकित्सा सुविधा उपलब्ध हो इसके लिए आयुर्वेद चिकित्सा से बढ़ कर दूसरी चिकित्सा पद्धति कोई भी अन्य उपलब्ध नहीं है जिसकी औषधियां स्थानीय तौर पर ही प्राप्य हो सकें और जन सामान्य भी जिसका प्रशिक्षण प्राप्त कर सके। चिकित्सा विज्ञान निशि दिन उन्नति कर रहा है अतः उस ओर ध्यान जाना आवश्यक है परन्तु हजारों वर्षों से परीक्षित अपनी औषधियों पर पुन: विश्वास स्थापित हो इसके लिए आवश्यक है कि उन्हें शुद्ध रूप से तय्यार कर हम रोगियों पर उनका बार-बार प्रयोग कर उसके परिणामों का पुन: मूल्यांकन करें।

— डॉ० अनन्तानन्द
प्राचार्य

मुख्य सम्पादक की कलम से—

महिला अयुर्वेद उपाधि महाविद्यालय के विषय में

—डॉ० अनन्तानन्द जी आचार्य
प्रोफेसर डॉ० चन्द्र दत्त कौशिक
महिला आयुर्वेद महाविद्यालय,
खानपुर कलां (सोनीपत)

स्वनाम महात्मा भक्त 'श्री फूलसिंह' जी हरियाणा प्रान्त के एक गौरवशाली देदीप्यमान नक्षत्र थे। अपने जीवनकाल में उन्होंने समाज-सुधारक एवं शिक्षा-प्रसारक के रूप में जो अमर कीर्तिकारी उत्कृष्ट कार्य किए, वे सदैव स्मरणीय रहेंगे। ग्रामीण क्षेत्रों में बालक-बालिकाओं की अलग-अलग स्वस्थ एवं विशुद्ध शिक्षा के लिए उन्होंने दो आदर्शमय गुरुकुलों की स्थापना की। उनमें से एक गुरुकुल (बालकों के लिए) भैंसवाल कलां में तथा दूसरा कन्या गुरुकुल, खानपुर कलां (सोनीपत) में, उनके द्वारा स्थापित किया गया। अपने स्थापना-दिवस-काल से ही ये दोनों 'गुरुकुल' अपनी सहज-सुरभित-गौरव-पूर्ण विशेषताओं के कारण शिक्षा-क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण आदर्शमय स्थान बनाए हुए हैं। वर्तमान में प्राथमिक-बेसिक-शिशक्षा से लेकर विभिन्न विषयों में विश्वविद्यालय की उच्च-शिक्षा तक का इनमें अलग-अलग समुचित प्रबन्ध है।

अपने जीवनकाल में 'श्री भक्त जी' की यह उत्कट अभिलाषा थी कि महिलाओं के लिए अन्य विषयों की शिक्षा-दीक्षा के अतिरिक्त 'आयुर्वेद-क्षिक्षा' का भी समुचित प्रबन्ध होना चाहिए, जिससे प्रशिक्षण प्राप्त कर वे सद् सेवाभाव से समाज एवं राष्ट्र की चिकित्सा-सम्बन्धिनी महती आवश्यकताओं की सम्पूर्ति करती हुईं आत्मनिर्भर बन सकें। उनके इस महान पुनीत स्वप्न को गुरुकुल संस्थाओं की प्रबन्धक—'महासभा गुरुकुल विद्यापीठ हरियाणा, भैंसवालकलां तथा खानपुर कलां (सोनीपत)' ने सुमूर्त्त करने के

लिए सन् 1973 में कन्या गुरुकुल खानपुर कलां के अन्तर्गत 'महिला आयुर्वेद उपाधि महाविद्यालय' की स्वतन्त्र स्थापना की।

इस महाविद्यालय की स्थापना के प्रारम्भिक वर्ष में केवल बीस छात्राएं प्रवेश के लिए आईं। व्यय-अधिभार के सन्दर्भ में अर्थ-संकट से पूर्ण वह काल महासभा के लिए तदर्थ एक गम्भीर चुनौती था।

महासभा ने अपनी अथक लगन, उत्साह एवं धैर्य से इसे स्वर्गीय 'श्री भक्त जी' के प्रति अपनी विनीत श्रद्धाञ्जलि के रूप में स्वीकारते हुए, इस महाविद्यालय को निरन्तर चालू रखने का संकल्प किया। इस प्रकार महासभा के इस मूर्त्त सत्साहस से, सम्बन्धित एक भारी कमी पूरी हो गई।

इस समय इस महाविद्यालय में 270 से अधिक छात्राएं आयुर्वेद की शिक्षा ग्रहण कर रही हैं। प्रारम्भ में यह महाविद्यालय आयुर्वेदाचार्य, जी० ए० एम० एस० उपाधि-परीक्षा के लिए हरियाणा राज्य आयुर्वेद एवं यूनानी चिकित्सा पद्धति संकाय, चण्डीगढ़ से मान्यता प्राप्त रहा और वर्तमान में यह महाविद्यालय महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक से सम्बद्ध है, जिसमें भारतीय चिकित्सा केन्द्रीय परिषद्, भारत सरकार का आयुर्वेदाचार्य, बी० ए० एम० एस० उपाधि-परीक्षा का पाठ्यक्रम लागू है।

छात्राओं के सम्यक् प्रशिक्षण के लिए इस महाविद्यालय का अपना एक विशाल भवन है, जिसमें अध्यापन हेतु अनेक कक्ष, लम्बी-चौड़ी विभिन्न प्रयोग-शालाएं, शवच्छेदन प्रकोष्ठ तथा पुस्तकालय आदि हैं। महाविद्यालय की सीमा के तीन ओर द्रव्यगुण वाटिका है। स्वास्थ्य संवर्धन एवं मनोरंजन के लिए क्रीड़ास्थल है। ग्रामीण-अंचल में स्थित यह महाविद्यालय नगरीय प्रदूषण से सर्वथा दूर है। राष्ट्रीय सेवा प्रसार के लिए N. S. S. यूनिट भी है।

चिकित्सा की व्यावहारिक शिक्षा एवं जनता की सेवा के लिए इस महाविद्यालय का अपना एक 200 बिस्तरों वाला पांच मंजला भव्य आतुरालय निर्माणाधीन है। जिसके तल खण्ड के एक भाग का निर्माण पूरा हो चुका है और आगे निर्माणकार्य चालू है। इस आतुरालय ने सन् 1977 से जन-समाज की सेवा आरम्भ कर दी है।

वर्तमान में 20 से अधिक कर्मठ, कुशल एवं निष्णात तथा अनुभवी उपाध्याय छात्राओं को विभिन्न विषयों की सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक शिक्षा प्रदान कर रहे हैं।

चिकित्सा कार्य में यशस्विता एवं सम्मान प्राप्ति के लिए अन्य बातों के अतिरिक्त विशुद्ध एवं आशु फलप्रद औषधियों के निर्माण का ज्ञान भी नितान्त आवश्यक है। एतदर्थ औषधियों के व्यावहारिक-प्रत्यक्ष-निर्माण ज्ञान के लिए इस महाविद्यालय की एक स्वतन्त्र फार्मेसी यूनिट है। जिसमें छात्राओं को विभिन्न प्रकार की बहुकल्पीय औषधियों का निर्माण-ज्ञान कराया जाता है। यह फार्मेसी यूनिट 'कन्या गुरुकुल फार्मेसी, खानपुर कलां (सोनीपत)' के नाम से हरियाणा सरकार द्वारा रजिस्टर्ड है। इस फार्मेसी द्वारा निर्मित विश्वसनीय, विशुद्ध एवं आशुगुणकारी आयुर्वेदीय औषधियां निरापद एवं कारगर हैं। जनता एवं सरकार को निर्भयता पूर्वक इस फार्मेसी द्वारा—लोकहित भावना से—निर्मित औषधियों का प्रयोग करना चाहिए।

कार्य-कुशलता एवं अध्ययन-अध्यापन की दृष्टि से इस महाविद्यालय का कार्य प्रारम्भ से ही उच्च कोटि का एवं विशेष श्लाघनीय रहा है। इस महाविद्यालय की छात्राओं द्वारा राज्य आयुर्वेद फैकल्टी तथा विश्वविद्यालीय आयुर्वेद संकाय की विभिन्न परीक्षाओं में बराबर सम्मान, उच्च तथा सर्वोच्च स्थान एवं स्वर्ण पदक प्राप्त करते रहना इसका ज्वलन्त प्रमाण है। इस महाविद्यालय के परीक्षाफल का प्रतिशत सदैव ही कीर्तिमान् रहा है।

समूचे भारत में यही एक ऐसा महाविद्यालय है, जो मात्र महिलाओं के लिए विश्वविद्यालय स्तर की आयुर्वेद-शिक्षा को सुलभ कराता है। महाविद्यालय की 'प्रबन्ध-समिति' इसे देश का सर्वोत्तम आयुर्वेद-शिक्षा-संस्थान बनाने के लिए कृत-संकल्प है।

महाविद्यालय की 'प्रबन्ध-समिति' विश्वविद्यालय, प्रान्तीय एवं केन्द्रीय सरकार से इस महाविद्यालय के सम्पूर्ण विकास में सहायक सिद्ध होने की प्रार्थना करती है। जिस से यह अपने मद् उद्देश्य को पूरा कर सके।

भारत सरकार आयुर्वेदिक कालेजों को भवन-निर्माण आदि कार्यों के लिए प्रचुर धनराशि प्रदान करती है। परन्तु यह धनराशि उन्हीं आयुर्वेद महाविद्यालयों को दी जाती है, जो अपनी राज्य सरकारों से नियमित वार्षिक सहायता प्राप्त करते हैं। यह सहायता इस महाविद्यालय को अभी तक पर्याप्त रूप में नहीं मिल पा रही है। हरियाणा सरकार से एतदर्थ विनम्र प्रार्थना है कि वह इस महाविद्यालय को भी नियमित मुक्तहस्त वार्षिक सहायता देना प्रारम्भ करने की कृपा करे और साथ ही भारत सरकार से भी पर्याप्त अनुदान दिलाने की अनुकम्पा करे।

महाविद्यालय ने अपनी फार्मेसी यूनिट को विकसित करने के लिए पांच लाख रुपया अनुदान-राशि की याचना भारत सरकार से की है। सम्बन्धित याजना की सिफारिश महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक द्वारा की जा चुकने के बाद हरियाणा सरकार ने भी कृपा पूर्वक इसे संस्तुत करके भारत सरकार की सेवा में अग्रसारित कर दिया है। आशा है भारत सरकार का यह अनुदान इस संस्था को शीघ्र प्राप्त हो सकेगा।

महाविद्यालय के चहुँमुखी विकास एवं प्रगति के लिए विश्वविद्यालय, राज्य एवं केन्द्रीय सरकार का वांच्छित सहयोग परमावश्यक है। जिसके लिए हम सब हर पल, हर पग आशा एवं विश्वास संजोये हैं।

यह महाविद्यालय महर्षिदयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक से सम्बद्ध तथा हरियाणा एवं भारत सरकार से मान्यता प्राप्त है। इस महाविद्यालय में शिक्षा प्राप्त करके छात्राओं को वर्तमान में बी० ए० एम० एस० की उपाधि मिलती है, जिसके निम्न लाभ प्राप्त होते हैं :—

1. उक्त उपाधि प्राप्त छात्रा हरियाणा तथा पूरे भारत के किसी भी राज्य में मान्य चिकित्सक के रूप में पंजीकृत हो सकती है और स्वतन्त्र चिकित्सा व्यवसाय कर सकती है।

2. वह पूरे देश में कहीं भी सरकारी चिकित्साधिकारी के रूप में नियुक्त हो सकती है। इस पद का वेतन सब राज्यों में M. B., B. S. उपाधि के बराबर हो गया है या होने जा रहा है।

3. सरकारी नौकरी के अतिरिक्त देश में अनेक ट्रस्ट एवं अर्ध सरकारी संस्थाएं हैं, जो परोपकार की भावना से औषधालयों एवं आतुरालयों को चलाते हैं। इनमें भी इस उपाधि प्राप्त छात्राओं की नियुक्ति हो सकतो है।

4. आयुर्वेद विज्ञान अब तक राज्य सरकारों का विषय था, किन्तु अब यह केन्द्र तथा राज्यों दोनों का संयुक्त विषय बन चुका है। अतः इस उपाधि प्राप्त स्नातिकायें केन्द्रीय-विषय के विभागों में भी चिकित्साधिकारी के रूप में नियुक्त हो सकेंगी।

5. विश्व-स्वास्थ्य संगठन (W. H. O.) ने भी आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति को मान्यता प्रदान कर दी है। अतः निकट भविषय में इस उपाधि प्राप्त स्नातिकाएं विकसित एवं विकासशील देशों में चिकित्सा कार्य करने की अधिकारिणी हो जायेंगी।

6. इस उपाधि को प्राप्त कर लेने के बाद स्नातिकाएं अपनी रूचि के अनुसार देश के अनेक स्नातकोत्तर संस्थानों में प्रवेश प्राप्त कर भिन्न-भिन्न विषयों में विशेषज्ञ (M. D.) बन सकती हैं। विशेषज्ञ पाठ्यक्रमों में प्रवेश प्राप्त स्नातिकाओं को सरकार की ओर से आकर्षक मासिक वृत्ति प्राप्त होती है। विशेष योग्यता प्राप्त चिकित्सकों को सब जगह नौकरियों में वरीयता दी जाती है।

7. बी० ए० एम० एस० उपाधि प्राप्त स्नातिकाएं वही सम्मान, पद और वेतनमान प्राप्त करने की अधिकारिणी हैं, जो कि M. B., B. S. स्नातकों को मिलता है।

8. भारतीय चिकित्सा केन्द्रीय परिषद्, भारत सरकार के अधिनियम 1970 के अनुसार भारतीय चिकित्सा पद्धति के अध्यापक वर्गीय स्नातक विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यू० जी० सी०) द्वारा स्वीकृत वेतनमान (ग्रेड) पाने के अधिकारी हैं।

इस प्रकार यहां की छात्राओं का भविषय सर्वथा उज्जवल है। अपने प्रारम्भिक वर्ष से लेकर अब तक निरन्तर यहां की छात्राओं ने फैकल्टी / संकाय की विभिन्न G.A.M.S. / B.A.M.S. परीक्षाओं में कीर्तिमान स्थापित किये हैं, आगे की छात्राओं से हमें और भी अधिक गौरव की आशा है।

अन्त में हम उन सबके प्रति हृदय से आभारी हैं, जिन्होंने इस संस्था की मान-प्रतिष्ठा एवं गौरव को ऊंचा किया है और जिनकी प्रेरणा, कृपा, सौजन्य एवं अमित सहयोग से यह 'आयुर्ज्योति' विशेषांक आपकी सेवा में प्रस्तुत हो सका है। साथ ही हम क्षमा प्रार्थी हैं उन सबके प्रति जिनके लेखों को उपयोगी मानते हुए भी स्थानाभाव के कारण हम इस 'आयुर्ज्योति' अंक में स्थान न दे सके। हमारी छात्राओं का उत्साह पठन-पाठन, खेल-कूद, लेखन, विभिन्न प्रतियोगिताओं एवं सांस्कृतिक तथा राष्ट्रीय सेवा योजना कार्यक्रमों में सदैव श्लाघनीय रहा है, इसमें दो राय नहीं हैं। निरन्तर कीर्तिमान स्थापित करती हुई हमारी छात्राएं संस्था के सम्मान में चार-चांद लगाती रहेंगी, इस आशा एवं विश्वास के साथ उन्हीं का यह अंक उन्हीं को समर्पित।

उद्बोधन—

बढ़े जा तू उत्साह बटोर

आंधियां भीषण घुप घनघोर
हो चाहे दावानल का जोर,
विकट से विकट गहनतम—
धूम, छाये चाहे संकट भूप,
बढ़े जा तू उत्साह बटोर
निर्भय परम लक्ष्य की ओर !

विघ्न-बाधायें तेरे पास
आयेंगी देने को सन्त्रास,
करेंगी तुझको विकल हताश
कभी न होना अरे ! निराश,
बढ़े जा तू उत्साह बटोर
निर्भय अमर लक्ष्य की ओर !

कभी ना टूटे-छूटे डोर
देख कर आगे संकट घोर,
चलाचल तू आगे की ओर
हो चाहे अन्धकार या भोर,
बढ़े जा तू उत्साह बटोर
निर्भय सेवा-पथ की ओर !

हिम हो या प्रचण्ड उत्ताप
रुकना कभी ना उनमे काँप,
रखना मन में धीरज-आस
जगे पग-पग तेरा विश्वास,
बढ़े जा तू उत्साह बटोर
निर्भय अमर क्रान्ति की ओर !

नाचे तेरे मन का मोर
हाथ में रहे लक्ष्य की डोर,
तेरे चरण बढ़ें उस ओर
जिधर हो परम लक्ष्य का छोर,
बढ़े जा तू उत्साह बटोर
निर्भय अमर ज्योति की ओर !

—डॉ० चन्द्र दत्त कौशिक
'काव्यशिरोमणि'
एम. ए., आचार्य,
बी. ए. एम. एस.

Scheme of

Examination for Ayurvedacharya (B.A.M.S)

महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक के आयुर्वेद संकाय की B.A.M.S उपाधि परीक्षा के विविध विषयों का कक्षानुसार विवरण—

Subject	Theory	Practical	Total	L	P	D
1	2	3	4	5	6	7
FIRST YEAR						
1. Padarthavigyan Part A & B	100	50	150	125	—	—
2. Astangasangraha	100	50	150	100	—	—
	(Sustrasthan)	40 Chapters				
	Part–A :	20 Chapters				
	Part–B :	from 21 to 40 Chapters				
3. Additional Sanskrit	100	—	100	100	—	—

* For those candidates who passed without Sanskrit the Pre-Medical examination or an examination recognised as equivalent thereto.

This will not apply to the candidates seeking admission after Pre-Ayurveda Examination.

Subject	Theory	Practical	Total	L	P	D
SECOND YEAR						
1. Shariraracana Vigyan Paper-I 100 Paper-II 100		200	400 Ist Year IInd Year	100 100	75 75	— —
2. Shrirakriya Vigyana Paper-I 100 Paper-II 100		200	400 Ist Year IInd Year	75 75	20 20	20 20
3. Svastha Vritta (a) Samajika Roganutpadaniya 50 (b) Vaiyaktika 50	100	150	150 Ist Year IInd Year	50 50	50 —	— —

THIRD YEAR								
1. Dravyaguna Vigyan	Paper I 100 Paper II 100		150	350	IInd Yr.	100	20	20
					IIIrd Yr.	100	40	30
					IInd Yr.	65	50	10
					IIIrd Yr.	65	50	10
2. Rasa Shastra	Paper-I 100 and Bhaisha Vakalpana Paper-II 100		150	350	IInd Yr.	65	55	10
					IIIrd Yr.	65	55	10
3. Roga-Vigyana and Vikriti Vigyana	Paper-I 100 Paper-II 100		100	300	IInd Yr.	100	50	—
					IIIrd Yr.	150	100	—
4. Agada-Tantra and Vyavaharayurveda		100	50	150	IIIrd Yr.	100	50	—
FOURTH YEAR								
1. Charaka-samhita (Purvardha)	Paper-I 100		—	100	IVth Yr.	100	—	—
2. Prasuti-tantra and Stri-roga	Paper-I 100 Paper-II 100		100	300	IIIrd Yr.	100	50	—
					IVth Yr.	100	50	—
3. Kaumarabharitya	Paper-I 100		50	150	IVth Yr.	100	50	—
4. (a) Yoga 40 Nisrgopachara 30 (b) Ahara-vidhi 30 (Nutrition)		100	50	150	IVth Yr.	75	50	—
5. Roga-Vigyan and Vikriti-Vigyan	Paper-I 100 Paper-II 100	200	100	300	IIIrd Yr.	100	50	—
					IVth Yr.	150	100	—
FIFTH YEAR								
1. Charka Sambita (Uttarardha)	Paper-I 100		—	100	Vth Yr.	100	—	—

2. Kaya-Chikitsa								
Paper-I								
(a) Chikitsa								
(b) Siddhanta	50	100	200	600	IVth Yr.	100	50	—
(c) Siddha-Chikitsa	25				Vth Yr.	200	100	—
(d) Yunani-Chikitsa	25							
Paper-II								
Jyaradi Roga		100						
Paper-III								
(a) Vatayyadh-adichikitsa	50	100						
(b) Manasrog-Bhutvidya	30							
(c) Atyayika-chikitsa	20							
Paper-IV								
(a) Panchkarma	50	100						
(b) Rasayana	25							
(c) Vajikarna	25							
3. Shalyatantra								
Paper-I	100		100	300	IVth Yr.	50	25	—
Paper-II	100				Vth Yr.	100	75	—
4. Shalakyatantra								
Paper-I	100		100	300	IVth Yr.	50	25	—
Paper-II	100				Vth Yr.	100	75	—

One period of theory and practical shall not be of less than 45 minutes duration. The duration of the practical of Clinical subjects and Rachna Sharira (Dissection) shall be of atleast one and half ($1\frac{1}{2}$) hours.

विशेष:—

'समाज सन्देश' 1978 के 'आयुर्वेद विशेषांक' में हमने भारतीय चिकित्सा केन्द्रीय परिषद्, भारत सरकार की शिक्षा योजना एवं पाठयक्रम (परिशिष्ट सहित) को क्रमशः अंग्रेजी से हिन्दी एवं संस्कृत से हिन्दी में अनुदित करके पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया था। महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक ने सम्बन्धित इस पाठ्यक्रम में कतिपय संक्षिप्त परिवर्द्धन किये हैं, जिनकी जानकारी विषय-अध्यापक से कर लेनी चाहिए। बी० ए० एम० एस० की चतुर्थवर्षीय परीक्षा में इस विश्वविद्यालय ने 'योग निसर्गोपचार आहार विधि' विषय का समावेशन किया है। जिसका विवरण प्रस्तुत है:—

योग निसर्गोपचार आहार विधि

अंक 100 समय 3 घंटे (इन्टरनल असेसमेन्ट के 10 अंक सहित)
(भाग 'क' में 40 अंक तथा भाग 'ख' में 30+30=60 अंक हैं)

(भाग क) योग — अंक : 40

योग के लक्षण, चित्तवृत्ति विवेचन, वृत्तिनिरोधोपाय, अभ्यास लक्षण, वैराग्य लक्षण, ईश्वर लक्षण और उसका स्वरूप, योगबाधक चित्त विपेक्ष वर्णन, विक्षेप दूरीकरणोपाय, चित्त निर्मल करने के उपाय, मन को स्थिर करने के उपाय, सबीज-निर्बीज समाधि विवेचन, क्रिया योगलक्षण और उनका फल, क्लेश विवेचन और तद्नाशकोपाय। कर्माशय स्वरूप और उनके नाश के उपाय, योग के आठ अंगों का पूर्ण विवेचना, आसन लक्षण, आसन सिद्धि स्वरूप और उसका फल निरुपण एवं उसके भेद, स्वरूप भेद, फल विवेचन, धारण, ध्यान, समाधि और संयम का वर्णन, बहिरंग एवं अन्तरंग साधन का स्वरूप, निरोध परिणाम और उसके फल का वर्णन, संयम फल वर्णन, विविध सिद्धियों का वर्णन।

(भाग ख) प्राकृतिक चिकित्सा — अंक : 30

प्राकृतिक चिकित्सा का साधारण ज्ञान, रोग के कारण एवं उसके भेद, चिकित्सा सिद्धि भोजन, भोजन एवं उसके नियम, प्राकृतिक चिकित्सा का अन्य चिकित्सा प्रणाली से अन्तर, खाद्यपादार्थ विवेचना, वायु विषयक ज्ञान, जल विषयक ज्ञान, कटिस्नान का ज्ञान, आतप चिकित्सा, मृत्तिका चिकित्सा विज्ञान, वस्तिविज्ञान, रोग चिकित्सा विज्ञान, रोगी चिकित्सा कर्म और विविध प्रकार के रोगों की चिकित्सा जैसे—अतिसार, श्वास, सन्धिगत वात, विशूचिका, नेत्ररोग, कुष्ठ रोग, यक्ष्मा, प्रतिश्याय, पक्षाघात। चिकित्सा साध्य रोग, प्रदर, गर्भाशय शोथ आदि की चिकित्सा।

आहार विधि — अंक : 30

आहार द्रव्य, भोज्य अवयव, मात्रा, काल, विषम भोजन जन्य व्याधियां, शाकाहार और मांसाहार के गुण-अवगुण, आहार विधि विशेष आयतन, अन्न वर्ग, शिम्बी वर्ग, कन्दमूल शाक वर्ग, हरे और सूखे फल, मांसाहार, मांस संगठन, पशुनिरीक्षण, दूषित मांस से उत्पन्न रोग, दुग्ध सेवन, संगठन, परीक्षा, अशुद्ध दुग्ध सेवन जन्य रोग, नवनीत और घृत।

आधार ग्रन्थ :—

1. योगदर्शन समीक्षा (श्री कृष्णमणि त्रिपाठी)
2. योग दर्शन।
3. रोगों की अचूक चिकित्सा (जानकीशरण वर्मा)
4. आहार विषय में संहितागत विविध विषयों का ज्ञान और आधुनिक ग्रन्थों का ज्ञान अपेक्षित है।

क्रियात्मक अंक : 50

यथा सम्भव प्राणायाम आसन विधि आदि का ज्ञान, वस्ति प्रकार का ज्ञान, विषम भोजन जन्य व्याधियों का ज्ञान एवं उनके प्रतिकार आदि का ज्ञान। विविध भोज्य द्रव्यों का साक्षात् ज्ञान।

शेष समस्त पाठ्यक्रम (बी० ए० एम० एस० उपाधि परीक्षा) का विस्तृत व्यौरा 'समाज सन्देश' वर्ष 18, अंक 8–11, दिसम्बर 1977 – मार्च 1978 के आयुर्वेद विशेषांक' तथा महाविद्यालय के सम्बन्धित विषय अध्यापक से प्राप्त करना चाहिए। 'आयुर्वेद विशेषांक' महिला आयुर्वेदिक कालेज, खानपुर कलां (सोनीपत) से दस रुपया देकर प्राप्त किया जा सकता है।

—डॉ० चन्द्र दत्त कौशिक
B. A. M. S. M. A., D.Sc. Ay.
प्रोफेसर, महिला आयुर्वेदिक डिग्री कालेज,
खानपुर कलां (सोनीपत)

कारक निदान

—डॉ० चन्द्रदत्त कौशिक

आयुर्वेद चिकित्सा का शास्त्र है। इसके मूल प्रयोजन हैं—स्वस्थ व्यक्तियों के स्वास्थ्य की रक्षा व रोगी को रोग से मुक्ति। रोगों की चिकित्सा करने से पूर्व रोग व रोगी दोनों की ही वास्तविक स्थिति का ज्ञान परमावश्यक है अन्यथा लाभ की अपेक्षा हानि की सम्भावना ही अधिक होती है। महर्षि चरक ने स्पस्ट रूप से लिखा है :—

रोगमादौ परीक्षेत् ततोऽनन्तरमौषधम्।
ततः कर्मभिषक पश्चात्ज्ञानपूर्वं समाचरेत्॥

यहां हम रोग परीक्षा के साधनों पर विचार करेंगे। क्योंकि सम्यक् रोग विनिश्चय कर लेने पर चिकित्सा कर्म में सिद्धि निःसन्देह होती है। महर्षि चरक सुश्रुत आदि सभी महर्षियों ने रोग की परीक्षा निदान पंचक द्वारा की जानी स्वीकार की है (विनिश्चयेन दीयते प्रतिपाद्यते अनेन इति निदानम्)।

नोट:—जब निदान शब्द का प्रयोग रोग विनिश्चय के अर्थ में होता है तब उसका अंग्रेज़ी पर्याय (Diagnosis) होता है। जबकि निदान शब्द का प्रयोग 'रोग के कारण' के रूप में व्यवहृत होने पर उसका पर्याय (Aetiology) होता है।

ये पंचनिदान निम्न हैं :—

निदानम् पूर्वरूपाणि रूपाणि उपशयस्तथा।
सम्प्राप्तिश्चेति विज्ञानम् रोगाणाम् पंचधा स्मृतम्॥

अर्थात् निदान, पूर्वरूप, रूप, उपशय व सम्प्राप्ति ये पांचों मिलकर या पृथक्-पृथक् रोग का ज्ञान कराते हैं। यहां पर 'मिलकर' तथा 'पृथक्-पृथक्' इन दो शब्दों द्वारा पुनरुक्ति दोष के उत्पन्न होने की शंका अनेक आचार्य करते हैं।

आचार्य माधव ने इस शंका का समाधान करते हुए कहा है कि एक द्रव्य का ज्ञान एक ही साधन से अथवा साधन समूह से करने में पुनरुक्ति दोष नहीं है क्योंकि अनेक बार ऐसा देखा जाता है कि कुछ रोगों का ज्ञान निदान द्वारा, कुछ का पूर्व रूप द्वारा, कुछ का सम्प्राप्ति द्वारा, कुछ का रूप व कुछ का उपशय द्वारा होता है जबकि कई बार किन्हीं दो रोगों का स्थान वेदना व कारण एक जैसे ही होते हैं अतः तब उन का ज्ञान शेष उपायों द्वारा किया जाता है यथा मूत्र ग्रन्थि रोग तथा अश्मरी रोग का स्थान वेदना व कारण एक समान हैं परन्तु पूर्व रूप अलग-अलग हैं। मूत्र ग्रन्थि में मूत्र की गन्ध भिन्न प्रकार की होती है जबकि अश्मरी के पूर्व रूप में मूत्र में बछड़े के मूत्र के समान गन्ध आती है। इस प्रकार प्रथम पूर्व रूप से रोग का ज्ञान किया जाता है तथा फिर अन्य उपायों से उसकी पुष्टि कर ली जाती है।

उक्त पाँचों प्रकार से रोगों का निश्चय करने पर भूल होने की लेशमात्र भी सम्भावना नहीं होती। पाश्चात्य पद्धति के अनुसार रोग विनिश्चय (Diagnosis) के लिए जितने भी उपाय काम में लाए जाते हैं वे सभी इन पांचों शीर्षकों के अन्तर्गत आ जाते हैं। आयुर्वेद के अन्य ग्रन्थों में रोगी की आठ परीक्षाएं बतलाई गई हैं :—

"रोगाक्रान्त शरीरस्य स्थानान्यष्टौ परीक्षयेत्।
नाड़ी, मूत्रं, मल, जिह्वां शब्द स्पर्श दृगाकृति॥"

ये आठ परीक्षाएं रोगी की हैं तथा पूर्व कथित पांच प्रकार रोग विनिश्चय के हैं। इन आठ परीक्षाओं द्वारा जो जानकारी प्राप्त होती है उससे रोगी के रोग का निदान, पूर्वरूप, रूप आदि का ही ज्ञान होता है और उसी के आधार पर रोग विनिश्चय किया जाता है। अतः इन पांचों का पूर्ण ज्ञान रोग की वास्तविक पहचान के लिए परमावश्यक है।

विभिन्न आचार्यों ने निदान शब्द का अर्थ करते हुए निदान शब्द की अनेक निरुक्तियां दी हैं जो कि निम्नांकित हैं :—

1. "निर्दिश्यते व्याधि अनेन इति निदानम्।"

अर्थात जिस उपाय से व्याधि का निर्देश किया जाये उसे निदान कहते हैं।
—आचार्य गदाधर

2. "निश्चित्य दीयते प्रतिपाद्यते व्याधि अनेन इति निदानम्।"

अर्थात निश्चयपूर्वक जिस उपाय के द्वारा व्याधि का ज्ञान किया जाता है उसे निदान कहते हैं।

यहां पर निदान शब्द का अर्थ रोग विनिश्चय ही है। ये सभी परिभाषाएं पांचों प्रकार के निदानों पर एक समान लागू होती हैं।

माधव निदान में निदान शब्द का प्रयोग दो रूपों में किया है :—

1. कारक निदान, 2. ज्ञापक निदान

'कारक निदान' वह निदान है जो रोगोत्पत्ति में साक्षात् हेतु या कारण है तथा 'ज्ञापक निदान' वे निदान हैं जो रोग का ज्ञान कराते हैं।

इन पांचों निदानों में प्रथम निदान रोग का कारण तो बताता ही है साथ ही रोग का ज्ञापन भी करता है। अत: वह कारक व ज्ञापक दोनों ही है। कारक निदान को विशेष निदान या व्यक्ति निदान भी कहते हैं तथा ज्ञापक निदान को जाति व समष्टि निदान भी कहते हैं। ज्ञापक निदान से पूर्व रूप, रूप, उपशय व सम्प्राप्ति का ग्रहण किया जाता है।

यहां पर विशेष रूप से निदान (Cause of the disease) प्रयोजन, लक्षण, प्रकार आदि का वर्णन करते हैं।

संसार का नियम है कि कारण के बिना कोई भी क्रिया नहीं हो सकती। हमारे जीवन में होने वाली प्रत्येक छोटी बड़ी घटना का सम्बन्ध किसी ने किसी कारण से अवश्य होता है। संसार की सभी चिकित्सा पद्धतियों के योग्य चिकित्सक इस बात को एक स्वर से मानते हैं कि प्रत्येक रोग की उत्पत्ति का कोई न कोई कारण अवश्य होता है। कारणों पर विभिन्न विद्वानों में मतभेद अवश्य है परन्तु कारणों के अस्तित्व पर नहीं। आयुर्वेद के मत से प्रत्येक रोग दोषों क प्रकोप से होता है किन्तु एलोपैथी मत से जीवाणु, जीवनीय द्रव्यों का अभाव आदि कारण माने जाते हैं। एलोपैथी मत से अनेक ऐसे रोग, जिनका कि कारण ज्ञात नहीं होता के विषय में लिखा होता है कि—"Aetiology is unknown" अर्थात् "कारण ज्ञात नहीं है" यह कभी नहीं लिखा जाता कि "There is no Aetiology of this Disease" अर्थात् "इस रोग का कोई कारण नहीं है"। अत: प्रत्येक कार्य का कोई न कोई कारण अवश्य होता है वह दूसरी बात है कि हमें ज्ञात न हो। अत: निदान या कारण के अस्तित्व पर शंका नहीं की जा सकती।

आचार्य माधव ने निदान शब्द को समझाने के लिए चार प्रकार के उपायों का वर्णन किया है :—

१- नाम :—

नाम से परिचय कराने के लिए आचार्य ने निदान के पर्यायवाची शब्दों का प्रयोग किया है :— निमित्तहेत्वायतनप्रत्ययोत्थानकारणैः; निदानमाहु पर्यायैः।

२- रूप परिचय :—

"रोगोत्पादको हेतु निदानम्" अर्थात् रोगोत्पत्ति कराने वाला कारण निदान कहलाता है।

३- कर्म परिचय—

"सेऽतिकर्त्तव्यताकः रोगोत्पादको हेतु निदानम्"

अर्थात् स—सहित, इतिकर्तव्यताकः इस प्रकार करने वाला अर्थात् इस प्रकार दोषों को कुपित करते हुए, रोगोत्पादको हेतु—रोगोत्पत्ति में कारण निदान कहलाता है।

४- बन्धु परिचय –

"ज्ञापक भिन्नः हेतु निदानम्" अर्थात् ज्ञापक निदान से अलग जो रोग का हेतु है वो निदान कहलाता है।

निदान को और अधिक स्पष्ट करते हुए आचार्य ने आगे लिखा है कि :—

रोग ज्ञापकत्वे सति पूर्वरूप रूप उपशय सम्प्राप्ति।
भिन्नत्वं जनकत्व धर्मं विशिष्टत्वं च निदानत्वं ॥

अर्थात् रोग का ज्ञान प्राप्त करने में पूर्वरूप, रूप, उपशय व सम्प्राप्ति से भिन्न तथा रोग को उत्पन्न करने का कराण जो विशिष्टधर्म है वह ही निदान है।

निदान ज्ञान का प्रयोजन :—

निदान से तात्पर्य रोग के कारण से है यदि रोग के कारण का ही ज्ञान नहीं किया जायेगा तो रोग विनिश्चय तथा चिकित्सा कर्म में अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ सकता है। महर्षि सुश्रुत ने लिखा है कि— "सक्षापतः क्रियायोगो निदानं परिवर्जनम्" अर्थात् निदान या रोग के कारण का परिवर्जन या त्याग करना ही संक्षेप में चिकित्सा का प्रथम सूत्र है। जब तक हमें निदान का ज्ञान ही नहीं होगा तब तक हम उनका त्याग भी नहीं कर सकते तथा न ही रोगी की उपयुक्त चिकित्सा कर सकते हैं। अतः निदान का ज्ञान परमावश्यक है।

कई व्याधियों के कारण एक समान होते हैं यथा मिथ्या आहार-विहार से ज्वर

की उत्पत्ति होती है तथा उसी से मुल्य की भी उत्पत्ति होती है। ऐसी अवस्था में प्रथम पूर्वरूप द्वारा रोग की पहचान करनी चाहिए तथा फिर निदान का परिवर्जन करना चाहिए।

लक्षण :—

निदान का लक्षण करते हुए कहा गया है कि :—

"निमित्तादिपर्यायैरभिधीयमानत्वं निदानत्वं"

अर्थात् निमित्त आदि शब्दों से जिस किसी भी एक ही पदार्थ का बोध होता है उसे निदान कहते हैं। इस लक्षण से किसी विशिष्ट वस्तु का स्पष्ट निर्देश न होने से "सेऽतिकर्तव्यताकः रोगोत्पादको हेतुः निदानम्" यह लक्षण अधिक उपयुक्त माना गया है। इसका अर्थ है— "कर्तव्य की अनेकताओं से युक्त अर्थात् दोषप्रकोपणादि अनेक कार्यों को करते हुए जो रोग उत्पन्न करता है उसे निदान कहते हैं।

सम्प्राप्ति में लक्षण अतिव्याप्त न हो जाये अत: निदान के लक्षण में 'सेतिकर्तव्यताक:' पद दे दिया गया है। सम्प्राप्ति में रोगोत्पत्ति के अतिरिक्त इतिकर्तव्यता न होने से यह लक्षण अतिव्याप्त नहीं होता। यदि केवल रोगोत्पादक हेतु को ही निदान कहा जाये तो सम्प्राप्ति भी निदान के अन्तर्गत आ जायेगी किन्तु 'सेतिकर्तव्यताका' विशेषण देने से अहित आहार-विहार व उनके द्वारा प्रकोपित दोष ही निदान के अन्तर्गत आते है क्योंकि उनमें 'इतिकर्तव्यता (अनेक व्यापार) होते हैं जबकि सम्प्राप्ति में रोगोत्पादन मात्र व्यापार होता है विविध व्यापार नहीं अत: वह निदान में अन्तर्भूत नहीं होती।

प्रकार :—

आचार्य माधव के मतानुसार कारक निदान 14 प्रकार का होता है। प्रथम इसके चार भेद बताए गये हैं।—

1. सन्निकृष्ट 2. विप्रकृष्ट 3. व्यभिचारी 4. प्राधानिक

1. सन्निकृष्ट निदान :-

सन्निकृष्ट अर्थात् समीप उपस्थित। इन्हें समीप उपस्थित इसलिए कहा है कि ये हर प्राणी के समीप बने रहते हैं तथा दोषों के संचय की अपेक्षा नहीं करते। रात्रि, दिन और भोजन के परिपाक की तीन-तीन अवस्थाएं हैं जिन में क्रम-क्रम से एक-एक दोष का प्रकोप होता है। यह प्रकोप स्वाभाविक है किन्तु मिथ्या आहार विहार से स्वभावत: कुपित दोष और भी कुपित होकर रोगोत्पत्ति कर देता है। यथा दोपहर के समय पित्त

का प्रकोप तथा भोजन की पच्यमान अवस्था में पित्त का प्रकोप स्वाभाविक है परन्तु यदि कोई इस काल में पित प्रकोपक आहार विहार का सेवन करे तो उसका पित्त और भी कुपित होकर रोगों की उत्पति कर सकता है। इस प्रकार के निदान को सन्निकृष्ट निदान कहते हैं।

2. विप्रकृष्ट निदान :—

जब संचित दोष दीर्घ काल तक निरुपद्रव रहे और फिर प्रकोपक कारण मिलने पर एकाएक कुपित होकर रोग उत्पन्न करे तब उसे विप्रकृष्ट निदान कहते हैं जैसे ग्रीष्म में संचित पित्त शरद में प्रकोपक कारण मिलने पर पित्त ज्वर उत्पन्न करता है। विप्रकृष्ट का अर्थ है दूर अर्थात् ऋतु के किसी भाग में दोष का संचय होता है किसी भाग में प्रकोप होता है। इस प्रकार का निदान विप्रकृष्ट निदान कहलाता है।

3. व्यभिचारी निदान :—

जो निदान दुर्बल होने से व्याधि को उत्पन्न करने में असमर्थ होता है उसे व्यभिचारी निदान कहते हैं। इन्हें व्यभिचारी इस लिए कहा गया है कि ये हेतु अवश्य हैं परन्तु इनको अपने कार्य में (रोगोत्पत्ति में) सफलता नहीं मिलती। रोग की उत्पत्ति बाह्य निदान तथा उससे प्रकुपित दोष और दूष्य की शक्ति पर निर्भर करती है। यदि निदान अल्प होगा तो दोषदुष्टि भी सौम्यस्वरूप की होगी फलस्वरूप दूष्य भी अल्प-प्रमाण में ही दूषित होंगे तथा यदि निदान बलवान होगा तो दोष और दूष्य की दुष्टि भी सबल होगी। ऐसी अवस्था में रोग अवश्य उत्पन्न होगा। इस प्रकार अनिश्चित परिणाम वाले निदान को व्यभिचारी निदान कहते हैं।

कुछ अवस्थाओं में व्यभिचारी निदान रोग प्रतिकारक शक्ति (Immunity) भी उत्पन्न करते हैं। यथा नशे के लिए विष का सेवन करने वालों में उस विष को सहन करने की इतनी क्षमता उत्पन्न हो जाती है कि उस विष की मारक मात्रा लेने पर भी उन्हें कोई हानि नहीं होती। इसी नियम के आधार पर पाश्चात्य चिकित्सक विभिन्न संक्रामक रोगों के निदान को व्यभिचारी बना कर रोग प्रतिषेध (Prophy-laxis) के लिए प्रयुक्त करते हैं। "That is called Vaccine Therapy"

4. प्राधानिक निदान :—

जो निदान अति प्रबल होने के कारण दोष संचय की अपेक्षा न रखते हुए तुरन्त रोग को उत्पन्न कर देता है उसे प्राधानिक हेतु कहते हैं। मारक विष इसी श्रेणी में

आ जाते हैं वे प्रत्येक व्यक्ति पर अपना प्रभाव निश्चित काल में अवश्य उत्पन्न करते हैं।

दूसरे प्रकार का निदान तीन प्रकार का होता है :—

1 असात्म्येन्द्रियार्थ संयोग 2. प्रज्ञापराध 3. परिणाम।

1. असात्म्येन्द्रियार्थ संयोग :-

श्रोत्र आदि पाँच ज्ञानेन्द्रियों से शब्दादि इन्द्रियार्थों का हीन मिथ्या तथा अतियोग करना असाम्येन्द्रियार्थ संयोग कहते हैं। यथा अतिभास्वर वस्तुओं को अधिक काल तक देखना चक्षु का अतियोग, बिल्कुल न देखना अयोग तथा अति दूरस्थ, भयंकर, वीभत्स तथा गन्दी वस्तुओं को देखना मिथ्यायोग कहलाता है इनसे उत्पन्न व्याधियों असात्म्येन्द्रियार्थ संयोग जन्य होती है। अन्य इन्द्रियों का भी हीन मिथ्यायोग व अतियोग इसी प्रकार होता है।

किसी भी इन्द्रिय के विषय का सेवन न करना या अत्यन्त कम करना हीन योग कहलाता है।

किसी भी इन्द्रिय के विषय का सेवन अत्यधिक करना अतियोग कहलाता है।

किसी भी इन्द्रिय के विषय का सेवन अस्वाभाविक रीति से करना मिथ्या योग कहलाता है।

2. प्रज्ञापराध :—

धीधृतिस्मृतिविभ्रष्टकर्मयत्कुरुतेऽशुभम्।
प्रज्ञापराधं तं विज्ञात सर्वदोष प्रकोपजम्॥

अर्थात् बुद्धि धारण शक्ति व स्मरण शक्ति के विलुप्त होने पर मनुष्य जो कार्य करता है उसे प्रज्ञापराध कहते है। बुद्धि नाश होने पर मनुष्य को वस्तुओं का यथार्थ ज्ञान नहीं रहता। धृतिविनाश से मनुष्य आपातकाल में आत्मरक्षा के उपाय के ज्ञान से वंचित रहता है। इस प्रकार वह अहितकर पदार्थों से पृथक नहीं रह सकता, अहितकर आहार विहार के सेवन से विभिन्न रोगों की उत्पत्ति होती है। इस प्रकार उत्पन्न होने वाले रोग प्रज्ञापराध जन्य कहे जाते हैं। संसार के समस्त रोगों का मूल भी प्रज्ञापराध ही है।

3. परिणाम :—

ऋतुओं के स्वाभाविक शीत आदि गुणों का हीन मिथ्या तथा अतियोग होना ही परिणाम कहा जाता है। चरक के अनुसार परिणाम का अर्थ काल है—

"कालः पुनः परिणाम उच्यते ।"

यथा शिशिर ऋतु में शीत का न पड़ना या कम होना शीत का हीनयोग, अत्यधिक होना अतियोग तथा कदाचित् उष्णता हो जाना मिथ्यायोग कहा जाता है। इनसे उत्पन्न व्याधियां परिणाम (काल) रूप हेतु से उत्पन्न कही जाती हैं।

निदान के पुनः तीन भेद हैं :—

1- दोषहेतु 2. व्याधि हेतु 3- उभय हेतु।

1. दोष हेतु :—

जो निदान रोग विशेष से कोई सम्बन्ध न रखते हुए केवल दोष या दोषों की वृद्धि या प्रकोप करता है उसे दोष हेतु कहते हैं। यथा मधुर रस कफ की वृद्धि करता है फिर वह बढ़ा हुआ कफ किसी भी कफजन्य व्याधि की उत्पत्ति कर सकता है। इसके अन्तर्गत मधुर अम्ल लवण आदि रसों का समावेश है।

2 व्याधि हेतु :—

दोषनिरपेक्ष निश्चित व्याधि का उत्पादक हेतु व्याधिहेतु कहलाता है यथा मृत्तिका भक्षण पाण्डु रोग का कारण है। यद्यपि मृत्तिका भी दोष प्रकोप करती है जैसे कि कहा है— "कषाया मारुतं पित्तमूषरामधुराकफम्" तथापि मृत्तिका भक्षणजन्य दोषों से पाण्डु रोग ही उत्पन्न होता है अन्य नहीं अतः मृतिकाभक्षण निश्चित रूप से पाण्डु रोग का उत्पादक होने से व्याधिहेतु कहलाता है।

3. उभय हेतु :—

जो निदान विशिष्ट दोष को कुपित करके किसी विशिष्ट व्याधि की उत्पत्ति करता है उसे उभय हेतु कहते हैं। यथा विदाही अन्न का सेवन करके हाथी, घोड़ा, ऊंट आदि की सवारी करने से वात पित्त और रक्त कुपित होकर वातरक्त की उत्पत्ति करते हैं अन्य किसी रोग की नहीं।

हेतु के पुनः दो भेद हैं— 1. उत्पादक 2. व्यंजक

1. उत्पादक हेतु :—

जो हेतु केवल दोष की उत्पत्ति या वृद्धि करता है उसे उत्पादक निदान कहते हैं।

यथा हेमन्त ऋतु में मधुर रस की उत्पत्ति होती है तथा उस मधुर से शरीरों में कफ धातु या दोष की उत्पत्ति होती है। इस प्रकार मधुर रस, कफ धातु, दोष की उत्पत्ति में सहायक है तथा बढ़े हुए कफ का उत्पादक हेतु हेमन्त ऋतु में उत्पन्न हुआ मधुर रस है।

2 व्यंजक हेतु :—

इसका अर्थ प्रेरक है अर्थात् जो बढ़े हुए दोष को प्रकुपित करके रोगोत्पत्ति करता है उसे व्यंजक हेतु कहते हैं। यथा हेमन्त ऋतु में संचित कफ पुनः वसन्त ऋतु में सूर्य के संताप से द्रवित होकर कफज रोगों को उत्पन्न करता है अतः बसन्त का सूर्यसन्ताप व्यंजक हेतु है।

हेतु पुनः दो प्रकार का है :— 1. बाह्य निदान 2. आभ्यान्तर निदान।

1. बाह्य निदान :—

आहार विहार, काल, जीवाणु, आघात, दंशक कीटों के विष, विद्युत तथा अन्य मुख द्वारा सेवित विष आदि बाह्यहेतु हैं। ये सद्योमारक अथवा दोषप्रकोपण पूर्वक व्याधियों को उत्पन्न करने वाले होते हैं।

2. आभ्यन्तर निदान :—

शरीरस्य दोष एवं दूष्य ही रोगों के आभ्यन्तर निदान हैं। ये विभिन्न कारणों से प्रकुपित होकर रोग उत्पन्न करते हैं। प्रकुपित दोष भी ऋतु अनुसार प्राकृत व वैकृत अनुबन्ध्य (स्वतन्त्र प्रधान) तथा अनुबन्ध (परतन्त्र अप्रधान) देहानुसार प्रकृति व विकृति भेद से तथा आशयापकर्ष तथा गति भेद से तथा साम व निराम भेद से अनेक प्रकार के हो जाते हैं तथा रोगोत्पादन में सहायक होते हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि पचनिदान में कारक निदान सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थान रखता है तथा चिकित्सा में प्रवृत होने से पूर्व चिकित्सक को रोग के निदान व उसके भेद-प्रभेदों पर युक्तिपूर्वक विचार करके ही चिकित्सा कर्म में प्रवृत्त होना चाहिए। तभी वह यश तथा अर्थ का भागी होगा तथा उत्तम वैद्य की संज्ञा को प्राप्त करेगा। महर्षि चरक ने भी लिखा है :—

हेतौ लिङ्गे प्रशंमने रोगाणामपुनर्भवे।
ज्ञानं चतुर्विधं यस्य सः राजार्हो भिषक्तमः॥

इन्हें भी आज़माइए—

—शकुन्तला लोरा
(पंचम वर्ष)
—मीना सप्रा
(द्वितीय वर्ष)

1. नीम की छाल को तिल तैल में पकाकर गुनगुना कान में डालने से कर्ण स्राव – कान के बहने की बीमारी में लाभ होता है।

2. सफेद फिटकरी 1 तोले को 5 तोले स्वच्छ पानी में उबाल कर ठण्डा होने पर शीशी में रख लें। 2–2 बून्द 3–4 बार आँख में डालने से दुखती आंखें ठीक हो जाती हैं।

3. खाने वाले कपूर को घी में मलकर सूंघने तथा रात में 2 ग्राम कपूर एक पेड़े में बन्द कर रख दें और अगले दिन सूर्योदय से पूर्व खा लेने से सूर्यावर्त (आधाशीशी) में लाभ होता है। पानी न पीएं।

4. बबूल (कीकर) के हरे पत्तों का पानी में बारीक पीस कर टिकिया बनाकर आंखों के ऊपर पट्टी बांध दें और सवेरे खोल दें। दुखती आंख, दर्द और सूजन में लाभ होगा।

5. बबूल के फूल, घी में भुनी हुई अच्छे किस्म की हींग, भुनी हुई हल्दी (चूर्ण) एवं फूला (भुना) हुआ सुहागा (टंकण भस्म) सब बराबर भाग लेकर खूब पीस कर रख लें। बाल रोगों—कफ, अजीर्ण, कास, ज्वर, उदर शूल, अतिसार, निमोनिया आदि में लाभकारी है। 4 मा० कोष्ण जल से लें।

6. बबूल के पत्ते 1 तो०, गोखरू 1 तो०, कलमीशोरा 3 मासे 1 पाव पानी में पीसकर छानकर पीने से बन्द पेशाब खुल कर आता है।

7. बबूल के फूल, छाल, गोंद, पत्ते, कोंपलें सब बराबर भाग लेकर बारीक पीस कर थोड़ी चीनी मिला कर 6–6 मासे प्रातः - सायं दूध के साथ एक मास प्रयोग करने से धातु विकार, स्वप्नदोष तथा ल्यूकोरिया में आशातीत लाभ होता है।

TRACHOMA (ट्रकोमा)

— डॉ० निशिकान्त

Trachoma का अर्थ है खरस्पर्श (खुरदरा)। इस रोग में पलक के अन्दर की ओर श्लेष्मिक-कला में सूक्ष्म-सूक्ष्म सर्शपाकार पीड़िकाओं (follicles) के बनने अथवा इनके फटने पर व्रण बनने पर उनके रोहण होने से खुरदरापन बन जाने के कारण इस रोग को trachoma का नाम दिया गया है। रोग का वर्णन आयुर्वेद के प्राचीन ग्रन्थों में 2000 वर्ष B. C. से प्राप्त होता है। नेपोलियन-war के पश्चात् यह रोग पूर्व से पश्चिम की ओर गया और यूरोपियन देशों में फैल गया।

यह नेत्र-पलकों के अन्दर की ओर होने वाला एक संक्रामक रोग है। ठण्डे और पर्वतीय देश की अपेक्षा रुक्ष, उष्ण देशों में यह अधिक पाया जाता है। गन्दी बस्तियों, पागलखानों, जेलों इत्यादि में जहां का वायुमण्डल स्वच्छ नहीं होता यह रोग शीघ्र फैल जाता है। रोग प्राय: जीर्ण रूप धारण कर लेता है और समय पर चिकित्सा न की जाए तो इससे आंख में कई प्रकार के उपद्रव तथा कभी-कभी दृष्टि-नाश भी हो जाता है।

आयुर्वेद ग्रन्थों में इसका निम्न प्रकार से वर्णन मिलता है :—

स्राविण्य: मण्डुरा गुर्व्यो रक्त सर्षप सन्निभा: ।
पिडिकाश्च रूजावत्य: पोथक्य इति संज्ञिता: ।।
(सुश्रुत, उत्तर तन्त्र - अ० ४)

पोथक्य: पिटिका: श्वेता सर्षपाभा: घना कफात् ।
शोफोपदेह रूक् कण्डु पिच्छिलाश्रु समन्विता: ।।
(अष्टांग हृदय, उत्तर तन्त्र — अ० ७)

इसका वर्णन वर्त्म रोगों में है और इसे एक कफज रोग कहा है। इसमें वर्त्म के अन्दर सर्षपाकार घनपिड़िकाएं बन जाती हैं। नेत्र वर्त्म शोथ-युक्त और भारी होने

के कारण आंख को ढांप सा लेता है, जिससे आंख कुछ छोटी प्रतीत होने लगती है। आंख में कण्डु तथा वेदना होती है, और उसमें से पिच्छिल स्राव होने लगता है।

पाश्चात्य विद्वानों ने इस रोग पर बहुत खोज की है परन्तु फिर भी वे अभी तक इसके लिए किसी विशेष जीवाणु का निश्चित कारण कहने में सफल नहीं हुए हैं। कुछ विद्वान् इसका कारण एक विशेष तृणाणु (Virus) मानते हैं। यह वर्त्म श्लेष्मावरण (Conjunctiva) और कृष्ण भाग के बाह्यस्तर (Epitheliallayer of the Cornea) में रहत हैं। यहां रहते हुए यह वृद्धि करते हैं और इनके झुण्ड (Colonies) से बन जाते हैं। इन्हें (Inclusion bodies) कहा जाता है। इस प्रकार के तृणाणु पोथकी की प्रारम्भिक दशा में शतप्रतिशत रोगियों में मिलते हैं परन्तु इनकी संख्या शीघ्र ही कम होने लगती है और चार मास पश्चात् इनका मिलना कठिन हो जाता है।

नोगूची (Noguchi) नामक विद्वान् ने पोथकी के रोगियों की आंख से होने वाले स्राव में से एक दण्डाकार जीवाणु की खोज की है जिसे उसने पोथकी दण्डाणु (Bacterium Granulosis) नाम दिया है। बहुत अन्वेषण के पश्चात् यह सिद्ध हुआ है कि इस दण्डाणु को भी रोग का निश्चित कारण नहीं कहा जा सकता।

लक्षण :—

पोथकी की प्रारम्भिक दशा में आंख में विशेष कष्ट नहीं प्रतीत होता, परन्तु धीरे-धीरे आंख में कण्डु, जलन और जैसे कुछ धूलि कण आंख में पड़ गये हों, ऐसा रोगी को अनुभव होने लगता है। आंख प्रकाश को सहन नहीं कर सकती और उससे पिच्छिल स्राव होने लगता है। कभी-कभी रोगी की आंख में वेदना भी होने लगती है। वर्त्मश्लेष्मावरण और वर्त्म कोण लाल और शोथ युक्त दिखाई देते हैं। वर्त्मश्लेष्मावरण पर दो प्रकार के परिवर्तन देखने में आते हैं :—

1. वर्त्म श्लेष्मावरण में सूक्ष्म उभारों (Papillae) का बनना—यह लक्षण प्राय: सभी प्रकार के अभिष्यन्द (Conjunctivitis) में देखा जाता है। इसमें श्लेष्मावरण (Conjunctiva) में शोथ के कारण कुछ अभिवृद्धि (Hypertrophy) हो जाती है और श्लेष्मावरण में उभार से (Papillae) बन जाते हैं। रोगी के पलक को उलट कर देखने से श्लेष्मावरण लाल तथा उभरा सा मखमल की भाँति प्रतीत होता है। श्लेष्मिक कला के नीचे से रक्त लेकर परीक्षा करने पर उसमें बहुसंख्य लसीकाणु (Lymphocytes) मिलते हैं।

2. वर्त्म श्लेष्मावरण में (Grannules) सर्षपाकार पिड़िकाएं बनना—यह इस रोग का मुख्य लक्षण कहा जा सकता है। श्लेष्मावरण के ग्रन्थिमय भाग (Adenoid Stroma) में अधिक लसीकाणुओं के संचित होने के कारण लसीका कण (Lymph Follicles) बन जाते हैं। यही श्लेष्मावरण के नीचे से उभरे हुए सर्षपाकर पिड़िकाओं (Grannules) के रूप में दिखाई देते हैं। कभी-कभी तो ये पर्याप्त बड़े हो जाते हैं और इनका व्यास 5 मि०मी० तक हो जाता है। इस प्रकार के अंकुर पहले नीचे के वर्त्म में दिखाई देते हैं परन्तु कुछ ही दिनों पश्चात् यह ऊपर के वर्त्म, नेत्र-पिण्डांकुर (Caruncle) और अर्धचन्द्राकार पुट (Plica Semi Lunaris) पर भी दृष्टिगोचर होने लगते हैं। रचना की दृष्टि से ये अंकुर असीनका पिंड (Adenoids) अथवा अन्त्र में पाये जाने वाले लसीका पिंडों (Payer's Patches) के समान होते हैं। इनके मध्य में केन्द्रीय कोषाणु (Mononuclear Cells) और उनके चारों ओर लसीकाणु (Lymphocytes) पाये जाते हैं। जीर्ण अवस्था में इनमें सौत्रिक तन्तु बनने लग जाते हैं जिससे वर्त्म का कुछ संकोच हो जाता है और ऐसे स्थानों से वर्त्म धारा भीतर की ओर मुड़ जाती है और पक्ष्य कोप (Trichiaris) जैसे लक्षण रोगी में पैदा हो जाते हैं। कभी-कभी नीचे कोमलास्थि (Tarsal Plate) भी विकृत हो जाती है। लक्षणों के अनुसार कई विद्वान रोग को चार अवस्थाओं में बांट लेते हैं:—

प्रथमावस्था :—

इसमें उपरोक्त प्रारम्भिक दशा के लक्षण दृष्टिगोचर होते हैं। प्रातः सो कर उठने पर रोगी के वर्त्म आपस में चिपके होते हैं। कुछ देर तक पढ़ने-लिखने अथवा सूक्ष्म कार्य करने पर आंख में कष्ट प्रतीत होने लगता है। यह अवस्था प्रायः तीन-चार सप्ताह तक रहती है।

दूसरी अवस्था :—

इसमें वर्त्म श्लेष्मावरण पर उपरोक्त दोनों प्रकार के परिवर्तन दिखाई देने लगते हैं। शोथ के कारण वर्त्म भारी और कुछ मोटे हो जाते हैं। किसी-किसी रोगी में शुक्ल कृष्ण सन्धि से सूक्ष्म केशिका जाल (Cornea) कृष्ण भाग जो ऊपर के पलक से ढका रहता है प्रायः इस केशिका-जाल से ढक जाता है। इस भाग की पारदर्शकता भी कम हो जाती है और यह भाग धुंधला सा दिखाई देने लगता है। नीचे की ओर को बढ़ता हुआ कभी-कभी यह पुतली को भी ढक लेता है, जिससे दृष्टि को हानि होती है। रोगी को अक्षि वेदना और प्रकाशासह्यता (Photo Phobia) से कष्ट होता है। केशिका जाल कृष्ण भाग के उपरि स्तर (Bowman's membrane) और कभी-कभी गर्भ

भाग (Substantia Propria) को भी दूषित कर देता है। इसे पैनस (Pannus) कहते हैं। धीरे-धीरे यह अवस्था शांत हो जाती है और लक्षणों की उग्रता कम होने लगती है।

तीसरी अवस्था :—

इसमें रोहण हो जाने के कारण, रोगी को विशेष कष्ट प्रतीत नहीं होता। वर्त्म पर अंकुरों से बने रोहण स्थानों को देखने पर वे पाण्डुर या धूसर वर्ण के दिखाई देते हैं। पैनस की अवस्था यदि ठीक न हुई तो उससे सव्रण अथवा अव्रण शुक्ल (Opacities) की अवस्था बन जाती है और किसी-किसी रोगी में रोग के कारण दुर्बल होने से कृष्ण भाग का कुछ भाग बाहर को उभर सा आता है। इस अवस्था को (Keratectasia) कहते हैं।

चतुर्थावस्था :—

वैसे तो इस अवस्था में रोग शांत सा हो जाता है। वर्त्मश्लेष्मावरण और कृष्ण भाग भी स्वस्थ प्रतीत तोते हैं परन्तु रोहण धातु के बनने के कारण आंख में निम्नलिखित कई प्रकार के उपद्रव पैदा हो जाते हैं :—

1. (Entropion) वर्त्म संकोच के कारण वर्त्म धारा भीतर को मुड़ जाती है और इसके परिणाम स्वरूप पक्ष्य कोष (Trichiasis) की दशा बन जाती है।

2. (Ectropion) — किसी-किसी रोगी में नीचे के वर्त्म को धारा शोथादि के कारण बाहर को घूम जाती है।

3. वर्त्म धारा के अन्दर को अथवा बाहर को मुड़ जाने के कारण अश्रु-द्वार (Punctum-Lacrimale) के अक्षि गोलक से परे हट जाने से आंख से स्राव होता रहता है।

4. कभी-कभी अक्षि वर्त्म और अक्षि गोलक के बीच सौत्रिक तन्तु बन्धन सा बन जाता है जिससे रोगी अक्षि गोलक को इधर-उधर घुमाने में कष्ट अनुभव करने लगता है। इस अवस्था को वर्त्म गोलक-संलग्नता (Symble pharon) कहा जाता है। कभी-कभी रोगी को एक वस्तु के स्थान पर दो-दो भी दीखने लगते हैं। इसे (Diplopia) कहा जाता है।

5. शुक्लता (Corneal Opacities) भी किसी-किसो रोगो में बन जाती है।

6. यदि रोग शान्त न होकर कृष्ण भाग (Cornea) को बहुत दुर्बल कर दे तो इससे ग्रजकाजात (Staphyloma) की अवस्था बन जाती है।

7. रोग के बहुत जीर्ण होने पर शुष्काक्षिपाक (Xerosis) तथा अक्षि नाश तक भी हो सकता है।

विभेदक निदान :—

पोथकी की आरम्भिक दशा में रोग निदान कुछ कठिन होता है। इसका सामान्य अभिष्यंद से भेद करना पड़ता है। लक्षणों में साम्य होते हुए भी अभिष्यंद में स्राव अधिक गाढ़ा होता है। स्राव की परीक्षा से इसमें पोथकी तृणाणु (Inclusion Bodies) की विद्यमानता रोग निर्णय में सहायक होती है।

अंकुर बनने के पश्चात् इसका दो रोगों से भेद करना पड़ता है :—

1. कफज अभिष्यंद (Spring Catarrh)—यह रोग शैशव और बाल्यावस्था में अधिक होता है। वसन्त ऋतु में बार-बार होने की इस रोग में विशेष प्रवृत्ति होती है। अंकुर चपटे और सड़क पर लगाए गए पत्थरों के समान व्यवस्थित क्रम में प्रतीत होते हैं। इन पर श्वेत वर्ण का दूधिया सा स्राव दिखाई पड़ता है। स्राव में बहुसंख्य (Eosionophil Leucocytes) पाए जाते हैं। इन लक्षणों से हम कफज अभिष्यंद का अनुमान करते हैं।

2. सामान्य अभिष्यंद (Follicular Conjunctivitis)— इसमें नीचे के वर्त्म पर सूक्ष्म, लगभग 2 मि० मी० व्यास के और प्रायः समानान्तर रेखाओं में, रक्ताभ बहुसंख्य अंकुर दिखाई देते हैं तथा पोथकी में पाए जाने वाले अन्य उपद्रव नहीं होते, इस रोग से पोथकी को भिन्न करने के लिए अंकुरों का छोटा होना, केवल नीचे के वर्त्म पर होना, समानान्तर रेखाओं में होना तथा अन्य उपद्रवों का अभाव होना सहायक होते हैं।

चिकित्सा :—

आरम्भिक दशा में रोगी को षडंग गुग्गुलु क्वाथ पिलाएं आंख में फुल्लिका द्रव दिन में दो-तीन बार डालें। रात को सोते समय आंख में रसाञ्जन मधु योग को लगाएं इससे कुछ ही दिनों में रोगी को अवश्य लाभ होता है।

पाश्चात्य विद्वान् इस अवस्था में किसी भी घुलनशील सल्फा ड्रग को 0·5 से 1 gm.

की मात्रा में चार बार 10—15 दिन तक निरन्तर प्रयोग करवाते हैं। आंख में डालने के लिए भी टैरामाईसिन मरहम या ड्रापस आदि का व्यवहार करते हैं। इनसे भी लाभ होता है परन्तु सल्फाड्रग्ज के इतने लम्बे प्रयोग से रोगी में कुछ अन्य उपद्रव होने की अशंका रहती है।

रोग के जीर्ण होने पर अष्टांग हृदय में कही गई पिल्ल रोग की चिकित्सा सर्वश्रेष्ठ है। रोगी को पुराने घृत या त्रिफला घृत से स्नेहन कराएं। फिर उसे वमन, विरेचनादि द्वारा शुद्ध करें। तत्पश्चात् रोगी की औपनासिकी, ललाटिकी अथवा अपांगिकी शिराओं में से जलौथादि द्वारा रक्तमोक्षण करें। फिर किसी अच्छे दिन रोगी को लिटा कर उसके वर्त्म को उलट कर वामअंगुष्ठ और अंगुली से पकड़ कर सुखोदक से हल्का-हल्का स्वेदन करें। तत्पश्चात् वर्त्म को शेफाली पत्रादि द्वारा घर्षण करते हुए निर्लेखन करें। जब रक्त निकलना बन्द हो जाए तो इस पर मनःशिला, कासीस, त्रिकटु और रसाञ्जन के सूक्ष्म चूर्ण को मधु में मिला कर प्रतिसारण करें। फिर उसे ऊष्णोदक से धोकर घृत से सेक करें। वेदना के कुछ शान्त हो जाने पर आंख पर पट्टी बांध दें। फिर उसका व्रणवत उपचार करें। यदि कुछ अंकुर बहुत कठोर और उन्नत हों तो उन्हें व्रीहिमुख यन्त्र से भेदन करें तथा उनका निष्पीड़न कर दें शेष सब पूर्वोक्त उपचार करें। रोगी को षडांग गुग्लु क्वाथ, त्रिफला घृत मिला कर निरन्तर पिलाने को दिन में दो बार देते रहें। इस उपक्रम से रोगी को अवश्य लाभ होता है और पोथकीजन्य कोई उपद्रव भी पैदा नहीं होता।

पाश्चात्य दृष्टिकोण से पोथकी की चिकित्सा के लिए निम्न 3 बातों को ओर विशेष ध्यान देना उचित होता है :—

1. संक्रमण को नष्ट करने के लिए सल्फा ड्रग्ज़ और ऐन्टी बायोटिक औषधियों का स्थानिक तथा मौखिक रूप से कुछ काल तक प्रयोग करना चाहिए।

2. जैसे-जैसे अंकुर बनते जाएं उन्हें फोड़ देना चाहिए, जिससे उनके बड़े होकर फूटने से बड़ा व्रण न बन सके। इसके लिए रोलर फोर्सेप्स, जिसे (Expression Forceps) भी कहते हैं द्वारा अंकुरों को दबाकर नष्ट किया जाता है। कई बार घर्षण यन्त्र (Rasp) द्वारा वर्त्म का लेखन किया जाता है। यदि अंकुरों द्वारा अत्यधिक विकृति के कारण कोमलास्थि (Torsal plate) भी विकृत हो जाए तो शल्यकर्म के द्वारा उसे भी निकाल दिया जाता है।

3. ग्राही औषध प्रयोग (Astringents)— तुत्थ (Copper Sulphate), रजत नत्रित (Silver Nitrate) आदि औषधियों का घर्षण किया जाता है और तत्पश्चात् उसे लवणोदक अथवा बोरिक लोशन से धो दिया जाता है। यह प्रयोग बहुत कष्टदायक है अतः आजकल इनका प्रयोग नहीं किया जाता।

अक्षि रोगों में कुछ परीक्षित प्रयोग

1. षडंग गुग्गुलु क्वाथ :—

विभीतक शिवाधात्रीपटोलारिष्ट वासकैः।
क्वाथ गुग्गुलुना पेयः शोथ शूलाक्षिपाकनुत् ॥
पिल्ल सव्रणं शुक्रं रागादीश्चापि नाशयेत् ॥

2. फुल्किा द्रव :—

मिश्री, स्फटिका और सैन्धव तीनों समभाग लेकर चूर्ण बना कर रखें। एक बोतल अर्क गुलाब (तीन पाव) में 2 तोले उपरोक्त चर्ण डाल कर 24 घंटे पड़ा रहने दें। फिर ऊपर से निथार कर शीशी में भर लें। इसको नेत्र बिन्दु के रूप में डालने से यह सामान्य अभिष्यंद और पोथकी की आरम्भिक अवस्था में लाभ करता है।

3. रसाञ्जन मधु योग :—

पाव भर सूखे आमले लेकर उनका क्वाथ बनायें। पाव भर इस क्वाथ में 2½ तोले शुद्ध रसाञ्जन डालकर घोल दें। इसे आग पर रखकर गाढ़ा करें, गाढ़ा हो जाने पर इसमें 2 तोले शुद्ध गी घृत मिला दें, जब और भी गाढ़ा हो जाए तो आग से उतार कर ठण्डा होने पर 2 तोले शुद्ध मधु मिला दें।

यह नेत्रों के लिए परम उपयोगी औषध है और अभिष्यंद, पोथकी, तिमिर आदि रोगों में लाभप्रद है।
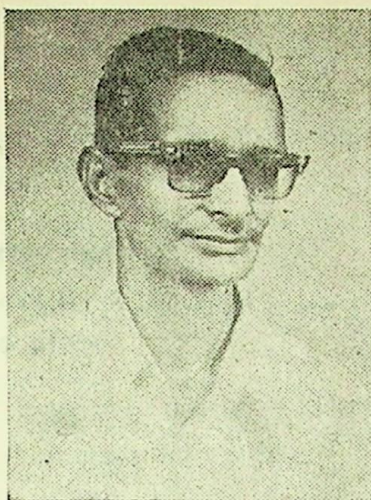
जाओ, तुमको विजय मिलेगी—

—डा० चन्द्र दत्त कौशिक
साहित्य सरस्वती,
एम० ए०, बी० ए० एम० एस०
प्रोफेसर, महिला आयुर्वेदिक कालेज,
खानपुर कलाँ (सोनीपत)

●

हवा की दशा देख कर
अपनी नौका को खेना,
आंधी-तूफानों में पड़कर
अपनी हिम्मत न खोना !

लक्ष्य तुम्हारा दुस्तर है—
निराश नहीं किंचित होना,
कठिन घड़ी के घेरे में—
आंसू भर कर न रोना !

धीरज रखना, आगे बढ़ना
सुन्दर सपना न खोना,
पूरा करने की खातिर—
ध्येय पर नौछावर होना !

जाओ, तुमको विजय मिलेगी
पग - पग उत्साहित होना,
सावधान होकर बढ़ना तुम
लक्ष्य नहीं अपना खोना !

श्वेत प्रदर की चिकित्सा

—नीलम त्यागी
B. A. M. S. (II Prof.)
तृतीय वर्ष

प्राकृतिक कारणों से योनिमार्ग द्वारा होने वाले श्वेत स्राव (ल्यूकोरिया) में प्रायः आहार-विहार सम्बन्धी नियमन एवं विश्राम से लाभ हो जाता है, किन्तु वैकारिक श्वेत स्राव में रोग के मूल कारण को खोजकर उसे दूर करना चाहिए और साथ ही मलावरोध (विबन्ध) को दूर करने तथा सामान्य स्वास्थ्य को बढ़ाने पर विशेष ध्यान देना चाहिए। एतदर्थ शुद्ध खुली हवा में टलहना, जीवनीय तत्वों एवं खनिज लवण बहुल आहार का सेवन, शारीरिक स्वच्छता, मनोविनोद, श्रम एवं रक्तवर्द्धक पदार्थों का सेवन तथा संयम एवं पवित्रता अत्यन्त लाभकारी हैं। इस रोग में चिकित्सक का परामर्श लेकर आवश्यकतानुसार निम्न योग प्रयोग में हितकारी हैं :—

1. प्रदरान्तक रस—मात्रा 1-2 रत्ती, मधु या बकरी के दूध से।

2. प्रदरान्तक लौह—मात्रा 1-2 रत्ती, गर्म दूध से।

3. प्रदरारि लौह—मात्रा 1-2 माशा, कोष्ण (गुनगुने) जल से।

4. कुक्कुटाण्डत्वक् भस्म—मात्रा 2-4 रत्ती, मधु या मक्खन से।

5. त्रिवंग भस्म—मात्रा 1-2 रत्ती, मधु या मक्खन से।

6. अशोकारिष्ट / अशोकार्डियल—मात्रा 1-2 तो० समान जल मिला कर भोजन के बाद।

7. फल घृत या अशोक घृत—मात्रा ½-1 तो०, गोदुग्ध, शर्करा से।

8. सुपारी पाक—मात्रा 3-6 माशा, गोदुग्ध से।

9. चन्द्रप्रभा वटी—मात्रा 1-2 गोली, गोदुग्ध से।

10. पुष्यानुग चूर्ण—मात्रा 2-3 माशा, जल या पत्रांगासव 1 तो० से।

11. दार्व्यादि क्वाथ— मात्रा 1-2 तो०।

12. आंवले का स्वरस, ताजो मूली का रस एवं शतावर का रस 1-1 तो० शुद्ध शहद में मिलाकर लेना हितकर है। मुलहटी चूर्ण 2 तो० में थोड़ी खांड मिलाकर चावल के धोवन से प्रातः सायं सेवन करें। पीपल की गोंद 6 माशे गो दुग्ध से प्रातः सायं सप्ताह पर्यन्त सेवन करने से लाभानुभव होगा। अशोक की छाल 2 तो० पानी में पकाकर पीयें। कच्चा सुहागा या बोरिक एसिड गुनगुने पानी में मिलाकर सप्ताह तक डूश (Douche) लेना चाहिए अथवा झरबेरी मूल की छाल के क्वाथ में शुभ्रा (फिटकरी) अथवा टंकण (सुहागा) द्रव (5 तो० जल में 5 रत्ती) की उत्तरवस्ति (Douche) या योनिप्रक्षालन करना चाहिए। सामान्य लवण विलयन, $KMnO_4$ (लाल दवा) का विलयन (20 औंस जल में 2 ग्रेन), डिटोल विलयन (5%), लाइसोल विलियन (1 : 500) में से कोई भी एतदर्थ प्रयोग में लाभकारी हैं। बबूल क्वाथ या स्फिटिका (फिटकरी) द्रव में भिगोकर शुष्क की हुई वर्त्ति योनि में रखें। S. V. C. (M & B) की गोली योनि प्रक्षालन के बाद रात्रि में योनि में धारण करनी लाभप्रद है। Harmoton T, Lukol, Fersolate, Osteocalcium B_{12} इत्यादि की गोली, Pencillin Procain G 4 lac., Terramycin 2 ml., Aolan या Lactolan 2-10 c.c. I.M सूचीवेध आदि चिकित्सक की सम्मति पर प्रयोज्य हैं।

Senile Cataract

—कु० विजय
(फाइनल)

यह वृद्धावस्था में होने वाला रोग है। इसमें दृष्टिमणि मोती की भांति श्वेत एवं opaque हो जाता है। सामान्यतया रोग 50—55 वर्ष की आयु के पश्चात् आरम्भ होता है परन्तु कभी-कभी पैतृक प्रवृत्ति अथवा अन्य कारणों से यह 40—45 वर्ष की आयु में भी देखा जाता है। यह रोग प्रारम्भ में प्राय: एक आंख से उत्पन्न होता है। परन्तु कई बार यह एक साथ दोनों आंखों में उत्पन्न होता है। ठण्डे देशों की अपेक्षा गर्म देशों में यह रोग अधिक होता है। भारत में पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, गुजरात और पश्चिमी उत्तर प्रदेश में यह रोग बहुत होता है। इसके उक्त general feature निम्न प्रकार से भी describe किए जा सकते हैं। सामान्यतः 50—55 वर्ष की आयु के पश्चात् आरम्भ होता है। यह पुरुष एवं स्त्री दोनों में पाया जाता है। यह प्राय: bilateral होता है परन्तु पहले एक आंख में होता है।

सम्प्राप्ति :—

पारदर्शक दृष्टिमणि का 35% भाग प्रोटीन से बना होता है। इसमें से अधिकांश प्रोटीन पानी में घुलनशील होती है तथा जैसे-जैसे आयु बढ़ती जाती है घुलनशील प्रोटीन की मात्रा कम होने लगती है और इसके स्थान पर अविलेय प्रोटीन की मात्रा उत्तरोत्तर बढ़ने लगती है। स्वस्थदृष्टि मणि में परतों का निर्माण अधिक और विनाश कम होता है। इसीलिए स्वस्थ दृष्टिमणि की क्रिया कुछ क्षारीय होती है। वृद्धावस्था में होने वाले Cataract की दशा में lens fibres का निर्माण कम होता है और विनाश अधिक होता है। ऐसी अवस्था में lens की प्रतिक्रिया अम्लीय हो जाती है। lens में ऐसे पदार्थ बनने लगते हैं जिनसे पहले तो Protein द्रवित होती जाती है तत्पश्चात् वह द्रवित Protein जमने लगती है। उससे अपारदर्शकता बनने लगती है। Cataract की अवस्था में lens में Potassium आदि की मात्रा कम होने लगती है और अनेक स्थान

पर Sodium आदि मात्रा में बढ़ने लगती है जिनके कारण भी Protein जमने लगती है।

Aetiology :—Senile Cataract का मुख्य कारण lens की layers में अथवा प्रोटीन में किसी प्रकार का degeneration है इसलिए इसको degenerative cataract भी कहते हैं। बहुत खोज करने पर भी degeneration का निश्चित कारण अभी तक ज्ञात नहीं हो सका। सामान्यतः निम्न कारणों को रोग की उत्पत्ति में मुख्य कारण कहा जाता है।

1. वृद्धावस्था :—

इस अवस्था को किसी रोग का निश्चित कारण नहीं माना जा सकता परन्तु फिर भी इस आयु में lens कठोर हो जाता है तथा रोगोत्पत्ति में सहायक अवश्य हो सकता है।

2. एक्स रे एवं उर्जा शक्ति का प्रभाव :—

गर्मी के दिनों में तेज धूप में ताप तथा infra red rays की मात्रा अधिक होती है। इससे Ant chamber में पाये जाने वाले परिवर्तन आ जाते हैं। जिससे lens का nutrition ठीक प्रकार से नहीं हो सकत है और अपारदर्शकता आने लगती है।

3. Ciliary Epithelium में परिवर्तन :—

कई बारी Ciliary processes के उपर पाये जाने वाले epithelium में इस प्रकार के परिवर्तन आ जाते हैं उससे Aqueous में अप्राकृतिक एवं हानिकारक पदार्थ उत्पन्न होते हैं तथा lens के पोषण में बाधा डालते हैं।

4. दृष्टिमणि के श्लेष्मावरणीय विकार Alterations in Sub Capsular epithelium :—

कुछ लोगों के अनुसार बुढ़ापे में Sub capsular epithelium में से भी unnatural substances Aqueous से lens में आने लगते हैं। जिससे Lens Capsule की विकृति होने पर lens के बाहर एवं भीतर प्रायः एक जैसा माध्यम बन जाता है। इसको Cataract की उत्पत्ति में एक प्रमुख कारण कहा जा सकता है।

SYMPTOMS

Cataract में प्राय: निम्न लक्षण पाये जाते हैं।

1. Diminish Acuteness of Vision :—यह opacity के स्थान तथा प्रकाश पर निर्भर करता है। यदि अपारदर्शकता lens के मध्य (central opacity) और विस्तृत हो तो दृष्टि का नाश होता है इसके विपरीत सायंकाल, प्रातः या कम प्रकाश में pupil के फैल जाने पर रोगी को कुछ अच्छा दिखाई देता है।

2. Light minimum और time of adaptation बढ़ जाते हैं।

3. Diphopia & Polypia :— lens में विकार आ जाने पर इस lens से प्रकाश की किरणें ठीक प्रकार से reflected नहीं होती और उनकी दिशा में विकृति हो जाती है। (Irregular reflection) होता है इससे रोगी को एक वस्तु के स्थान पर दो दो या इससे अधिक रूप दीखते हैं।

4. Scotomatous vision :— कभी कभी रोगी को field of vision में काले काले धब्बे दिखाई देते हैं। ये धब्बे कभी-कभी स्थिर और कभी-कभी इधर-उधर उड़ते प्रतीत होते हैं।

5. Myopia :— किसी किसी रोगी में निकट दृष्टि के लक्षण प्रकट होने लगते हैं। रोगी को पढ़ने-लिखने के लिए यदि + glasses लगते हैं तो उसे अपना नम्बर कम करना पड़ता है और यदि पहले से ही नं० कम हो तो वह बिना चश्मे के पढ़ सकता है। परन्तु रोग बढ़ जाने पर दृष्टि बहुत ही मन्द हो जाती है। नेत्र के सामने दिखाई देने वाले धब्बे भी अब नजर नहीं आते। Diplopia & Pyolopia भी अब नजर नहीं आते। धीरे-धीरे आंख से दीखना बन्द हो जाता है। केवल अन्धकार एवं प्रकाश का बोध रह जाता है।

SIGNS

Clinically Senile Cataract को दो बड़े groups में बाँटा गया है।

1. Nuclear (Hard Cataract)
2. Cortical (Soft or Cuneform cataract)

1. Nucleus Cataract :— इस प्रकार के cataract में fibres transparent हो जाते हैं तथा lens कुछ मोटा हो जाता है। यह 40 वर्ष में ही शुरू हो जाता है। Nucleus cloudy हो जाता है व यह धीरे-धीरे cortex की तरफ बढ़ती जाती है। lens में amino acids से उत्पन्न melanin के इकट्ठा होने पर भूरा, लाल या काला (Black cataract) रंग उत्पन्न हो जाता है। यह प्रकार mature

होने में बहुत समय लेता है। maturity के समय (scleresis) कठोरता capsule तक पहुँच जाती है व lens का भीतरी भाग अब केवल nucleus से बना होता है।

2. Cortical Cataract :— विकृत आंख में किसी प्रकार की लालिमा स्त्रावादि inflamation के लक्षण senile cataract में नहीं पाये जाते हैं।

Clinical features को चार भागों में विभक्त कर दिया गया है।

1. Incipient Stage :— इस अवस्था में lens में परिधि की ओर से लगे ओर की भांति रेखाओं के रूप में अपारदर्शकता आरम्भ होती है। ये रेखायें periphery की ओर से मोटी एवं मध्य की ओर से पतली होती हैं। oblique examination से यह अपारदर्शकता काले भाग में पाण्डु अथवा धूसर-वर्ण की दीखती है (sclera पर प्रकाश पड़ने के कारण) परन्तु opthalmoscope से परीक्षा करने पर काले धब्बे के रूप में प्रतीत होगी (Retina पर प्रकाश पड़ने से) इस प्रकार से lens का मध्य भाग प्रायः transparent रहता है अतः रोगी की दृष्टि में कोई विशेष हानि नहीं होती। इसके विपरीत कुछ रोगियों में lens का मध्य का भाग पहले ही अपारदर्शक होने लगता है। (central type) ऐसे रोगी में आरम्भ होते ही दृष्टि में बाधा उत्पन्न होने लगती है। कभी-कभी अपारदर्शकता lens के किसी भी भाग में छोटे-छोटे बिन्दुओं के रूप में अथवा हल्के से बादल की भांति शुरू हो जाती है। ऐसे रोगी को हर वस्तुएं वस्त्र से ढकी सी दीखती हैं या धुन्ध में अस्पष्ट सा दिखाई देता है।

2. Second stage or Immature stage :—

इस अवस्था में lens का cortical area में कुछ तरल संचित होने के कारण वह कुछ फूल जाता है। जिसमें ant. chamber कुछ कम गहरी प्रतीत होने लगती है। क्योंकि lens की सूजन के कारण iris पर आगे की ओर दबाव पड़ता है। lens का cortex अभी तक अपारदर्शक होता है इसलिए आंख पर oblique examination द्वारा Iris की छाया lens पर पड़ती मालूम होती है और यही इस अपक्वावस्था की सूचक होती है प्रथमावस्था के सभी लक्षणों के साथ-साथ myopia हो जाता है।

3. Mature or third stage :—

इस अवस्था के आरम्भ होने पर lens अपारदर्शक हो जाता है व रोगी को प्रायः दीखना बन्द हो जाता है। सामने से आते व्यक्ति की केवल छाया नजर आती है। कुछ समय के बाद आंखों के सामने हाथ चलाने से उसे कुछ अस्पष्ट सी झलक प्रतीत होती है अथवा उसे प्रकाश का सामान्य बोध प्रतीत होता है।

4. Hyper Mature :—Mature stage में operation के द्वारा lens को निकाल देना ही उचित होता है। यदि ऐसा न किया जाये तो hyper mature stage आरम्भ हो जाती है। इस अवस्था में दो बातें हो सकती हैं :—

1. lens के भीतर तरल और भी सूखने लगता है कि जिसमें lens biconvex न रहकर चपटा हो जाता है। रंग कुछ पीताभ सा हो जाता है। lens capsule का ant. polar region कुछ मोटा हो जाता है और कभी कभी capsule के ant. pole पर अपारदर्शकता आ जाती है। किसी-किसी में lens suspensory ligament च्युत हो जाता है और बन्धन रहित होकर गतिशील हो जाता है।

2. उपरोक्त शोषण क्रिया न होकर lens का बाहरी भाग द्रवीभूत होकर पतला हो जाता है। इस अवस्था को morgagnian cataract कहते हैं। lens का मध्य भाग कठोर एवं भारी होने के कारण तरल में नीचे की ओर बैठ जाता है।

TREATMENT :— अपक्वावस्था में तो निम्न कार्य किए जा सकते हैं।

(a) यदि अपारदर्शकता मध्य में हो तो काले चश्मे का प्रयोग देखने के लिए करना चाहिए। जो रोगी पढ़ने का इच्छुक हो तो वह magnifying lens का प्रयोग कर सकता है। रात के समय धीमी रोशनी में ही रहना चाहिए।

(b) यदि अपारदर्शकता चारों ओर हो तो तेज रोशनी का प्रयोग करना चाहिए।

(c) प्रथम अवस्था में पुतली को अच्छी तरह विस्फारित करके आंख के पिछले भाग का निरीक्षण करना चाहिए और उसकी रिपोर्ट आगे के लिए सम्भाल कर रखनी चाहिए। पक्वावस्था में lens को बाहर ही निकाल देना चाहिए। इसकी यही एकमात्र चिकित्सा है।

इसके लिए अभी कोई सफल औषधि नहीं मिल पाई है। प्रारम्भिक अवस्था में महात्रिफलाघृत, सप्तामृत लौह, पथ्यादि क्वाथ आदि को खिलाने, रसाञ्जन मधुयोग, मुक्तादि महाजनादि को आंख में निरन्तर लगाते रहने से कुछ न कुछ लाभ अवश्य होता है। पाश्चात्य विद्वान Nucleus cataract की अवस्था में $\frac{1}{4}$ to 1 grain तक Atropin को 1 औंस जल में घोल कर एक एक बून्द तीन-तीन दिन के अन्तर में आंख में डालते रहते हैं। इस Lotion को प्रयोग करते समय Intra oculer tension को अवश्य देख लेना चाहिए।

प्रसवोत्तर रक्तस्राव तथा उसकी चिकित्सा

—शकुन्तला लोरा
B. A. M. S. (Final)

इसे जन्मोत्तर रक्तस्राव भी कहते हैं। अंग्रेजी में इसे Post Partum Haemorrhage कहते हैं।

बच्चा निकलने के पश्चात् अपरा निष्कासन (पतन) के पूर्व की तृतीयावस्था में होने वाले अतिरिक्त रक्तस्राव को प्रसवोत्तर रक्तस्राव कहते हैं। यह प्राय: प्रसव के पश्चात् प्रथम 9 घण्टों के अन्दर मिलता है।

प्रसव के 24 घन्टे के अन्तर्गत 500 मिलिलिटर से अधिक रक्तस्राव प्राथमिक रक्तस्राव कहलाता है। यदि प्रसव के 24 घन्टे पश्चात् हो तो द्वितीयक प्रसवोत्तर रक्तस्राव (Secondary Post Partum Haemorrhage) कहलाता है।

सामान्य रूप से 20 औंस तक का रक्त नाश स्वाभाविक माना जाता है। परन्तु इससे अधिक रक्त का निकलना विकार का सूचक है। जो रक्त प्रसव के 6 घन्टे के बाद भी चलता रहता है उसे प्रासूतिक रक्तस्राव (Puerperal Haemorrhage) कहा जाता है।

प्रसवोत्तर रक्तस्राव को दो बड़े विभागों में बांटा जा सकता है:—

1. अपरास्थल से रक्तस्राव का होना।
2. जननमार्ग अभिघात जनित रक्तस्राव।

इसमें अपरास्थिति अधिक मिलता है। इसकी उत्पत्ति गर्भाशय के संकोच तथा प्रसार की हीनबलता के कारण होती है। अपरा पातन के पश्चात् भी रक्तस्राव का कारण गर्भाशय के आकुंचनी का अभाव होता है।

कारण :—

दो प्रकार के हैं—

1. सहायक कारण 2. उतेजक कारण

1. सहायक कारण— बहु प्रसवा का होना, प्रसूता की दुर्बलता, अधिक समय तक गर्भाश्य का आध्यमान युक्त (Distension) बने रहना, गर्भाश्य के तन्त्वर्बुद, प्रसक प्रास रक्तस्राव, सांकुचित श्रेणि का होना Primary uterine inertia, क्लोरोफार्म का देर तक सुंघाये रखना, निन्द्रादायक औषधियों का प्रयोग, खून के जमने की कमी। ये सभी इस रोग के सहायक कारण माने जाते हैं।

2. उत्तेजक कारण— औपद्रविक गर्भकोष अपरासंग की स्थिति में शीघ्र तथा कृत्रिम प्रसव कराने से अपरा (Placenta) का अपूर्ण अथवा पूर्ण वियोजन पर गर्भाश्य से बाहर न आना अपरा के अंशों का गर्भाश्य के अन्दर शेष रह जाना तथा प्रसव की तृतीयावस्था में समुचित चिकित्सा न करने से इस रोग की उत्पत्ति होती है।

लक्षण (Symptoms) :—

इस रोग में प्राय: वे सभी लक्षण उपस्थित रहते हैं जो रक्स्राव के होते हैं। रोग की तृतीयावस्था में त्वचा का रंग पीला मोम के समान हो जाता है। रोगिणी को अधिक प्यास लगती है। ओष्ठ काले पड़ जाते हैं। आंखें नीचे को धंसी हुई और आंख का श्वेत मण्डल रक्तहीन दिखाई देने लगता है। रोगिणी की नाड़ी तीव्र हो जाती है। साथ ही कम तनावयुक्त एवं अल्प भरी हुई प्रतीत होती है। रक्तचाप (B. P.) कम हो जाता है। रोग की तीव्र अवस्था में बेचैनी अधिक रहती है। रोगिणी का श्वसन गम्भीर तथा परिश्रम के साथ आता है। रोगिणी की सांस फूलती है। रोगिणी की आंशिक रूप से कुछ समय के लिए दृष्टिनाश हो जाती है जो प्राय: 24 घन्टे के पश्चात् स्वयंमेव ठीक हो जाता है।

निदान (Diagnose) :—

रक्तस्राव को देख कर यह निर्णय करना चाहिए कि रक्त अपरास्थल (Placental site) से आ रहा है अथवा अभिघात के कारण गर्भाश्य की हीनबलता के फलस्वरूप गर्भाश्य गुहा (uterine cavity) में रक्तस्राव इकट्ठा हो रहा है प्राय: बाहर से कुछ स्पष्ट प्रतीत नहीं होता गर्भाश्य आध्यमान की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए।

रोग का परिणाम :—

रोग का परिणाम प्रायः रक्तस्राव की मात्रा पर निर्भर करता है। यदि रोगिणी पूर्व से ही Anaemic है ऐसी रोगिणी जिसको प्रसव से पहले ही रक्तस्राव (प्रसव पूर्ण रक्तक्षाव) हो चुका है उसमें अल्प मात्रा में प्रसवोत्तर रक्तस्राव गम्भीर अवस्था उत्पन्न कर सकता है।

चिकित्सा (Treatment) :—

इसकी चिकित्सा दो रूपों में की जाती है।

1. प्रतिबन्धक चिकित्सा (Prophylactic) :—

इस रोग की चिकित्सा में यह चिकित्सा अपना प्रमुख स्थान रखती है। गर्भिणी स्त्री की पूर्ण परीक्षा करते रहना चाहिए। गर्भावस्था में रक्ताल्पता (Anaemea) की उचित चिकित्सा करनी चाहिए। उसके रक्त में Hb की मात्रा देखनी चाहिए। यदि रक्तस्कन्दन अथवा स्राव काल का कोई विपर्यय दिखाई पड़े तो कैल्शियम लेक्टेट 30 ग्रेन की मात्रा में दिन में एक बार एक-एक सप्ताह का अन्तर देकर पूरे गर्भाकाल तक देना चाहिए। साथ ही गर्भावस्था के अन्तिम 3 मासों में Vitamin K का प्रयोग कराते रहना चाहिए तथा रोगिणी का प्रसव चिकित्सालय में कराना चाहिए। Ist stage में शामक औषधियों Sadative medicine का प्रयोग लाभकारी है। 2nd stage में देर होने पर शस्त्र चिकित्स का सहयोग लेना चाहिए।

7·25 mg. की मात्रा में Methergine का Injection I/v देना चाहिए। इससे 5 मिनट के अन्दर अपरा बाहर निकल आती है। यदि किसी कारण से I/v Injection न दिया जा सके तो अर्गोमेट्रिन का Inj. I/m दे देना चाहिए। यदि Placenta निकलने के बाद भी रक्तस्राव होता रहे तो अर्गोमेट्रिन 0·22 mg. की मात्रा I/v अथवा I/m. दे देना चाहिए। इस चिकित्सा क्रम से गर्भास्य सिकुड़ जाता है और रक्तस्राव बन्द हो जाता है। यमल सगर्भता की उपस्थिति में अर्गोमेट्रिन का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

चिकित्सा 2 उद्देश्यों को ध्यान में रख की जाती है।—

1. रक्तस्राव को बन्द करना।
2. परिसंचरित रक्त आयतन को पुनः सामान्य स्तर पर लाना।

अपरापातन के पूर्व रक्तस्राव की चिकित्सा

रोगिणी को पीठ के बल उत्तान सुला दें। तत्पश्चात् चिकित्सिक अपने बाएं

हाथ को उदर पर रखे। उसमें गर्भास्य को तब तक रगड़ते रहें जब तक वह कड़ा न हो जावे। तत्पशत् पुनः गर्भास्य मुख को पकड़ कर उसे दबाये और निचोड़ कर अपरा को निकाल लें। इस विधि को क्रीडि की विधि कहते हैं। यह क्रिया हाथ से ही करनी चाहिए।

अपरापातन के पश्चात् चिकित्सा

प्राय: अपरापातन से रक्तस्राव बन्द हो जाता है। यदि अपरा निकलने के पश्चात् भी रक्तस्राव जारी रहे तो गर्भास्य को पकड़ कर उसे निचोड़ दिया जावे ताकि उसमें एकत्रित रक्त बाहर निकल जावे। तत्पश्चात् पिटोसन 5 यूनिट की मात्रा में I/m दें अथवा अर्गोमेट्रिन 5 mg. की मात्रा I/m दें। प्रायः उपर्युक्त चिकित्सा के अवलम्बन से ही रक्तस्राव बन्द हो जाता है। रक्तस्राव बन्द होने पर गर्म जल अथवा लरिसोल के घोल से उतरबस्ति दें।

प्रसवोत्तर रक्तस्राव की साधारण चिकित्सा

रोगिणी को शैया पर पूर्ण विश्राम दें। Extract Aurgut liquid 10 बून्द की मात्रा में 1 औंस पानी मिलाकर प्रति आधा घन्टे पर देते रहें अथवा Ergaseal Cap. दिन में दो तीन बार दें।

Tincher Iodine को पांच गुने पानी में मिलाकर डूश करें। साथ में Aurbolin Tab. दिन में 2, 3 खिलावें।

Osto-calcium + Methergin Tab. की एक-एक Tab. अवस्थानुसार दिन में चार बार सेवन करावें। इनसे पर्याप्त लाभ होता है।

रक्तस्राव के परिणाम स्वरूप होने वाले हृदयासाव को चिकित्सा

रोगिणी को ऐसी अवस्था में पूर्ण विश्राम देकर गर्म कम्बलों में ढक देना चाहिए। आवश्यकतानुसार उसके आस-पास गर्म पानी की बोतलें रख कर उसे गर्म रखें। ऐसी अवस्था में O_2 का सुंघाना भी लाभकारी होता है। रोगिणी को कुछ नीचा करके सुलाया जावे औषध चिकित्सा के अन्तर्गत रोगिणी को जितना भी शीघ्र हो सके blood I/v द्वारा दें। यदि blood उपलब्ध न हो सके तो गुदा मार्ग से glucose तथा saline water I/v द्वारा देना चाहिए।

Glaucoma (अधिमन्थ)

—ज्योत्सना भार्गव
B.A.M.S. V Yr.

नेत्र ईश्वर द्वारा मनुष्य को दिये गये सर्वश्रेष्ठ उपहारों में से एक है। नेत्रों के बिना मनुष्य का जोवन ग्रन्धकार के ग्रतिरिक्त कुछ नहीं है। ग्रतः सत्य ही कहा है कि —

चक्षुरक्षायां सर्वकालं मनुष्यैर्यत्नः कर्तव्यो जीविते यावदिच्छा,
व्यर्थोलोकोऽयम् तुल्य रात्रिदिवानां पुंसामन्धानां विद्यमानेऽपि वित्ते।

ग्रर्थात् जब तक जीवन की इच्छा है तब तक मनुष्यों को नेत्र रक्षा के लिए सर्वदा प्रयत्नशील रहना चाहिए। जिनके लिये दिन ग्रौर रात बराबर हैं ऐसे लोगों के लिए धन होते हुए भी यह संसार व्यर्थ है।

ग्रनेक ऐसे रोग हैं जो हमारे नेत्रों का प्रकाश छीनकर हमें ग्रन्धकारमय जीवन व्यतीत करने पर विवश कर देते हैं। ग्रधिमंथ (Glaucoma) भी उन्हीं में से एक है।

निदान :—

नेत्रों को भली प्रकार स्वच्छ न रखने से गन्दे वस्त्र ग्रथवा ऊंगलियों से बार-बार स्पर्श करने से तथा धूलिकरण ग्रादि नेत्रों में प्रविष्ट होने पर ग्रभिन्यन्द नामक रोग उत्पन्न हो जाता है जिसमें नेत्रों से निरन्तर जल का स्राव होता रहता है। ग्रभिष्यन्द (Conjun-ctiuitis) ग्रागे चलकर ग्रधिमन्थ का रूप धारण कर लेता है।

वृद्धिरेतैरभिष्यन्दैर्नराणामक्रियावताम्।
तावन्तरस्त्वधिमन्थाः स्युर्नयने तीव्रवेदनाः॥

लक्षण :—

यह विशेष प्रकार का कठिन व वेदनाप्रद रोग है। इसमें ग्रभिष्यन्द के सभी बढ़े हुए लक्षणों ग्रौर चिन्हों के ग्रतिरिक्त शंख, दंतप्रदेश, कपोल व कपाल के देशों में भी वेदना

की तीव्रता होने लगती है। इस रोग में वेदना तीव्रता के कारण अपना स्वतन्त्र रूप धारण कर अधिक कष्टप्रद हो जाती है।

अधिमन्था यथास्वं च सर्वे स्युरधिकव्यथाः।
शंखदंतकपोलेषु कपाले चातिरुक्कराः ॥

प्रकार :—

महर्षि सुश्रुत ने अधिमन्ध चार प्रकार का बताया है :—

1) वाताधिमंथ, 2) पित्ताधिमंथ, 3) श्लेष्माधिमंथ, 4) रक्ताधिमंथ।

1. वाताधिमंथ :—

इसमें अरणि के मंथन के समान पीड़ा होती है। रोमांच, संघर्ष, सूचीवेधन या शस्त्रवेधन के समान पीड़ा होती है। यह रोग कुंचन, आस्फोट, आध्मान व कम्प आदि वेदनाओं से युक्त होता है। व्याधि के स्वभाव के अनुसार आधे सिर में तीव्र वेदना होती है, कर्णनाद व भ्रम होता है तथा ललाट, आंख व भ्रू प्रदेश में पीड़ा होती है।

2. पित्ताधिमन्थ :—

नेत्र गोलक रक्तवर्ण का व अत्यधिक स्राव व दाहयुक्त होता है तथा गहरे ताम्र वर्ण का हो जाता है। पित्ताधिक्य के कारण रोगी को सभी वस्तुएं पीली दिखाई देती हैं। पीड़ा व दाह के कारण स्वेदागम, मूर्च्छा व शिरोदाह होता है। वर्त्मान्त शोथयुक्त।

3. श्लेष्माधिमन्थ :—

इसमें शोथ नहीं होता। नेत्र स्राव व अश्रुयुक्त तथा शीतल व गाढ़ी दूषिका (कीचड़) से युक्त होते हैं। देखने में कठिनाई होती है तथा नासाध्मान व शिरोवेदना आदि लक्षण मिलते हैं।

4. रक्तधिमन्थ

इससे पीड़ित रोगी का नेत्र गहरे रक्त वर्ण का तथा उत्पाटन करने के समान तीव्र वेदना व दाह से युक्त तथा स्पर्शाक्षम होता है। रोगी को चारों ओर सब कुछ रक्त वर्ण का दिखाई देता है। रक्त वर्ण का आस्राव होना भी इसका एक विशिष्ट चिन्ह है।

यदि आधुनिक मतानुसार विचार करें तो अधिमन्थ के लक्षणों व चिन्हों को देखते हुए इसकी तुलना Glaucoma नामक रोग से की जा सकती है। अधिमन्थ नाम

से ही ' अतिशय मन्थनवत पीड़ा" होना स्पष्ट होता है। वैसे प्रायः सभी नेत्ररोगों में तीव्र रक्ताधिक्य की अवस्था में वेदना या पीड़ा का होना सामान्य लक्षण है परन्तु आविल दर्शन, आस्फोटन, अत्यधिक पीड़ा, आष्मान (Tension) आदि कुछ ऐसे विशिष्ट लक्षण मिलते हैं जो कि Glaucoma के पक्ष में ही अधिक जाते हैं।

इसके अतिरिक्त संहिता ग्रन्थों में अधिमन्थ के जो उपद्रव बतलाये गये हैं वे आधुनिक मतानुसार मान्य Glaucoma के उपद्रवों (Direct Complications) से मिलते हैं।

आधुनिकों ने Glaucoma को एक रोग न मानकर रोग के लक्षण के रूप में माना है। इसके अन्तर्गत नेत्राभ्यंतरीय दबाव Intra Ocular Tension की वृद्धि होती है तथा नेत्रगोलक eyeball कठिन हो जाता है। यदि यथासमय शीघ्र ही उपचार न किया जाये तो सर्वदा के लिए दृष्टिनाश हो जाता है। नेत्रान्तरीय दबाव में वृद्धि निम्न कारणों से हो सकती है :—

1) Acquous Humour का अत्यधिक निर्माण होना
2) Canal of Schlemm द्वारा absorption कम होना
3) Episcleral Veins में Pressure का बढ़ जाना व
4) Trabecular tissue में Obstruction होना।

निदान व लक्षणों को देखते हुए रोग को तीन प्रकार का कहा जा सकता है : –

1) Primary Glaucoma - इसकी पुनः दो अवस्थायें होती हैं :—
   i) Chronic Simple or Broad Angle Glaucoma
   ii) Acute Conjestive or Narrow Angle Glaucoma
2) Secondary Glaucoma
3) Infantile Glaucoma (Buphthalmos)

Secondary Glaucoma—नेत्रान्तर्गत किसी रोग के कारण Intra Ocular Tension में वृद्धि हो जाने के परिणामस्वरूप यह स्थिति उत्पन्न होती है। प्रायः निम्नांकित रोगों के परिणामस्वरूप यह अवस्था उत्पन्न हो सकती है :—

1. Hypertensive Uveitis— Uveal Tract में Inflamation तथा Turbid Acquous तथा Inflamatory exudates के द्वारा drainage channels में Blockage होने के कारण।

2. Annular Post-Synechiae (Iris bomb), peripheral synechiae के द्वारा Pupillary Region में या Ant. Angle के region में acquous का circulation रुक जाने से।

3. Perforation of cornea में Iris अथवा lens के capsule के cornea के साथ चिपक जाने से (Ant. Synechiea) drainage में blockage होने से।

4. Massive Intra Occular Haemorrhage :— यदि Ant. Chamb. में किसी Vessel के Rupture हो जाने से Haemorrhage हो जाये तो acquous में उपस्थित Plasma Protiens तथा Blood में स्थित cellular elements drainage channels को block कर देते हैं। यदि haemorrhage post segment में हो तो Iris व Lens pressure के कारण आगे की ओर displace होकर cornea से attach हो जाते है तथा drainage बन्द हो जाने से।

5. Intra Ocular Tumour :— Neoplastic Tissue की उपस्थिति के कारण acquous का filtration बन्द हो जाने के परिणामस्वरूप।

6. Large Orbital Tumours, Orbital Inflamation में Venous Obstruction के कारण।

7. Traumatic Cataract की ऐसी अवस्था जिसमें कि lens फूल गया हो।

8. Thrombosis of Central Retinal Vein.

इन विभिन्न रोगों में उत्पन्न विभिन्न अवस्थाओं के परिणामस्वरूप acquous का drainage बन्द होकर निरन्तर Ant chamber में एकत्र होकर Intra Ocular Tension में वृद्धि कर Secondary Glaucoma की अवस्था उत्पन्न कर देते हैं।

2. Infantile Glaucoma :— Foetal life में ant. angle के region में tissues के development में किसी प्रकार की कमी रह जाने से यह रोग उत्पन्न होता है। Embroynic tissue के persistent रह जाने के कारण Iris cornea से पूर्णतः पृथक नहीं हो पाता। परिणामस्वरूप canal of schlemm का या तो निर्माण ही नहीं होता यदि होता भी हो तो सूक्ष्म छिद्र के रूप में। इस प्रकार के cases में प्रायः acquous veins उपस्थित ही नहीं होती। अतः Rise in intraocular tension की स्थिति permanent हो जाती है। यद्यपि कुछ मात्रा में acquous का circulation anterior cilliary veins तथा uveo scleral outflow के द्वारा होता रहता है। यह रोग प्रायः लड़कियों की अपेक्षा लड़कों में अधिक पाया जाता है।

लक्षण :—

समस्त cornea में व sclera में खिंचाव के कारण eye का antero post diameter बढ़ जाता है तथा myopic eye की अवस्था उत्पन्न हो जाती है। photophobia, circumscorneal conjestion तथा corneal opacities की अवस्था उत्पन्न हो जाती है। uveal pigments के कारण cilliary region पर स्थित thin sclera का रंग bluish हो जाता है।

चिकित्सा —

Miotics का प्रयोग लाभप्रद नहीं है। Simple chronic Glaucoma में बताये गये surgical treatments – trephining, Cyclodialysis लाभप्रद सिद्ध हो सकते हैं परन्तु क्योंकि इन्हें बार-बार करना होता है अतः sight पर इसका हानिकर प्रभाव पड़ता है।

जिस स्थिति में corneo iridic angle block होता है वहां Trabeculectomy नामक operation किया जाता है अथवा Gonio puncture किया जाता है जो कि subconjunctival space में trabecular region की समस्त मोटाई में puncture कर acquous को subconjunctival layer द्वारा absorb कर लिया जाता है।

Primary Glaucoma :—

Acute Conjestive or Closed Angle Glaucoma

यह अवस्था 50 से 60 वर्ष की आयु के पश्चात प्रायः pypermatropic eyes तथा अधिकांशतः स्त्रियों में पाई जाती है विशेष रूप से रजोनिवृत्ति के बाद। जिन व्यक्तियों में sympathetic stimulation प्रायः बढ़ी रहती है उनमें भी इस की सम्भावना बढ़ जाती है। इसकी 5 stages हैं :—

1. Prodromal stage :— यह रोग की पूर्वावस्था है। इसमें निम्न लक्षण दिखाई देते हैं :—

i) Intra Ocular Tension 40 to 60 m.m. of Hg तक बढ़ जाता है।

ii) रात्रि जागरण, चिन्ता अथवा cinema देखने के पश्चात सिर दर्द हो जाता है।

iii) प्रकाशमय वस्तुओं के गिर्द Halos दिखाई देते हैं।

iv) प्रत्येक वेग के साथ दृष्टि हानि होती है, Light Minimum बढ़ जाता है तथा adaptation time भी बढ़ जाता है।

v) Nasal side से field of vision कम होना प्रारम्भ हो जाता है।

2. Constant Instability :—उपरोक्त लक्षण 2nd stage में स्थायी रूप धारण कर लेते हैं तथा नेत्रान्तरोय दबाव में qiurinal variation बढ़ जाता है विशेष रूप से शाम को अधिक बढ़ जाता है।

3. Acute Conjestive Stage :— cilliary तथा conjunctival conjestion के कारण आंख बिल्कुल लाल हो जाती हैं तथा I.O.T. में वृद्धि के कारण कठोरता आ जाती है तथा भयंकर वेदना होती है। यह वेदना Trigeminal nerve की दूसरी Branches (Maxillary & Mandibular) के क्षेत्र में भी वेदना होती है। नाड़ी की गति व चाल Rate & Rythem में भी अन्तर आ जाता है।

Lids तथा conjunctiva में swelling तथा conjestion के चिन्ह दिखाई देते हैं।

Superficial punctate karatitis के कारण cornea धुंधला दिखाई देता है।

Pupil का light reflex खत्म हो जाता है अथवा कम हो जाता है। Iris विवर्ण हो जाता है। Pupil oval Dilated long axes तथा Vertically होता है।

Ant. chamber की depth कम हो जाती है। यदि इस समय peripheral iridectomy न की जाये तो I. O. T. के बढ़ा होने से optic nerve की atrophy होकर पूर्व दृष्टिनाश हो जाता है।

कभी-कभी स्वयं ही रोगी की दशा में कुछ सुधार हो जाता है परन्तु field of vision कम हो जाता है तथा iritis के लक्षण प्रतीत होते हैं तथा angle of ant. chamber भी कम होता है।

4th Stage :— Acute stage के शान्त हो जाने पर Ratina में कुछ परिवर्तन आ जाते हैं यथा—

1. Cupping of the optic disc.

2. धमनियों में स्पन्दन (साधारण स्थिति में केवल शिराओं में ही स्पन्दन प्रतीत होता है)।

3. दृष्टिक्षेत्र में काले धब्बे scotomatous defects.

4. दृष्टिनाड़ी के चारों ओर हल्का सा चक्र।

इस अवस्था में भी चिकित्सा न किये जाने पर absolute Glaucoma की अवस्था उत्पन्न हो जाती है।

5th Stage :– इस अवस्था में निम्न लक्षण होते हैं।—

i) Ant. cilliary veins फूल जाती है तथा circumnevral ring भी स्पष्ट दिखाई देती है।

ii) Cornea के चारों ओर नील लोहित वर्ण का ring सा दिखाई देती है। Cornea Transparent परन्तु नि:संज्ञ होता है तथा प्रकाश का इस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

iii) Optic Disc में excavation हो जाती है। नेत्र पत्थर के समान कठोर हो जाते हैं।

iv) निरन्तर नेत्रान्तरीय दबाव के बढ़े रहने से sclera दुर्बल होकर scleral staphoflonia की दशा उत्पन्न होकर अन्त में नेत्र फट जाते हैं व Pan ophthalmitis की दशा उत्पन्न होकर आंख नष्ट हो जाती है। कभी cillary body से acquous का निर्माण बन्द हो कर आंख अन्दर को धंस जाती है। इसे Pthysis Bullin कहते हैं।

चिकित्सा :—

रोग का निदान होते ही तुरन्त निम्न प्रकार से चिकित्सा कर्म करना चाहिए।—

Pilocarpine drops 2% या Exerene drops $\frac{1}{4}$ to 1% दिन में दो बार डालते रहना चाहिए।

यदि यह चिकित्सा लाभप्रद सिद्ध न हो तो Peripheral Iridectomy कर देनी चाहिए।

परन्तु Acute stage में Surgical operation से पूर्व निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए :—

1. Operation से पूर्व नेत्रान्तरीय दबाव को कम कर लेना चाहिए अन्यथा दबाव के कारण lens तथा Vitrous भी बाहर निकल सकतते हैं। इसके लिए Pilocarpine Exerene तथा Diamox के प्रयोग से I. O. T. को कम करें तथा गर्म Boric Lotion तथा Normal Saline से आंख पर स्वेदन करें।

2. वेदना को शान्त करने के लिए Aspirine या Morphia का प्रयोग किया जाता है।

3. Novocaine Inj. 1 c c. की मात्रा में Retrobulbar Inj. देकर भी I. O. T. को कम किया जा सकता है।

4. दूसरी आँख में भी Prophiflectichridctomy कर देनी चाहिए।

Chronic Simple Glaucoma

यह प्रायः 40 वर्ष की आयु के बाद ही पाया जाता है। Lacal Venous pressure की अधिकता तथा Episcleral veins या Trabecular tissu में obstruction होने पर acquous के outflow में अवरोध उत्पन्न होने के परिणाम स्वरूप यह रोग उत्पन्न होता है। इसमें Ant. chamber की Depth में विशेष कमी नहीं होती। Optic vesseles में Sclrosis से Optic atrophy तथा I. O. T की अधिकता से Trabecular tissu में उत्पन्न कठोरता भी इसका एक कारण है।

यह रोग अज्ञात रूप से प्रारम्भ होता है। शिरः शूल या Angle of the Ant Chamber की depth में कमी आदि Acute glaucoma के कोई लक्षण इसमें नहीं मिलते। केवल शनै-शनै दृष्टि शक्ति का नाश होता है तथा Light minimum बढ़ जाने से प्रकाश से अन्धकार में जाने पर देखने में कठिनाई होती है।

धीरे-धीरे नेत्रान्तरीय दबाव बढ़ता जाता है। Diurnal variation 4 m.m. of Hg. से बढ़कर 20-30 mm of Hg. तक पहुंच जाता है। किसी-किसी रोगी में Circum Corneal Conjestion तथा Episcleral veins का Dilatation दिखाई देता है।

Gonioscopic Exam. में Ant. Chamber सामान्य दिखाई देता है। Ophthalmoscopic Exam. करने पर निम्न विशेषताएं दृष्टिगोचर होती हैं।

1. Glaucomatous Excavation.
2. Atrophy of optic Nerve.
3. Circumneural Ring
4. Choroidal Atrophy.

दृष्टि क्षेत्र में काले-काले धब्बे दीखपड़ते हैं। दृष्टिक्षेत्र Nasal side से कम होना प्रारम्भ होकर धीरे-धीरे Temporal side से भी कम होने लगता है जबकि Central vision में कई मास तक कोई हानि नहीं होती।

चिकित्सा :—

प्रारम्भ में Pilacarpine drops 1—4% का प्रयोग करें। यदि यह लाभप्रद सिद्ध न हो तो Eserene lotion $\frac{1}{4}$ to $\frac{1}{2}$% का प्रयोग करें अथवा Eserene के साथ Procane 1 : 3 मिला कर eye drops के रूप में प्रयोग करें। साथ ही समय-समय पर रोगी को अपना I. O. T. तथा field of vision test कराते रहना चाहिए। यदि लाभ प्रतीत न हो तो I. O. T. को कम करने के लिए Diamox tabs. का प्रयोग (2 tab /day) करें।

लाभ न होने पर शस्त्र क्रिया का आश्रय लें।

Operative Treatment :—

इसके अन्तगत Cornea Scleral triphinlng of 'Eliot' सर्वश्रेष्ठ मानी जाती है। सर्वप्रथम नेत्र को स्वच्छ व संज्ञाहीन करके Adranaline की एक बून्द डालें। इससे बाह रक्तवाहिनियां संकुचित होकर scleral conjestion कम हो जाती है।

Cornea से 3—4 mm ऊपर conjunctive को fixation forceps से पकड़ कर उसका flap काटते हुए limbus तक ले आते हैं तथा उसे cornea पर उलट देते हैं। फिर Took's Knife द्वारा cornea को 2 mm. तक शेष cornea से पृथक् किया जाता है तथा इस flap को भी Cornea पर उलट देते हैं। 1·5 या 2 mm.

Bore के triphine द्वारा इस प्रकार छेद करते हैं कि इसका आधा भाग Sclera पर तथा आधा भाग Cornea पर हो। Triphine को घुमाकर Cornea Scleral disc को काट दिया जाता है। छेद होते ही aquous बाहर आता है तथा साथ ही Iris भी बाहर Protrude करता है। इस Prodruding Iris को Iris Forceps से पकड़ कर Peripheral Iridectomy कर दी जाती है। Scleral part of the iris को भी काट कर Iris Repositor से Iris को यथास्थान कर conjunctival flap को सी दिया जाता है। Acquous का Subconjunctival layer द्वारा शोषण होता रहता है तथा नेत्रान्तरीय दबाव स्थिर व सामान्य रहता है।

शस्त्र कर्म के पश्चात् नेत्र में Atropine sulphate की एक बून्द डालकर तथा स्वस्थ आंख में Eserene की बून्द डाल कर तब तक पट्टी करते रहें जब तक कि ant. chamber का पुनर्निमाण न हो जाये।

आयु० मतानुसार चिकित्सा :-

दोषानुसार अभिष्यंदवत् ललाट की सिरा का बेधन और भ्रू के ऊपर दाह।

सामान्य चिकित्सा :-

रोगी के शरीर व नेत्र को पूर्ण विश्राम देना। एक वर्ष पुराने घृत का पान कराकर स्नेहन कराना। अरण्ड तैल का स्निग्ध विरेचन देकर कोष्ठ-शुद्धि करना। बीच-बीच में बस्ती देकर भी कोष्ठ शुद्धि कर लेनी चाहिए।

अभिष्यन्द व अभिमन्थ इन दोनों रोगों में लघु स्निग्ध व पौष्टिक आहार की व्यवस्था करनी चाहिए। औषध सिद्ध दुग्ध व घृत का प्रयोग भी उत्तम है। घृतों में पुराणघृत, त्रिफला घृत, तैत्वकघृत अथवा केवल शुद्ध गोघृत का पान भोजन के पश्चात् करवाना उत्तम रहता है। क्षीर में कपित्यसिद्ध या बृहत् पंचमूलसिद्ध क्षीर का उपयोग लाभप्रद होता है।

शोणित मोक्षण :-

स्थानिक उपचारों में नेत्रों का स्वेदन बिडालक तथा रक्तमोक्षण सिरा का बेधन करके अथवा बार-बार जोंक लगाकर करना उत्तम है।

दाह कर्म :-

यदि उपर्युक्त औषधि चिकित्सा से लाभ न हो तो अग्नि कर्म का विधान शास्त्र में पाया जाता है। सुश्रुत ने भ्रू प्रदेश पर अग्निदाह का निदान किया है :—

"शिरीरोगाधिमन्थयोः भ्रूललाटशंखप्रदेशेषु दहेत् ।"

अञ्जन :-

पारदनागरसाञ्जन :— शुद्ध पारद, शुद्ध नाग, रसाञ्जन, प्रवाल, कासीस, लोध, ताम्र भस्म, निशोथ, त्रिकटु, गैरिक सैंधव, तुत्थ, समुद्रफेन, त्रिफला, मोती, अपराजिता, पुत्रजीव, धतूरे की जड़, इमली, पंचलवण— सम भाग में लेकर खूब महीन चूर्ण बनाकर या घिस कर ताम्रपत्र पर लेप कर वर्त्ति बना लें, गुलाब जल में घिस कर नेत्रों पर लगायें।

सम्भलो और सम्भालो उनको—

प्यार से दुलार से—
पास बुलाकर, समझाओ—
यह ठीक नहीं है,
मार्ग गलत है—
छोड़ो, मत अपनाओ !
हंसी उड़ेगी
साख गिरेगी
निन्दा फैलेगी
व्यथा बढ़ेगी
मत अपनाओ !
जाओ, मत करना—
आगे, निन्दित—
आचरण, व्यवहार !
सम्भल का मौका देने से
सम्भल बहुत से जाते हैं,
अनुचित लाँच्छन-प्रताड़न से
बिगड़ वे ही गिर जाते हैं !
सम्भलो और सम्भालो उनको
जो गौरव बन सकते हैं,
थोड़े ही अहसास से जो—
स्वयं लज्जित हो सकते हैं !

—हरि राम
स्टोर इन्चार्ज,
आतुरालय कन्या गुरुकुल,
खानपुर कलाँ

अलर्क (जल संत्रास)

—श्रीमती करुणा पुण्डीर
B. A. M. S., IV Year

अलर्क एक प्रकार का तीव्र औपसर्गिक रोग है, जो कुत्ता, बिल्ली, गीदड़, बन्दर, सुअर आदि प्राणियों के दंश से फैलता है। इस रोग में कुत्ते के काटने से न्यूनाधिक समय के बाद व्यक्ति में जल को देख कर भय (त्रास) उत्पन्न हो जाता है एवं उसके गले में स्तम्भ होकर निगलने में कठिनाई उत्पन्न हो जाती है। इस रोग का कारण रोगग्रस्त जन्तुओं के सुषुम्नाशीर्षक एवं सुषुम्नादण्ड की केशिकाओं में पाए जाने वाला Negri Bodies नामक न्यूरोट्रापिक निस्यन्दनीय वायरस है। कुत्ते के पागल होने से 2, 3 दिन पहले से तथा उसके पागल होने के 3-4 दिन बाद तक उसकी लाला (Saliva) में यह विष रहता है। कुत्ते की लाला में स्थित वायरस, उसके द्वारा काटे जाने पर काटे व्यक्ति की अधः त्वक् में प्रविष्ट होकर संवेदनशील नाड़ी के मध्यसूत्र (Axon) द्वारा मस्तिष्क संस्थान में पहुँच कर और वृद्धि करके बाहर की ओर जाने वाली (Afferent) नाड़ियों द्वारा लाला ग्रन्थि तक पहुँच जाता है और 1–2 मास के समय में मस्तिष्क की नाड़ी कोशिकाओं को आक्रान्त कर देता है। इस रोग का उद्भव काल शरीर के स्वास्थ्य विष की प्रबलता, क्षत पर स्थित लाला की मात्रा, क्षत की स्थिति और उसकी मस्तिष्क से दूरी पर निर्भर करता है। सामान्यतः यह काल 28 से 56 दिन का माना गया है। काटे गये व्यक्ति में रोग की प्रारम्भिक अवस्था, जो 1 से 2 दिन तक रहती है, में स्वभाव में चिड़चिड़ा, उदास, भयभीत, निगलने में कठिनाई, भूख न लगना, नींद न आना, तापक्रम सामान्य से कुछ अधिक, प्रकाश की असह्यता एवं निगलने की पेशियों का संकोच के लक्षण मिलते हैं। इसके 2–3 दिन बाद उत्तेजनावस्था, जो कि 2–3 दिन रहती है, में शनैः शनैः पेशी संकोच (जल के दर्शन मात्र से प्रारम्भ सम्भव), उन्माद जैसे लक्षण, ज्वर 102 से 103°F, श्वसन काठिन्य एवं दर आधिक्य, मुख से लाला आना, आवाज का

भारी होना और Cyanosis दिखाई देने लगते हैं और अन्त में पक्षाघात की अवस्था, जो कि 6 से 18 घण्टे की होती है, में पेशी संकोच धीरे-धीरे समाप्त हो जाता है, विभिन्न पेशियों का पक्षाघात होता है, बेचैन एवं स्तम्भ के लक्षण समाप्त, मांसपेशियां शिथिल और अन्त में मूर्च्छा उत्पन्न होकर हृदयावसाद से मृत्यु हो जाती है।

चिकित्सा: —

क्षत को तीव्र नि:संक्रामक से धो दें, सुखाने के बाद क्षत को कार्बोलिक एसिड से जला दें या पोटाशियम परमैंगनेट क्षत में भर दें। पँच्योर निरोधि चिकित्सा आवश्यकतानुसार करें। इसके लिए "एण्टी रैबिक वैक्सीन', जिसके एम्प्यूल (Amp.) 2 c. c., 5 c. c., 10 c. c. में आते हैं, को क्षत की तीव्रता, गहराई, दशा, स्थान के अनुसार प्रयोग करना चाहिए। आजकल सामान्य रूप से सभी रोगियों को 2 c. c. वैक्सीन चौदह दिन तक देते हैं। यदि कुत्ता जीवत है और दस दिन में नहीं मरा, व्यक्ति में कोई लक्षण नहीं एवं स्वस्थ है तो चिकित्सा बन्द कर देते हैं। अलर्क का प्रतिविष कुचला है। कुचले के चूर्ण को क्रमश: बढ़ती हुई मात्रा में एक मास तक देने से श्वान विष का दुष्प्रभाव नष्ट हो जाता है (देखिए भैषज्यरत्नावली), इसके अतिरिक्त विषजन्य हानि को रोकने के लिए शतावरी रस पान (योगरत्नाकर), श्वान विषहर लेप (योगचिन्तामणि)—गुड़, तैल, आक दुग्ध मिलाकर क्षत पर लेप, वत्सनाभादि चूर्ण (वत्सनाभ, भांगरा, करिच का समभाग चूर्ण घृत से) अथवा गोरोचन चूर्ण को नरमूत्र के साथ पीस कर शहद के साथ चटाने से लाभ प्राप्त होता है। आयुर्वेद के मतानुसार पहले दंश (क्षत) से रक्त को निकाल कर उत्तम घृत से जला दें फिर अगद प्रभावक औषधि का लेप कर दें और पुराने घी का पान कराए। रोगी को प्रात: 1 चम्मच कोयले का चूर्ण खिलाकर आधा घण्टे बाद 1 औंस काले धतूरे का रस पिलायें और 4 घण्टे धूप में रखें, इससे रोगी के उन्मत्त (पागल) हो जाने पर उसके ऊपर कई घड़े ठण्डा जल डलें। शान्त होने पर लघु पथ्य दें। इस प्रकार अलर्क विष का प्रतिरोध हो जाता है। (देखिए अष्टांग संग्रह उत्तर अ० 46)।

सांख्य के सृष्टिक्रम का वैज्ञानिक विवेचन—

—प्रोफेसर (डॉ०) चन्द्र दत्त कौशिक
महिला आयुर्वेद महाविद्यालय, खानपुर कलां

भारतीय दर्शनों में सांख्य ने सृष्टि के विकास क्रम को जितने विस्तार एवं सुसंगत ढंग से प्रतिपादित किया है, उतना वह अन्य दर्शनों में उपलब्ध नहीं होता। सभी दर्शनों ने जीवन का परम लक्ष्य मोक्ष को माना है और तदर्थ पदार्थ ज्ञान को अनिवार्य बताया है। शाब्दिक रूप से प्रत्येक दर्शन का पदार्थ भिन्न-भिन्न प्रतीत होता है, किन्तु तात्त्विक रूप से सभी एक हैं।

सांख्य दर्शन की रचना महर्षि कपिल ने की है। इन्होंने सृष्टि के प्रत्येक तत्त्व की संख्या का उपदेश किया है, जिससे सम्बन्धित दर्शन 'सांख्य-दर्शन' के नाम से विख्यात हुआ। इस दर्शन के तीन पदार्थ—'व्यक्त', 'अव्यक्त' एवं 'ज्ञ' हैं। इन तीनों में 'ज्ञ' सर्वप्रधान है। व्यक्त एवं अव्यक्त एक ही द्रव्य की दो अवस्थाएं हैं। जब तक इन्द्रियों द्वारा द्रव्य का ज्ञान नहीं होता, तब तक वह द्रव्य अव्यक्त अवस्था में रहता है और जब उसका ज्ञान इन्द्रियों द्वारा होने लगता है, तब उसे व्यक्त कहा जाता है। सांख्य का कथन है—यदि 'ज्ञ' को इन तीनों पादार्थों का ज्ञान हो जाता है, तो उसे मोक्ष प्राप्त हो सकता है।

सांख्य के अनुसार मूल द्रव्य 'प्रकृति' है। 'पुरुष' के सम्बन्ध से उसमें परिवर्तन होने लगते हैं। निष्पन्न परिवर्तनों से ही सृष्टि की संरचना होती है। प्रकृति को त्रय-गुणात्मक माना गया है। सत्व, रज और तम नामक ये तीन गुण हैं। जब तक ये तीनों गुण साम्यावस्था में रहते हैं, तब तक प्रकृति अपने मूल रूप में अवस्थित रहती है और उसमें कोई परिवर्तन नहीं होता। इन गुणों में विषमावस्था उत्पन्न होने पर प्रकृति में अनेक विकार उत्पन्न होने लगते हैं और सृष्टि का संरचना-क्रम आरम्भ हो जाता है।

त्रय-गुणात्मक प्रकृति से सर्वप्रथम 'महान' नायक तत्त्व उत्पन्न होता है। यह प्रकृति का प्रथम विकार है। इसके उपरान्त द्वितीय तत्त्व 'अहंकार' बनता है। यह अहंकार भी गुणों की विविधता के कारण तीन प्रकार का हो जाता है—सात्विक अहंकार, राजस अहंकार और तामस अहंकार। सात्विक अहंकार की प्रधानता से तथा राजस अहंकार की सहायता से मन की उत्पत्ति होती है। सात्विक एवं राजस अहंकार के योग तथा राजस अहंकार की प्रधानता से ज्ञानेन्द्रियों की उत्पत्ति होती है। राजस अहंकार और तामस अहंकार के संयोग में तामस अहंकार की प्रबलता से कर्मेन्द्रियों की उत्पत्ति होती है। नेत्र, नासा, कर्ण, रसेन्द्रिय एवं स्पर्शेन्द्रिय ज्ञानेन्द्रिय हैं तथा हाथ, पैर, मलेन्द्रिय, मूत्रेन्द्रिय और वाणी कर्मेन्द्रिय हैं। मात्र तमोगुणी अहंकार से पंच तन्मात्राओं की उत्पत्ति होती है। यहां यह बात स्पष्ट रहनी चाहिए कि मन, ज्ञानेन्द्रिय, कर्मेन्द्रिय तथा पंच तन्मात्राओं में कोई ऐसा तत्त्व नहीं है, जो पूर्णरूपेण एक ही प्रकार के अहंकार से व्युत्पन्न हुआ हो। विविध प्रकार के अहंकारों के योग से ही इन चारों की अवतारणा होती है, किन्तु प्रधानता के कारण किसी एक प्रकार के अहंकार का नाम विशेषतावश कह दिया जाता है। तन्मात्राओं में भी सात्विक और राजस अहंकार की उपस्थिति है, परन्तु उनकी मात्रा बहुत अल्प है। इसी प्रकार मन में तामस अहंकार उपस्थित है, किन्तु उसकी मात्रा भी न्यून है।

मन, ज्ञानेन्द्रियों और कर्मेन्द्रियों के आगे और नये द्रव्यों की उत्पत्ति नहीं होती। पंच तन्मात्राओं से आगे नवीन द्रव्य बनते हैं, जिन्हें 'पंच महाभूत' कहते हैं। अनेक शास्त्रकार पंच तन्मात्राओं को सूक्ष्मभूत और पंच महाभूतों को स्थूलभूत कहते हैं। उनका अभिप्राय: यह प्रतीत होता है कि पंच तन्मात्राएं भौतिक स्थिति में सूक्ष्मतम रूप में हैं और पंच महाभूत स्थूल रूप में हैं।

पंचमहाभूतों के आगे सांख्य ने सृष्टि के विकास की चर्चा नहीं की है। परन्तु गम्भीर विवेचन से तथा शास्त्रकारों के अनुसार विकास का रथ इसी स्थिति में नहीं रुक जाता, अपितु आगे बढ़ता है। पंच महाभूतों के विकारों से अनेक प्रकार के द्रव्य बनते हैं। जिनके स्पष्ट रूप से दो भेद हो जाते हैं—अजीवित तथा जीवित। अजीवित द्रव्यों के साथ जीवात्मा का सम्बन्ध नहीं होता। इनमें पृथ्वी, जल, तेज, वायु और उसके भिन्न-भिन्न प्रकार के रूप हैं। आकाश का नाम लेखक ने जानबूझ कर प्रस्तुत नहीं किया। अनेक शास्त्रकारों ने आकाश के परमाणुओं को स्वीकार नहीं किया, क्योंकि वह तो पृथ्वी, जल, वायु और अग्नि की उत्पत्ति का अनिवार्य परिणाम है।

जीवित द्रव्यों की उत्पत्ति में आत्मा तथा पंच महाभूतों का सम्बन्ध कारण

बनता है। इनके मेल से त्रिधातु नाम के जीवित द्रव्यों की उत्पत्ति होती है। त्रिधातुओं में—वात, पित्त और कफ, नाम के तीन द्रव्यों का समावेश होता है। ये तीनों द्रव्य ही प्रत्येक प्रकार के शरीरों के मुख्य घटक हैं। इनके द्वारा ही रस, रक्त, मांस और मेद आदि सप्तधातुएं तथा मूत्र, शकृतादि मल बनते हैं। जब तक ये तीनों द्रव्य साम्यावस्था में रहते हैं, तब तक शरीर स्वस्थ रहता है। इनकी विषमावस्था विभिन्न रोगों को जन्म देती है। सृष्टि के समस्त शरीरों में सर्वत्र त्रिधातु—वात-पित्त-कफ उपस्थित रहते हैं। चाहे वह शरीर मनुष्य का हो अथवा जीव-जन्तु, कीड़े-मकोड़े, पशु-पक्षी या वानस्पतिक जगत् का हो।

आयुर्वेद शास्त्र में पंचमहाभूत तथा आत्मा के मेल से बने हुए त्रिधातुओं का विस्तार से विवेचन किया गया है। संक्षेप में सांख्य के मतानुसार सृष्टि के विकास का यही क्रम है।

जब हम आधुनिक वैज्ञानिक विचारधारा के परिवेष में सांख्य के सृष्टि-विकास-क्रम पर विचार करते हैं, तो उनमें अद्‌भुत् प्रकार का सामंजस्य दिखाई देता है। आधुनिक मत के अनुसार सृष्टि का सूक्ष्मतम अवयव परमाणु है। यह परमाणु तीन प्रकार के कणों से मिलकर बना हुआ है। इनमें से एक 'प्रोट्रोन' है, इसका भार अन्य दो कणों के भार के बराबर होता है और इस पर धन विद्युत आवेश होता है। दूसरे प्रकार के ऋण आवेश कण 'एलक्ट्रोन' कहलाते हैं। ये संख्या में अनेक होते हैं और लगातार प्रोट्रोन के चारों ओर घूमते रहते हैं। ठीक उसी प्रकार, जिस प्रकार सूर्य के चारों ओर उसके ग्रह चक्कर लगाते रहते हैं। तीसरे प्रकार के कण 'न्यूट्रोन' कहलाते हैं। इनके ऊपर किसी प्रकार का विद्युत आवेश नहीं होता। ये भी प्रोट्रोन के चारों ओर घूमते रहते हैं। परमाणु के स्वरूप को बनाए रखने में प्रमुख भाग प्रोट्रोन का है।

यदि हम एक ऐसी अवस्था की कल्पना करें, जबकि प्रोट्रोन, इलक्ट्रोन और न्यूट्रोन सभी अलग-अलग हो जाएं और किसी कारण एक दूसरे के प्रति आकर्षित न हों तब क्या दशा होगी? लेखक की सम्मति में सांख्य ने प्रकृति की इसी अवस्था को साम्यावस्था कहा है। यह मूल प्रकृति का अपना स्वरूप होगा। प्रकृति को त्रय-गुणात्मक कहा गया है। थोड़े से विचार से ही हम धनविद्युत आवेश युक्त प्रकृति के कणों को सत्व और ऋणविद्युत आवेश कणों को रज तथा आवेश हीन कणों को तम के रूप में ग्रहण कर सकते हैं। जब किन्हीं अज्ञात कारणों या परमेश्वर की इच्छा से इन कणों में गति उत्पन्न हो जाती है और प्रत्येक कण एक उद्देश्य को लेकर दूसरे कण की ओर आकर्षित होने लगता है, तब इस दशा को महान के नाम से पुकारा जा सकता है। महान्

शब्द का अर्थ सास्त्रकारों ने बुद्धि बताया है। बुद्धि सदा निर्णय करती है—इष्ट क्या है ? अनिष्ट क्या है ? अर्थात् किससे मिलना है और किससे नहीं मिलना है ? क्या उपयोगी है और क्या अनुपयोगी है ? क्या अनुकूल है, क्या प्रतिकूल है ? जब अनन्त, असीम और विशाल ब्रह्माण्ड सात्विक, राजस एवं तामस असंख्य कणों से खरा पड़ा है, जो अपने-अपने स्थान में गतिहीन पड़े हुए हैं। यदि ये प्रत्येक कण एकाएक गतिमय बन जाएं और सृष्टि जैसी विशाल रचना के लिए अपने-अपने इष्ट कणों की ओर चल दें, तब उस दशा को महान् नाम की स्थिति से प्रकट किया जा सकता है। अन्य कोई शब्द इस अर्थ का स्पष्ट-वाची नहीं।

महान् नाम के तत्त्व की उत्पत्ति के साथ ही अहंकार नाम के तत्त्व की उत्पत्ति आरम्भ हो जाती है। अहंकार सब्द का अर्थ अहं की भावना है। जहां अहं होता है, वहां दो बातें सामने आती हैं— 1. अहं ससीम होता है। 2. उस सीमा में परिवर्तन करने का यदि कोई प्रयास किया जाता है तो अहं प्रतिरोध करता है, वह सीमा को टूटने नहीं देता तथा स्वरूप को यथावत् बनाए रखने का प्रयास करता है। महान् तत्त्व की उपस्थिति में सृष्टि का प्रत्येक कण अपने इष्ट कणों की ओर गति करता है और अहंकार की स्थिति में प्रत्येक कण अपने इष्ट कण के साथ मिल जाता है। यदि इन कणों को पुन: विभक्त करने की चेष्टा की जाए तो वे इस चेष्टा का विरोध करते हैं और अपने अहं के स्वरूप को यथावत् बनाए रखने की चेष्टा करते हैं। अहंकार के कारण ही प्रत्येक द्रव्य का स्वरूप एवं सीमा निश्चित होती है। सृष्टि के आरम्भ में एक बार उत्पन्न होकर यह सृष्टि की प्रत्येक रचना में व्यापक है और इसी के कारण ही सभी रचनाओं में भिन्नता दिखाई देती है। एक बार सभी कण अपने-अपने इष्ट कणों के साथ मिल गए तो परमाणु का स्वरूप पूरा हो गया। यद्यपि परमाणुओं की संख्या गणना-सीमा से बाहर रही, तो भी प्रत्येक परमाणु में दूसरे परमाणु से भिन्नता अक्षश्य रही और इन्हीं भिन्नताओं के कारण विविध प्रकार के सृष्टि द्रव्यों की रचना होती है। वैशेषिक दर्शन के अनुसार परमाणु-भिन्नता का ज्ञान विशेष नाम के पदार्थ से होता है।

अहंकार से उत्पन्न होने वाले तीन प्रकार के द्रव्य हैं—मन, इन्द्रियां और तन्मात्राएं मन स्वयं अचेतन है, किन्तु उसकी क्रियाएं चेतन की क्रियाओं की भांति प्रतीत होती है। यह अणु रूप हैं होता है और प्रत्येक आत्मा के साथ एकाकी रहता है। इसका मुख्य कार्य संकल्प और विकल्प है। ज्ञान इन्द्रियों से होता है। मन इन्द्रियों से ज्ञान ग्रहण कर अत्मा के पास भेज देता है और आत्मा के आदेशों के अनुसार ज्ञान की प्रतिक्रिया को भी इन्द्रियों के पास भेजता है। इसी प्रतिक्रिया के अनुसार इन्द्रियों की क्रिया होती है।

मन की रचना में सत्व गुण की प्रधानता बताई गई है। मन के विषय में स्थिति को समझने के लिए हमें यह जानना चाहिए कि आत्मा सूक्ष्म है। आत्मा की रचना त्रिगुणों से नहीं हुई है। मन की रचना सत्व प्रधान त्रिगुण से हुई है। आत्मा सीधे-सीधे इन्द्रियों को प्रभावित नहीं कर सकता, किन्तु मन ऐसा द्रव्य है जो आत्मा—इन्द्रियों के बीच में बैठा है। इसी के द्वारा इन्द्रियों का सम्बन्ध आत्मा से होता है। मन इन्द्रियों से सूक्ष्म है और इन्द्रियां मन से स्थूल हैं। अतः मन ऐसे परमाणुओं से बना है, जो अपनी गति से प्रतिक्रिया उत्पन करता है और इन्द्रियों की प्रतिक्रिया अपने अन्दर अंकित कर लेता है। आत्मा इस प्रतिक्रिया को समझकर यथायोग्य निर्णय लेता है। आज भी सृष्टि में ऐसे अनेक कण हैं, जो दूसरे कणों के सम्पर्क में आकर अपने अन्दर परिवर्तन पैदा कर लेते हैं। यह परिवर्तन अवश्यमम्भावी और निश्चित होता है, जिसे देख कर व्यक्ति निश्चित परिणामों पर पहुँच जाते हैं। नीले लिटमस पेपर को यदि अम्ल से स्पर्श करा दिया जाए तो उसका रंग लाल हो जाता है। वैज्ञानिक तत्काल समझ लेता है कि लिटमस से स्पर्श प्राप्त द्रव्य की प्रतिक्रिया अम्लीय है। यद्यपि लाल रंग स्वयं नहीं कहता कि मैं अम्ल हूं। लेखक के विचार से मन भी ऐसे परमाणुओं से बना है जिसके परमाणुओं में इन्द्रियों के स्पर्श के कारण निरन्तर परिवर्तन होता रहता है और कुछ समय के बाद अपने आप वह परिवर्तन प्राकृत अवस्था में बदल जाता है, जिससे कि वह नवीन-नवीन संज्ञानों को ग्रहण करता रहता है।

सत्व प्रधान अहंकार से मन की उत्पत्ति के उपरान्त रजोगुण प्रधान अहंकार से इन्द्रियों की उत्पत्ति होती है। अपनी रचना के अनुसार प्रत्येक इन्द्रिय विशेष प्रकार के विषयों को ग्रहण करने की क्षमता रखती है। नेत्र-इन्द्रिय रूप, कर्णेन्द्रिय शब्द, घ्राणेन्द्रिय गन्ध, स्पर्शेन्द्रिय स्पर्श एवं रसेन्द्रिय स्वाद को ग्रहण करती है। यह बात स्पष्ट है कि जिस स्थिति में इन्द्रियों की रचना होती है, उस समय तक रूप आदि विषयों का निर्माण नहीं हो पाता। सम्भवतः पंच तन्मात्राओं का निर्माण भी इन्द्रियों की उत्पत्ति के बाद ही होता है। इसका अभिप्रायः यही है कि विकास के क्रम में ऐसे परमाणुओं की रचना हो जाती है जो रूप-रस-गन्ध आदि विषयों से प्रभावित होकर अपने में परिवर्तन उत्पन्न करने लगते हैं। मन उन परिवर्तनों को ग्रहण कर लेता है। यही प्रारम्भिक ज्ञानेन्द्रिय होती है। जहां तक कर्मेद्रन्यियों का प्रश्न है, वे सब गतिरूप ही हैं। गति के भिन्न-भिन्न भेद भिन्न-इन्द्रियों के साथ संयुक्त दिखाई देते हैं। इन्द्रियों के निर्माण के समय परमाणुओं में गति की उपस्थिति को कोई भी अस्वोकार नहीं करता।

तामस प्रधान अहंकार से पंच तन्मात्राओं की उत्पत्ति मानी गई है। इनकी

रचना ऐसे परमाणुओं से होती है, जिनमें गति और परिवर्तन मन और ज्ञानेन्द्रियों के परमाणुओं के समान नहीं होता और जो अपनी स्थिति को यथावत् बनाए रखने का बराबर प्रयास करते रहते हैं। इन परमाणु-समुहों में कुछ गुणों की विशेषता होती है, जिनके कारण इन्हें रूप तन्मात्र, रस तन्मात्र, गन्ध तन्मात्र, स्पर्श तन्मात्र और शब्द तन्मात्र के नाम से पुकारा जाता है। शास्त्रकारों ने इन्हें सूक्ष्मभूत भी कहा है। इस प्रकार पंचतन्मात्राओं की स्थिति तक रचना परमाणु रूप रहती है। अतः प्रत्येक रचित द्रव्य सूक्ष्मतम रहता है। इसीलिए इन द्रव्यों का संगठन सूक्ष्म शरीर के रूप में स्थूल शरीर के छूट जाने पर भी आत्मा के साथ बना रहता है। पंच तन्मात्राओं की रचना के साथ ही विकास क्रम एक नया मोड़ लेता है अर्थात् मन तथा ज्ञानेन्द्रियों से किसी नए द्रव्य की उत्पत्ति नहीं होती, वरन् तन्मात्राओं से यह क्रम आगे बढ़ता है।

पंच तन्मात्राओं का अध्ययन करने से प्राचीन वैज्ञानिकों की अद्भुत चिन्तन एवं ज्ञानशक्ति का परिचय मिलता है। पंच तन्मात्राओं की रचना तक सृष्टि में आधुनिक एटम की रचना पूरी हो जाती है और प्राचीनों के द्वारा उनके गुणों तथा विशेषताओं के अनुसार उनका वर्गीकरण भी प्रतिपादित कर दिया गया है। उन्होंने सम्पूर्ण एटम जगत को पांच बड़ी श्रेणियों में विभाजित कर दिया है और यह वर्गीकरण ही शब्द तन्मात्र, स्पर्श तन्मात्र, रूप तन्मात्र, रस तन्मात्र तथा गन्ध तन्मात्र के नाम से विख्यात हुए। आधुनिक वैज्ञानिकों ने सृष्टि में एक सौ पांच से अधिक तत्त्वों को स्वीकार किया है और उनकी मान्यता है कि सभी तत्त्व एक ही प्रकार के परमाणुओं से बने हुए हैं। परन्तु परम णुओं के विषय में प्राचीनों ने तन्मात्राओं के रूप में पांच बड़े वर्ग ही माने हैं।

तन्मात्र-स्थिति में सृष्टि रचना परमाणु रूप में ही रहती है, किन्तु इसके आगे परमाणुओं के समवाय बनने लगते हैं। इन समवायों को आधुनिक विज्ञान अणु कहता है। जब भिन्न-भिन्न गुणों और विशेषता वाले परमाणु परस्पर मिलकर एक तीसरे ही प्रकार के द्रव्य के अणुओं की रचना करते हैं, तब वे रचित द्रव्य के मोलिक्यूल कहलाते हैं। जैसे—सोडियम और क्लोरीन इन दोनों द्रव्यों में नमक का कोई गुण नहीं है, परन्तु जब दोनों मिलते हैं तो सोडियम क्लोराइड नाम के द्रव्य की रचना हो जाती है। जो इन दोनों से बिल्कुल भिन्न होता है। यहां यह भी ध्यान रखने की बात है कि कोई भी परमाणु सृष्टि में अकेला नहीं पाया जाता और अकेला रह भी नहीं सकता। उसे अणुरूप में ही रहना होता है।

प्राचीनों की दृष्टि में पंच तन्मात्राओं के बाद पंच महाभूतों की रचना होती है। शब्द तन्मात्र से आकाश, स्पर्श तन्मात्र से वायु, रूप तन्मात्र से अग्नि, रस तन्मात्र से

जल और गन्ध तन्मात्र से पृथ्वी महाभूत की उत्पति होती है। शास्त्र में यह भी कहा गया है कि किसी भी तन्मात्र से अकेले ही एक महाभूत की उत्पत्ति नहीं होती, एक महाभूत की उत्पत्ति में अनेक तन्मात्राओं का सम्बन्ध रहता है। इसी प्रकार महाभूतों की उत्पत्ति में भी तन्मात्राओं के सहयोग के साथ-साथ अन्य महाभूतों का भी सम्बन्ध रहता है, इसीलिए शास्त्र में यह भी कहा गया है कि आकाश से वायु, वायु से अग्नि, अग्नि से जल और जल से पृथ्वी उत्पन हुई है। यह शास्त्र वचन उत्तर महाभूत की उत्पत्ति में पूर्व महाभूत की उत्पत्ति के सहयोग की बात पुष्ट करता है।

आधुनिक विज्ञान के अनुसार परमाणुओं से अणु बनते हैं। अणु परस्पर मिलते हुए सृष्टि में असंख्य प्रकार के द्रव्यों की रचना कर डालते हैं। किन्तु जब रचित द्रव्यों का विश्लेशण किया जाता है तो उनमें लगभग एक सौ पांच प्रकार के मूल द्रव्य दिखाई देते हैं और उनको तत्व कहा जाता है। वैज्ञानिकों ने इन तत्वों के वर्गीकरण का भी प्रयास किया है और मोटे रूप से उन्हें पीरिओडिक टेबल के हिसाब से आठ भागों में विभाजित कर दिया है। इस बात को यदि इस प्रकार कहा जाय कि नवीनों ने सृष्टि की सम्पूर्ण रचनाओं को आठ महाभूतों में विभाजित कर दिया है, तो यह कोई असंगत बात नहीं होगी। प्राचीनों ने सृष्टि की सम्पूर्ण रचना को पांच महाभूतों में विभाजित किया है। विज्ञान की प्रगति के साथ-साथ यह असम्भव नहीं होगा कि आठ महाभूत पांच महाभूतों में बदल जाए और सांख्य की पांच महाभूतों की विचारधारा पुन: पुष्ट हो जाए। फिर सृष्टि जैसे विशाल द्रव्य के मौलिक तत्वों के वर्गीकरण में पांच और आठ का अन्तर कोई विशेषता नहीं रखता और थोड़े ही प्रयास से दोनों में समन्वय स्थापित किया जा सकता है।

पंच महाभूतों या आठ महाभूतों की उत्पत्ति जीवन रहित रचना है। पंच महाभूतों की उत्पत्ति के बाद जीवित रचनाएं उत्पन्न होती हैं। इसी प्रकार नवीनों के आठ महाभूतों की उत्पत्ति के बाद जीवित द्रव्य उत्पन्न होते हैं। प्राचीनों के अनुसार जीवन का आधार 'पुरुष' नाम की रचना है। इसे पंच महाभूत और शरीर का समवाय बताया गया है। पंच महाभूत और शरीरी के मिलने से पुरुष में त्रिधातु नाम का एक द्रव्य बनता है। इस द्रव्य में वात, पित्त, कफ नाम की विशेष रचना एवं क्रिया दिखाई देती है। वास्तव में त्रिधातु ही जीवन का आधार है। जड़ पंच महाभूत से बने ये द्रव्य चेतनायुक्त होते हैं और समस्त सृष्टि की जीवित रचना के आधार बनते हैं। अपनी रचना के अनुसार पुरुष एक अथवा अनेक कोष्ठी वाला होता है। आगे चलकर इस पुरुष के दो बड़े भेद हो जाते हैं, जिनमें से एक उद्भिद् या वनस्पति वर्ग कहलाता है और दूसरा भेद जन्तु वर्ग कहलाता है। मनुष्य जन्तु वर्ग की श्रेष्ठतम रचना है।

नवीनों के विचार के अनुसार आठ महाभूतों के द्वारा एक विशेष प्रकार का द्रव्य उत्पन्न होता है, जिसे कोषा (Cell) कहा जाता है। इसके अन्दर प्रोटोप्लाज्म नामक एक विशिष्ट रचना होती है, जिसमें जीवन के सभी आवश्यक लक्षण पाये जाते हैं। जैसे—भोजन ग्रहण करना, मल त्याग करना, श्वास-प्रश्वास क्रिया करना। उसमें अपनी गति है और वह अपने समान अन्य प्रोटोप्लाज्मधारी कोषों को उत्पन्न करने की शक्ति रखता है। आगे चलकर कोषा से अनेक कोषाएं बनती हैं और वे भी जन्तु या वनस्पति वर्ग में विभाजित हो जाते हैं। ऊपर के विवरण के अनुसार यदि हम कोषा (Cell) को पुरुष तथा प्रोटोप्लाज्म को त्रिधातु स्वीकार कर लें तो प्राचीनों और नवीनों की भिन्न प्रतीत होती हुई विचारधारा सामंजस्य के महान् समुद्र में एकाकार होती प्रतीत होती है।

आचार्य डॉ० रामदेव जी शास्त्री के सान्निध्य से प्रसूत यह लेख यदि विद्वानों के मानस में गम्भीर चिन्तन की ऊहा-पोह उत्पन्न कर दे, तो लेखक अपने परिश्रम को सार्थक समझेगा। लेखक की यह अपनी चिन्तन परम्परा है, यह आवश्यक नहीं कि सभी इससे सहमत हों।

❀ शोक - समाचार ❀

राजकीय महिला महाविद्यालय, रोहतक के प्राध्यापक वर्ग की एक सभा दिनांक 23-1-81 को प्राचार्या की अध्यक्षता में हुई, जिसमें संस्कृत विभाग के प्राध्यापक श्री मधुकर जी विद्यालंकार की पूजनीया माता जी के आकस्मिक निधन पर शोक व्यक्त किया तथा परम पिता परमेश्वर से दिवंगत आत्मा की शान्ति के लिए प्रार्थना की गई।

—प्रकाश वीर दलाल
प्राध्यापक संस्कृत विभाग
राजकीय महिला महाविद्यालय,
रोहतक

राष्ट्रीय सेवायोजना इकाई
(National Service Scheme Unit)
महिला आयुर्वेद कालेज, खानपुर कलां (सोनीपत) का
संक्षिप्त कार्यवृत्त

1. स्थापना वर्ष :— 1978 – 79

2. कार्य-क्रम अधिकारी (Programme Officer) :—
   डा० सुदेव चन्द्र पाराशरी, प्रोफैसर

3. छात्र स्वयं सेविका संख्या :— एक सौ

4. म० द० विश्व-विद्यालय रोहतक से प्राप्त अनुदान।
   सामान्य रुपये 2800/-, कैम्पिंग ग्रान्ट रुपये 2000/- मात्र

5. क) वर्ष 1978—79 के दौरान किए नियमित कार्य :—

स्वास्थ्य कार्यक्रम, स्वच्छता अभियान, परिवार कल्याण एवं शिशुरक्षा, रोगी सेवा, आतुर चिकित्सा, चिकित्सालय प्रबन्ध में सहयोग, परिचर्या एवं पञ्जीयन में सहकार, प्रौढ़ शिक्षा प्रोत्साहन, नारीजागरण प्रेरणा, अस्पृश्यता निवारण एवं पिछड़े वर्ग की सेवा। औषधि एवं वृक्षों का आरोपण एवं संरक्षण।

ख) रा० से० योजना शिवर एवं आरोग्य शिविर एवं नेत्र शिवर का विशेष आयोजन :—

1. नेत्र चिकित्सा शिविर :-

11 नवम्बर 1978 से 20 नवम्बर 1978 तक नेत्र चिकित्सा शिविर का आयोजन मेडिकल कालेज, रोहतक की विशेष नेत्रविशेषज्ञों की टीम के सहयोग से किया

गया। जिसमें कालेजीय चिकित्सक वर्ग के निर्देशन में छात्रा स्वयं-सेविकाओं ने परिचर्या, प्रबन्ध, रोगीसेवा में पूर्ण योगदान एवं कर्म मार्ग का परिदर्शन किया। आउट डोर नेत्र रोगी सेवा के साथ-साथ पर्याप्त संख्या में नेत्रों के शस्त्रकर्म किए गए, एवं अन्तरंग विभाग में रोगी सेवा सम्पन्न हुई, जिन में रोगियों को निश्शुल्क औषधि एवं पथ्यवितरण की व्यवस्था थी। 1000 से ऊपर बाह्य रोगी एवं 100 के भीतर अन्तरंग रोगी सेवा हुई। जिसका सारा व्यय कालेज-प्रबन्ध तन्त्र ने वहन किया।

2. राष्ट्रीय सेवा योजना का विशिष्ट शिविर एवं आरोग्य शिविर का सफल आयोजन :-

दिनांक 25 दिसम्बर 1978 से 3 जनवरी 1979 तक 2 किलोमीटर दूर 6 हजार की जनसंख्या वाले ग्राम खानपुर कलां, विकास खण्ड गोहाना जि० सोनोपत में किया गया। जिसमें कार्यक्रम अधिकारी के साथ डा० निशिकान्त शर्मा, डा० निर्मला चौधरी, डा० सरिता सुल्लेरे, डा० चैतन्यवल्भ ने नियमित छात्राओं का पथदर्शन एवं निर्देशन किया। चिकित्सालय के उपवैद्यों ने औषधि वितरण में सहयोग किया।

"ग्रामों के पुनरुत्थान" मूलमन्त्र के अन्तर्गत ग्राम के घर-घर घूम कर 583 घरों और 4464 परिजनों का सर्वेक्षण किया गया, जिनमें 3389 निरक्षर तथा 745 रोगी प्राप्त हुए। रोगियों की सेवा चिकित्सा की गई। स्वास्थ्य कार्यक्रम, स्वच्छता अभियान, लेक्चर का आयोजन एवं परिवारों से प्रत्यक्ष सम्पर्क एवं चर्चा तथा स्वास्थ्य कार्यक्रम का सम्पादन घर-घर धूम कर एवं गली-गली किया गया। वृक्षारोपण के प्रोत्साहन के इलावा पड़ोस में उपलब्ध वनोषधियों के उपयोग, रोंगों की रोकथाम व बीमारी में प्रयोग बतलाया गया।

परिवार कल्याण—मास (जनवरी 79) के मूलमन्त्र "पहिला विलम्ब से, दूसरा दीर्घान्तर से, तीसरा कभी नहीं" (Delay in First, Space the Second and Stop the Third) के अन्तर्गत प्रचार अभियान एवं प्रसार कार्य तथा शिशु सेवा एवं परिचर्या विस्तृत रूप से की गई। जिसमें 2025-15 रुपये व्यय हुए।

6. वर्ष 1979—80 के दौरान नियमित कार्य :—

वर्ष 1978 - 79 में आरम्भ किये गये समस्त कार्यों को और अधिक नियमित एवं गम्भीरता से किया गया। एक सौ से अधिक नये वृक्ष एवं वनौषधियां अरोपित की गईं, पूर्वारोपितों का संरक्षण किया गया। कैम्पस एवं चिकित्सालय में रोगी सेवा,

परिचर्या, स्वच्छता, स्वास्थ्य, क्रीड़ा एवं सांस्कृतिक कार्यक्रम सम्पादित किये गए। परीक्षाओं के विलम्ब से होने के कारण नूतन प्रवेश एवं नए स्वयंसेवकों की भरती एवं सत्र व्यतिक्रम हो जाने के कारण इस वर्ष विशिष्ट शिवर का आयोजन सम्पन्न न हो सका। यद्यपि नई छात्रा स्वयं-सेविकाएं 135 ने नामांकन कराया।

इस वर्ष में 2800/- रु० मात्र सामान्य अनुदान विश्वविद्यालय से प्राप्त हुआ। शिविर अनुदान नहीं मिला।

7. वर्ष 1980–81 के दौरान नियमित कार्य :—

वर्ष 1978—79 एवं 1979—80 के समस्त कार्यों को प्रशस्त रूप से सम्पन्न किया गया। 112 नवीन छात्राओं ने नामांकन कराये तथा सोत्साह नियमित प्रवृत्तियों में भाग लिया। 100 से अधिक वृक्ष नए आरोपित किए, पुरानों का संरक्षण किया।

क) शिविर कार्य :—

यद्यपि दो वर्ष से अब तक कैम्पिग ग्राण्ट विश्वविद्यालय से प्राप्त नहीं हुई है, तथापि दो शिविरों का सफल आयोजन किया जा चुका है। दिनांक 14, 15, 16, 30, 31 अगस्त एवं 1 सितम्बर 1980 छ: दिनों पूरे समय के डे-कैम्प कासण्ड़ा—कासण्डी, ककाना, दुभेटा सरगथल, मोई, सांवडी, गामड़ी, महमूदपुर ग्रामों में आयोजित किये गये। जिनमें स्वास्थ्य शिक्षा, स्वच्छता, परिवार कल्याण, शिशु रक्षा कार्यों के अतिरिक्त 693 रोगियों की चिकित्सा सेवा गुरुकुल वाहन (मिनि बस) के द्वारा छात्राओं ने चिकित्सकों एवं कार्यक्रम अधिकारी के निर्देशन में की। इनमें लगभग 500 रुपये की औषधि-वितरण एवं 500 रु० वाहन-व्यय एयं छात्राओं से सम्बन्धित व्यय हुआ है। 42 छात्राओं ने भाग लिया।

ख) नेत्र चिकित्सा शिविर :—

इस का आयोजन दिनांक 4 से 14 सितम्बर 1980 तक कालेज चिकित्सालय में किया गया। जिसमें 50 छात्राओं ने भाग लिया।

नेत्र चिकित्सा शिविर में 1244 बाह्य रोगियों तथा शस्त्रकर्म कराने वाले 44 अन्तरंग रोगियों ने लाभ उठाया। रोहतक मेडिकल कालेज के नेत्र विशेषज्ञों की टीम ने डा० परमार के निर्देशन में कार्य किया। अहर्निश रोगियों का मार्गदर्शन, पंजीकरण,

निरीक्षण, शस्त्र कर्मों में सहयोग, आतुर परिचर्या, भोजन व्यवस्था तथा सभी सेवा एवं प्रबन्ध कार्यों में छात्रा स्वयं-सेविकाओं का अपूर्व योगदान रहा।

उक्त शिवरों में कालेज के शिक्षक वर्ग डा० राम देव, डा० चन्द्रदत्त कौशिक, डा० निक्षिकान्त, डा० राधा मोहन ओझा, डा० स्नेह प्रभा, डा० दयावती डागर, डा० सुशीला भाटिया ने योगदान किया तथा हाऊस आफिसर्स डा० लता वैद्या एवं डा० उपमा त्यागी ने सोत्साह दोनों शिविरों में स्वयंसेवक के कार्य के साथ-साथ छात्राओं को निरीक्षण एवं निर्देशन में सहयोग किया है।

उक्त शिविर का सम्पूर्ण व्यय कालेज द्वारा वहन किया गया। छात्रा स्वयं-सेविकाओं का व्यय भी विश्वविद्यालय से प्राप्तव्य है।

ग) शीतकालीन राष्ट्रीय सेवा एवं आरोग्य शिविर :—

ग्राम मोई माजरा में दिनांक 27 दिसम्बर 1980 से 5 जनवरी 1981 तक आयोजित किया गया। जिसमें 50–60 छात्रा स्वयं सेविकों ने भाग लिया। जिसमें कालेज के सुयोग्य शिक्षिक चिकित्सकों के तत्त्वावधान में स्वास्थ्य सेवा कार्यक्रम (स्वच्छता, रोगों से बचाव, आहार, पोषण, जल-वायु की शुद्धि आदि), परिवार कल्याण एवं शिशु रक्षा, वृक्ष एवं वनौषधि रोपण, संरक्षण एवं उनके रोगप्रतिकार एवं वायु शुद्धि में उपयोग, स्वास्थ्य परीक्षा, रोगी परीक्षा, नेत्र परीक्षा तथा चिकित्सा परामर्श के साथ-साथ यथावश्यक औषधि वितरण द्वारा रोगियों एवं जनता की सेवा की गई।

महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक से अपेक्षित अनुदान मिलने की आशा है तथा सम्बन्धित विभागों एवं राज्याधिकारियों से वांछित सहयोग एवं प्रोत्साहन की अपेक्षा है।

(डा०) अनन्तानन्द
प्राचार्य

(डा०) सुदेव चन्द्र पाराशरी
आचार्य
कार्यक्रम अधिकारी, राष्ट्रीय सेवा योजना

महिला आयुर्वेदिक कालेज, खानपुर कलां (सोनीपत)

ASTHENOPIA

—Dr. S. R. GOEL
M.B.B.S., M.S., D.O.M.S.
Surgeon, M.A.D. College Hospital, Khanpur Kalan

●

Asthenopia means eye strain. This is a most common complaint found specially in young girls. It is felt usually in close-work e.g. reading more or about 20 minutes, knitting, seeing of T. V. or pictures etc etc.

IT'S COMMON CAUSES—

1. Ocular muscular unbalance.
2. Ocular muscular weakness specially converging muscles.
3. Various refractive error.
4. Over work.
5. Nervousness.
6. Ill (poor) health (due to chronic disease).
7. Malnutrition, Leading to multiple defficiencies of Vitamins and minerals.
8. Chronic Alcohalism etc.

SIGNS & SYMPTOMS—

1. Leading to frontal headach.
2 Slight persistent Congestion of eyes.
3. Sometimes Nausea also.
4. Misty Vision.
5. Lacking of interest in studies.
6. Associated symptoms of primary disease.

TREATMENT—

1. Good Nourishing Diet, Multi Vitamins & Minerals like Capsule—Theragram - M, Multivitaplex, Becadexamine etc.
2. Ocular Muscular exercises.
3. Correction of refractory error.

How to give opinion to time passed since Death in P. M. Exam.

—Pofessor Dr. R. M. Ojha,
G. A. M. S.

1. Warmth or Cooling of Body—
   Rectal Temp. (Looses 1 5° F per hour)

2. P. M. Stain— if present, characteristic.

3. Rigor mortis— if present, location.
   if absent, non-development or passing off.
   (by Elec stimulus)

4. Decomposition—if present, its progress.

5. Saponification— 3 wks and Mummification—8 months—1 yr. But as all these variable, on an approximate time given.

6. Degree of Digestion of stomach content.
   Food, rich in Animal protein, leaves stomach 4 - 5 hrs after digesting completely. But a meal consisting mostly of carbohydrate and less protein takes 6 - 7 hrs. But several factors such as shock, coma, severe Inj. to Brain concussion and Hypochlorohydria retards digestion. Sometimes, digestive process may go on for sometimes even after death.

7. Condn. of Bowel & Bladder may also help. Bowel usually emptied in early morning and Bladder before going to Bed. By looking into condn. of these 2 organs—whether empty or filled up, idea may be formed about time of Death of Individual.

8. Nature of Dress helps in certain extent.

Contraception

—Dr. (Mrs.) Kaushal Goel
M.B.B.S., D.G.O.

To lead happy life, one's aim should be to produce healthy children, provide healthy atmosphere and diet, so that their mental and physical growth may be maximum. To achieve this aim one should have his family planned and there should be good spacing.

Methods for Spacing & Family Planning.

A. PERMANENT— Male → Vasectomy
Female → Tubectomy

B. TEMPORARY

Male	Female
Condome	Oral Pills
Coitus interruptus	Diaphragm
Spermicidal Jelly (Delfen Cream)	Loupe insertion
	Copper 'T' insertion
	Long acting Progesteron injection
	Safe days (10 central days of cycle)

IDEAL METHOD should have following quality :-

1. 100 % Effective
2. Easy to implicate
3. Temporary
4. Economical
5. Safe—free from side effects

None of the single method is 100 % successful. One should use combined method to avoid mental strain of accident.

New Year's Day

1st January, 1981

Italian Doctor and Yoga Sadhaks Visit Shakti Aushdhalaya and Ayurved Shakti Ashram, Kankhal – Hardwar

—Prof. Prakash Vir Vidyalankar
Member, Syndicate of Gurukul Kangri University

It was a golden opportunity for the group of one Medical (Herbal) Doctor and four yoga teachers and students to be invited by the kindly founder of the AYURVED SHAKTI ASHRAM to visit his Pharmacy on the evening of 30th December 1980. This group was conducted by Major Ramachandra, the former General Secretary of the Central Bharat Sevak Samaj, New Delhi, who is now living in Europe since eight years. The Italian Group comes from a well-known Seminar and Natural Health and Yoga Training Centre called VILLA ERA, in North Italy mountain area, near MILANO, and the founder of this Institution is Mr. GIORGIO BARABINO, who has come to India many times and who is the leader of this Group.

They first visited the Gurukul Kangri Government Ayurvedic College, Hospital, herbarium, and the big and famous Pharmacy, under the guidance of the Principal Dr. Suresh Shastri. They emerged from the Gurukul Pharmacy and took leave of its Director Dr. Hari Priprakash Ayurvedalankar, the kind welcome was given by Kaviraj Yogendra Pal Shastri to visit his Shakti Aushdhalaya just across the road.

There the very experienced Ayurved Vaidyacharya and his two sons explained their special preparations—Swarnaprabha Vati, Deepani Vati, and Saraswat Vati and Shwasakasari — Taila, which have been prepared from pure Himalyan herbal medicines. They have cured innumerable patients suffering from mental illness and retardation, urinery troubles, asthma and stomach disorders. The ingredients of these special preparations were explained in detail, with their Shastric Formula. The Indian Herbal Director from Milano and the Villa Era Director Mr. Barabino asked many searching questions as to the analysis of these preparations and the effectiveness of their cure. Also, whether these preparations can be used in Western countries, to which they received very satisfying replies. The Villa Era Director has invited the elder son of the Pandit Dr. Harshvardhan Shastri to visit Italy and participate in the Seminar on Ayurveda.

The Director also enrolled the Founder of Shakti Ayurved Ashram as a member of the International Association of Ayurveda and Naturopathy, which has been started in Mr. Villa Era, P. O 13069 Vigliano (VC). North Italy. Also, Dr. Suresh Shastri, the Principal of the Gurukula Kangri Government Ayurvedic College. Then the visitors were entertained by the family of Shri Vaidyaji for a sumptuous Indian dinner and later they called on Dr. Promod Kumar, the Surgeon in the Rishikula Govt. Ayurvedic College and Hospital. Thus concluded the visit of the Indian Group of Herbal Director and Yoga teachers to Hardwar and they expressed their thankfulness to the Governor of the Gurukula University and the Principal and all the staff members of the Ayurvedic College and the Rishikula Ayurvedic College and Hospital. On 1st Jan. 1981, the Group left for Varanasi by train. Those who saw them off at the Railway Station Hardwar, included, Kavi Raj Yogender Pal, Dr. Harsha Vardhan, Prof. Prakash Vir Vidyalankar, Dr. Suresh Shastri and a good number of Students of his Ayurvedic College.

कर्णस्राव की सामान्य चिकित्सा

—उर्मिल गुप्ता
B. A. M. S. (Final)

सिर में चोट लगने, जल में गोते लगाने, कर्ण विद्रधि के पक जाने से वायु दोष से प्रपीड़त (तोद आदि वेदनाओं से युक्त) कान पूय को स्रवित करता है। यह रोग कर्ण संस्राव (Otorrhoea) कहलाता है।

इस रोग के सामान्य उपचार के लिए अपामार्ग बीज, नकछिकनी आदि के नस्य से शिरोविरेचन तथा गुग्गुल आदि द्रव्यों से कान के बाहर-भीतर धूपन और जीवाणु नाशन औषधियों या तैलों से कर्ण पूरण करना चाहिए। त्रिफला कषाय, निम्बादि कषाय अथवा Boric Acid Lotion से कान का प्रक्षालन करें।

लाख, रसोंत एवं राल का महीन चूर्ण कान में डालना प्रशस्त है। क्षार तैल, विल्व तैल, NE-BA-SULF Ear drops, क्लोरोफिनीकोल कर्ण बिन्दु का प्रयोग लाभकारी है। घरेलु दवाओं में चमेली के पत्तों का स्वरस निकाल कर उसमें $\frac{1}{4}$ भाग शहद मिला कर कान में डालने से लाभ होता है। आम या जामुन के पत्तों के रस में शहद मिला कर डालना भी लाभकारी है। रसोंत को स्त्री के दूध में घोल कर डालने से कान का बहना ठीक हो जाता है। सरसों का तैल 1 भाग, द्रव्य हल्दी का कल्क, $\frac{1}{16}$ भाग, गन्धक $\frac{1}{16}$ भाग लेकर धतुरे के पत्तों का रस 1 भाग लेकर यथा विधि तैल पाक करें। इस तैल के प्रयोग से कर्णनाड़ी एवं कर्णस्राव आदि रोग दूर होते हैं।

सल्फाथियोजोल+बोरिक एसिड+आइडोफार्म का कान में अन्तः प्रयोग तथा स्वास्थ्यवर्द्धक आहार-विहार और आधुनिक एण्टीबायोटिक, सल्फाड्रग्स औषधियों का मुख मार्ग से प्रयोग कर्णस्राव रोग में लाभप्रद है।

युवान पिड़का (Pimples) रोग से मुक्ति

—कु० नीरू बत्रा,
बी. ए. एम. एस. (तृतीय वर्ष)

★

मुहासे होने पर उन्हें नोंचना नहीं चाहिए इससे संक्रमण बढ़ता है और निशान पड़ जाते हैं। पेट की सफाई रखनी इस रोग में आवश्यक है। तेलीय त्वचा पर अधिक होने के कारण रुक्ष लेप लगाना चाहिए। चिकनाई का प्रयोग न करें। बाजार में मिलने वाले क्रीम, लोशन, पाउडर हानिकारक हैं। घरेलु दवाओं में लोध, धनिया, बच को पानी में पीस कर रात्रि में मुख पर बारीक लेप करके सवेरे पानी से धो दें, लाभ होता है। गोरोचन, काली मिर्च को नीबू में पीस कर लेप करें। श्वेत सरसों, बच, लोध्र, सेन्धा नमक जल में पीस कर लगाने से सप्ताह में मुहासे जाते रहते हैं। साथ ही वमन भी कराना चाहिए, इससे शोधन कार्य होता है। कलौंजी को सिरके में पीस कर लेप करें और सवेरे जल से धो दें। लालचन्दन, जायफल, केसर, काली मिर्च बराबर लेकर जल में बारीक पीस कर लेप करने से वर्ण कमल सा खिल उठता है। बेर की गुठली का चूर्ण, मुलहठी, कूठ और मसूर को पीस कर लगाने से लाभ होता है। उबलते पानी में नीबू डालकर भाप लेने से पिड़काओं (मेद पिण्डों) का मुख खुल जाता है और वे जड़ से नष्ट हो जाते हैं। मुख दूषिका तथा झाई रोग में उनके उत्पादक कारणों को दूर करना चाहिए और कुशल चिकित्सक की राय से औषधियों का प्रयोग करना चाहिए।

सर्वसर (Stomatitis) रोग की सामान्य चिकित्सा

—आदर्श बैनीवाल,
बी. ए. एम. एस. (फाइनल)

मुख पाक के रोगी को हल्का, पाचक और सौम्य आहार देना चाहिए। यदि विटामिन्स की कमी हो तो उसे पूरा करना चाहिए। कोष्ठ बद्धता दूर करने के लिए हल्का रेचन देना चाहिए। मुख की स्वच्छता की ओर विशेष ध्यान दें। इसके लिए पचपल्लव क्वाथ से गण्डूष करायें। आमलकी और निम्ब पत्र का चूर्ण 2–3 मासे 2–3 बार दें। चमेली के पत्र, गिलोय, मुनक्का, यवासा, त्रिफला और दारुहल्दी समान भाग लेकर इनका क्वाथ बनाकर, उसमें मधु मिलाकर गण्डूष (कुल्ला) करने से लाभ होता है। कट्फल या दार्वी घनक्रिया में मधु मिलाकर मुंह में लगायें। Boroglycerine मुंह में लगाने से भी फायदा होता है। खदिरादि वटी चूसना चाहिए। विशेष उपचार के लिए रोग के कारणों के अनुसार चिकित्सा व्यवस्था करनी चाहिए।

शव संरक्षण
(Preservation of Cadaver)

—कमलेश डाबर
B. A. M. S. (II Prof.)

प्रायः 24 घण्टे के अन्दर शव का संरक्षण कर लिया जाता है।। ऐसा न करने से शव में दूषित परिवर्तन होने लगते हैं। मृत्युत्तर परीक्षण (P.M.) के उपरान्त शव को संरक्षित नहीं किया जा सकता। संक्रामक रोग से मृत हुओं का शव भी संरक्षण के योग्य नहीं होता।

शव संरक्षण से पूर्व कर्म :—

शव के वस्त्र उतार कर उसे कार्बोलिक साबुन लगाकर स्नान कराना चाहिए। इसके स्नान के लिए प्रयुक्त जल में डिटोल आदि नि:संक्रामक मिला दें। फिर सिर तथा अन्य स्थानों के बाल काट देने चाहिएं।

प्रधान कर्म :—

इसमें शव को उत्तान लिटा कर उसकी उर्वी धमनि (Femoral Artery) को Mid inguinal point से निकाल देना चाहिए और उसे धागे से बांध देना चाहिए। फिर उसमें संरक्षण द्रव भर देना चाहिए। द्रव भरने का स्थान कोई भी धमनी हो सकती है। Femoral Artery या Common Carotid Artery में भी संरक्षण द्रव भरा जा सकता है।

संरक्षण द्रव की मात्रा एवं निर्माण विधि :—

संखिया (Arsenic)	—	500 ग्राम
पोटेशियम बाई कार्बोनेट (K_2CO_3)	—	500 ग्राम
एक्वा (H_2O)	—	5 लीटर
फार्मेलीन (Formaline)	...	2 लीटर
फिनोल (Acid Carbolic)	—	½ किलो
ग्लसरीन (Glycerine)	...	1 किलो

संखिया का चूर्ण बनाकर पोटेशियम बाई कार्बोनेट के साथ मिलाकर जल में डालकर गर्म किया जाता है। ½ घण्टा में ये घुल जाते हैं, तब इस द्रव को ठण्डा करके

फार्मेलीन मिला कर छान लिया जाता है और उसमें ग्लसरीन मिला देते हैं। फिर इस द्रव को फिमोरल आर्टरी के सामने की भित्ति को काट कर उसमें प्रविष्ट कराया जाता है। जब फार्मेलीन की गन्ध शव की नासिका और कान से निकलने लगे तथा अंगुलियों के अन्तिम पर्व के अग्रभाग को काटने (भेदन करने) पर द्रव बहने लगे तो यह समझना चाहिए कि संरक्षण द्रव दूर-दूर तक फैल गया है। अन्त में 500 ग्राम फिनोल को $1\frac{1}{2}$ लीटर पानी में घोल कर उर्वी धमनी में लगे कंन्यूला से शव शरीर में प्रविष्ट कर देते हैं।

कभी-कभी संरक्षण द्रव्य शव के नाक. कान एवं गुदा आदि मार्गों से बाहर निकलने लगता है। अतः इन मार्गों में कपड़ा या रूई भर देना चाहिए। प्रथम बार में फिमोरल आर्टरी के नीचे के भाग में द्रव नहीं पहुँच पाता और कई बार लम्बे शव शरीर में द्रव कम पड़ जाता है, तब 4–5 घण्टे के बाद कार्बोलिक एसिड $\frac{1}{2}$ पौंड में पर्याप्त जल मिला कर उस कमी को पूरा किया जाता है। शव संरक्षण के बाद पृथक् कमरे में उसे एक सप्ताह तक रख देना चाहिए ताकि द्रव शरीर की सूक्ष्म धातुओं में शोषित हो जाए। इसके बाद उसमें रंग देने के लिए निम्न घोल पूर्व कथित उसी मार्ग से भरा जाता है :—

स्टार्च (Starch)	4 औंस
रेड लेड आक्साइड (Red lead oxide)	$\frac{1}{2}$ औंस
ग्लसरीन (Glycerine)	$\frac{1}{2}$ पौंड
एक्वा (Water)	2 पौंड

विधि :—

स्टार्च को ग्लसरीन में मलकर मिला देते हैं। फिर उसमें Red lead oxide डालकर खूब घोटते हैं। इसमें यथावश्यक पानी मिला कर अधिक दबाव वाले पम्प में भर कर धमनी में प्रविष्ट करते हैं। इससे धमनियां लाल हो जाती है। इसके बाद शव को ऐसे टंक (Tank) में डाल देते हैं, जिसमें 5% फार्मेलीन का घोल भरा होता है। उसमें 1 औंस कार्बलिक एसिड और थायमोल (Thymol) के कुछ कण भी डाल देते हैं, ताकि शव का Fungus से बचाव हो सके। एक सप्ताह के बाद संरक्षित शव को शवच्छेदन के प्रयोग में लाना चाहिए। अन्यथा शवच्छेदक को अपने उद्देश्यों की पूर्ति मे बाधा उत्पन्न हो सकती है। बिना संरक्षण के शव में दूषित दुर्गन्ध आने लगेगी और अन्त में वह सूखता चला जायेगा और उसमें कीटाणुओं के लगने की सम्भावना होगी। अतः शवच्छेदन से पूर्व शव का संरक्षण अनिवार्य है।

रक्त दान और उसका उद्देश्य

—डा० अनन्तानन्द
प्राचार्य

रक्त उन रोगियों के जीवन में नव जीवन ज्योति प्रदान करता है और उनके जीवन की रक्षा करता है, जिनकी जीवन नौका मंझधार में पड़ जाती है। रक्तदान दूसरों के जीवन के लिए जीवन दान है। यदि आप रक्त दान करते हैं तो आप उन मरीजों के लिए भगवान हैं, जिन्हें रक्त की जरूरत है। जीवन की अनेक दुर्घटनाओं में जैसे—चोट लगना, आप्रेशन करते समय, रक्तस्राव की स्थिति में, बच्चे के जन्म के समय, जल जाने पर और ऐसी सब अवस्थाओं में जहां रक्त की कमी या माता-पिता के रक्त की असाम्यता के कारण किसी का जीवन खतरे में पड़ जाता है इसकी जरूरत होती है। ऐसी अन्य कोई दूसरी वस्तु नहीं है, जो रक्त का स्थान ले सके। रक्त की कमी रक्त देकर ही पूरी की जा सकती है। जीवन का सब से गतिमान आधार है 'रक्त' जिसके बिना जीवन पूर्णतया असम्भव है।

रक्त में संगठन की दृष्टि से लाल रक्त कणिकाएं (R. B. C.), सफेद रक्त कणिकाएं (W. B. C.), प्लेटलैट्स तथा एक तरल द्रव (Plasma) प्लाज्मा होता है। लाल रक्त कणिकाओं का प्रमुख कार्य श्वसन अंगों से प्राणवायु (O_2) को शरीर की समस्त जीवित कोषिकाओं (Cells) में पहुँचाना है और वहां निर्मित कार्बन डाई आक्साइट (CO_2) को श्वसन अंगों तक वापिस लाना है। इसी प्रकार श्वेत रक्त कणिकाओं का प्रमुख कार्य शरीर को रोगों से बचाना तथा संक्रमण से रक्षा करना है। प्लैटलेट्स का प्रमुख कार्य रक्त को थक्का (Clot) बनाने में है। थक्का बनाने की प्रक्रिया रक्त को बहने से रोकती है। प्लाज्मा में मुख्यत: प्रोटीन्स तथा अन्य आवश्यक

तत्व होते हैं। शरीर की जन्तु नाशक शक्ति इसी पर निर्भर है। थक्का बनाने के प्रमुख तत्व भी इसी में होते हैं, जिनमें से अधिकांश प्रोटीन स्वभाव के होते हैं।

किसी भी प्राणी में रक्त का प्रकार (Blood Group) अपरिवर्तनशील है। क्योंकि जीन्स का निर्धारण केवल एक बार होता है। शरीर की समस्त कोषिकाओं में एक ही समान जीन्स होते हैं तथा उनके समान सभी पैतृक गुणों का वहन करते हैं। जीन्स क्रोमोजोम्स की एक इकाई है तथा क्रोमोजोम्स अनुवांशिक गुणों को धारण करने का एक प्रमुख अंश है। भारत में रक्त के प्रकार प्रायः निम्न प्रतिशत में पाये जाते हैं:—

'ओ' ग्रुप 30%, 'ए' ग्रुप 22%, 'बी' ग्रुप 40% तथा ए - बी ग्रुप 8%।

भारत में 9 % लोगों की लाल रक्त कणिकाओं में आर-एच० फैक्टर (Rh factor) पाया जाता है, जिन्हें आर-एस० पोजेटिव कहते हैं, जिन व्यक्तियों में यह अंश नहीं होता उन्हें आर-एच० नेगेटिव कहते हैं। यह भी ब्लड ग्रुप माने जाते हैं। यदि किसी को किसी दूसरे ग्रुप का रक्त गलती से दे दिया जाय तो दिया गया रक्त प्राप्तकर्ता की लाल रक्त कणिकाओं को नष्ट करना आरम्भ कर देता है और उसका जीवन खतरे में पड़ सकता है। किन्तु ऐसी दुर्घटनाएं इसलिए नहीं होतीं, क्योंकि इस प्रकार की पूर्ण जांच के बाद ही एक व्यक्ति का रक्त किसी दूसरे व्यक्ति को दिया जाता है।

रक्त दाताओं से प्राप्त रक्त निश्चित दिनों तक अलग-अलग शीशियों में विशेष रसायनिक पदार्थों में मिलाकर उसे भौतिक तथा जैविक रूप में सामान्य अवस्था में रक्त बैंक (Blood Bank) में रखा जाता है। वैसे तो रक्त की बढ़ती मांग के कारण तीन सप्ताह से पहले ही रक्त की सप्लाई हो जाती है। फिर भी यदि रक्त बच भी जाये तो इसमें से अति कुशल यन्त्रों की सहायता से ग्लोबुलीन, फायब्री-नोजन, गामा ग्लोबुलिन जो कि प्लाजमा के प्रोटीन पदार्थ हैं तथा फ्रोजन प्लाजमा के लिए प्लाजमा निकाल लिया जाता है। वैसे भी अति कुशल यन्त्रों की सहायता से रक्त को विभाजित करके रोगियों के काम में लाया जाता है। जैसे— रक्ताल्पता (एनीमिक) रोगियों में केवल रक्त लाल कणिकाएं आवश्यक हैं। दग्धावस्था (Burns & Scalds) तथा व्रण (Wounds) की स्थिति में प्लाजमा की आवश्यकता होती है। रक्त स्राव (Bleeding) में फायब्रोननोजिन की जरूरत होती है।

कब किस को रक्त की जरूरत आ पड़े, कौन जानता है? पीलिया, मीजल्स और पोलियो की सुरक्षा के लिए इम्युनोग्लोबूलिन, अधिक रक्त स्रावी बीमारियों में

एण्टी हिमोफिलिक ग्लोबुलिन (प्लाज्मा का एक विशेष तत्त्व AHG) की कमी होती है। ऐसे व्यक्तियों में आघात लगने पर रक्त का थक्का नहीं बनता और रक्त का निरन्तर ह्रास जानलेवा बन जाता है, किन्तु इसी तत्त्व को तुरन्त देने से रोगी ठीक हो जाता है।

विषद् एवं विपद् जनक स्थितियों में रक्त तुरन्त दिया जा सके, इसके लिए रक्त को देने के लिए पहले से ही तैयार रखना जरूरी है। हो सकता है किसी दिन आपका जीवन या आपके अभिन्न का जीवन इस अनुपम उपलब्धी पर निर्भर हो सकता है। इस बात की निश्चिन्तता के लिए आप तथा अन्य (जो स्वस्थ हैं) रक्तदान करने से न हिचकें। रक्तदान करने में तुरन्त या बाद में किसी प्रकार का खतरा नहीं है। जितना रक्त दान किया जाता है, प्रकृति उसकी पूर्ति कुछ ही दिनों में शरीर में कर देती है। रक्त दान से असंख्य रोगियों के जीवन की रक्षा होती है। 18 से 45 वर्ष की आयु का कोई भी स्त्री-पुरुष हर तीसरे महीने में रक्त दान कर सकता है। रक्त का अन्य कोई विकल्प नहीं है, जो रक्त के समान कार्य कर सके। इसे केवल मानव शरीर से ही प्राप्त किया जा सकता है। आप भी रक्त दान में सहायोग करें।

Statement about ownership and other particulars about newspaper "SAMAJ SANDESH" to be published in the first issue every year after last day of February.

FORM IV

(See Rule 8)

1. Place of publication ... Gurukul Bhainswal (Sonepat)

2. Periodicity of its publication ... Monthly

3. Printer's Name ... Dharam Bhanu
   Nationality ... Indian
   Address ... Gurukul Vidyapeeth Haryana
   Bhainswal Kalan
   Distt. Sonepat

4. Publisher's Name, Nationality, Address } Same as above No. 3

5. Editor's Name, Nationality, Address } Same as above No. 3

6. Name and address of individuals who own the news paper and partners or share-holders holding more than one per cent of the total capital. } Mahasabha, Gurukul Bhainswal Kalan (Sonepat)

I, Dharam Bhanu, hereby declare that the particulars given above are correct to the best of my knowledge and belief.

(Sd.) DHARAM BHANU
Printer & Publisher
"SAMAJ SANDESH"

Dated : 25-3-1981

वे नर हैं ? नारायण हैं—

★

जो लहू देकर भी अपना
अन्यों को जीवन देते हैं,
जीवन की परवाह न करके
अन्यों की नौका खेते हैं !

दुःख भार पराए जीवन का
जो अपने सिर पर लेते हैं,
जो दीन-हीन-जर्जर जीवन में
आनन्द सरस भर देते हैं !

जो पोंछ परायों के आंसू
प्रतिदान नहीं कुछ चाहते हैं,
अन्यों की खुशियों में जिनके
नित मानस-मोर अघाते हैं !

जो सरस प्रेम की सरिता से
अन्यों का जीवन भरते हैं,
निःस्वार्थ भाव से जनहित में
उपकार नए नित करते हैं !

अमर नहीं यहां पर कोई
पर अमर नाम जो करते हैं,
अपने तन-मन-धन जीवन से
जो भार भूवि का हरते है !

जो मात्र शुभों को वरते हैं
और कर्म न निन्दित करते हैं,
वे नर हैं ? नारायण हैं—
जो मर कर, कभी न मरते हैं !

तुम बनो अरे ! नर, नारायण
शुभ धर्म-कर्म में पारायण,
कण - कण हर्ष - हर्ष भूमे
शुभ श्रेष्ठ करो नर-नारायण !!

—डा० चन्द्र दत्त कौशिक
विशिष्ट सम्पादक 'आयुर्ज्योति'

व्यवस्थापक श्री धर्मभानु गुरुकुल भैंसवाल ने नेशनल प्रिंटिंग प्रेस, रोहतक में छपवाकर
कार्यालय समाज सन्देश गुरुकुल भैंसवाल (सोनीपत) से मुद्रित तथा प्रकाशित किया ।
Regd. No. P / RTK-21

ॐ

समाज सन्देश

(हिन्दी मासिक-पत्र)

सांस्कृतिक, सामाजिक व साहित्यिक लेखों का संगम

प्रकाशन तिथि : 25 मार्च, 1982

वर्ष 22 ❀ मार्च / अप्रैल, 1982 ❀ अंक 11/12

हुतात्मा शहीद श्री भक्त फूल सिंह जी

मूल्य : प्रति 1.25 रु. वार्षिक चन्दा 10 रुपये

इस अंक में—

समाज सन्देश में छपे विचारों से हमारा सहमत होना या न होना आवश्यक नहीं। समाज सन्देश में हर व्यक्ति चाहे वह किसी भी मत से सम्बन्ध रखता हो अपने लोकहितकारी विचार अथवा लेख प्रकाशनार्थ भेज सकता है। उसकी मौलिकता [illegible] स्वयं उत्तरदायी होगा।

—सम्पादक

लेख भेजने तथा अन्य विषयक पत्र व्यवहार का पता :—

धर्म [illegible]

प्रकाशन प्रबन्धक

C/o नेशनल प्रिंटिंग प्रेस, झज्जर रोड, रोहतक फोन : 2662

गुरुकुल विद्यापीठ हरियाणा भैंसवाल कलां
जिला सोनीपत

❁ प्रवेश सूचना ❁

सब सज्जनों को यह जान कर प्रसन्नता होगी कि गुरुकुल भैंसवाल में जून मास में तथा 15 जुलाई तक प्रवेश होगा।

आप अपने बच्चों को यहां प्रवेश दिलवावें क्योंकि :

1. गुरुकुल कांगड़ी की विद्यालंकार डिग्री का प्रबन्ध है, जिसके पास करने के बाद छात्र किसी भी यूनिवर्सिटी से M. A. और LL. B. आदि परीक्षा दे सकता है।
2. विद्याधिकारी—दशम कक्षा उत्तीर्ण करने के बाद किसी भी यूनिवर्सिटी के किसी भी कालेज में छात्र प्रवेश ले सकता है।
3. ग्यारहवीं (विद्याविनोद) प्रथम वर्ष पास करने के बाद छात्र आयुर्वेद कालेजों में प्रवेश ले सकता है।
4. विद्याधिकारी करने के बाद किसी भी विश्वविद्यालय से शास्त्री में बैठ सकता है।

गुरुकुल का जीवन सादा, शान्त तथा तपस्यामय है। यहां छात्र नगर व गांव की अनेक बिमारियों धूम्रपान तथा अन्य नशाखोरी से बचा रहता है।

वैदिक गुरुकुल पद्धति तथा पब्लिक स्कूल का जीवन, समान भोजन छादन तथा समान रहन-सहन है।

गुरुकुल सुन्दर, शान्त वातावरण में स्थित है। यह स्थान गोहाना, सोनीपत, रोहतक, देहली आदि स्थानों से बस आने के कारण हरियाणा तथा बाहर के प्रत्येक स्थान से बस से जुड़ा है।

अपने बच्चों को ऐसे स्थान में प्रवेश दिला कर लाभ उठाइए। स्थान सीमित हैं। प्रवेश के लिए तुरन्त सम्पर्क करें।

धर्म भानु

आचार्य,

गुरुकुल विद्यापीठ हरियाणा भैंसवाल कलां (सोनीपत)

बन्धुआ मज़दूरों के प्रति सामाजिक व नैतिक दायित्व

★

पाठक वृन्द आज के सामाजिक व राजनैतिक ढांचे में नेतिक मूल्यों के अभाव को अनुभव किया जा रहा है। राष्ट्रीय स्तर पर नैतिक शिक्षा पर जोर दिया जा रहा है। प्रत्येक राजनीतिक दल मानव समाज के कल्याण का दम भरते हुए अपनी-अपनी नीतियों के प्रचारार्थ हजारों टन साहित्य प्रकाशित कर रहा है। यह क्रम वर्षों से चला आ रहा है।

कहने को तो हम स्वतन्त्र देश के नागरिक हैं लेकिन स्वतन्त्र देश में भी यदि बन्धुआ मजदूर जैसी समस्याएं मौजूद हों तो क्या हम ऐसी स्वतन्त्रता पर गौरव कर सकते हैं? समाचार पत्रों के माध्यम से बन्धुआ मजदूरों के समाचार मिल रहे हैं। सर्वेक्षण भी हुए हैं जिससे पता चलता है कि न केवल भारत में अपितु अन्य कई देशों में भी बन्धुआ मजदूर हैं। भारत के महान सुधारकों एवं राजनीतिज्ञों ने मानव कल्याण के लिए बड़े-बड़े त्याग किए हैं। 'सर्वेभवन्तु सुखिन:' हमारा उद्देश्य रहा है इसलिए मैं समझता हूँ कि भारत में बन्धुआ मजदूरों जैसी समस्या होना एक शर्म की बात है।

इस सन्दर्भ में मैं पाठकों की जानकारी के लिए यह बताना जरूरी समझता हूँ कि सरकारी तौर पर कानून में बन्धुआ मजदूरों की समस्या के समाधान का प्रावधान है। सन् 1977—78 में उपरोक्त समस्या के हल के लिए एक कानून बना जिसे हरियाणा सरकार भी पास कर चुकी है। इस कानून का नाम है "इन्टर स्टेट माइग्रैन्ट एक्ट 1980" इसके तहत उत्तर प्रदेश, राजस्थान, मध्य प्रदेश, बिहार, महाराष्ट्र, तामिल नाडू, आन्ध्र प्रदेश या किसी भी अन्य राज्य से जो मजदूर हरियाणा में काम के लिए लाये जायें या जिस किसी जमादार व मालिक के पास पांच या पांच से अधिक ऐसे मजदूर काम करेंगे उन्हें निम्नलिखित सुविधाएं अवश्य देनी पड़ेंगी—

1. जो जमादार उन्हें लायेगा उसे हरियाणा में तो अपना रस्ट्रिेशन कराना ही पड़ेगा, जिस प्रान्त से भी लाएगा वहां की सरकार से भी उसे लाइसेन्स प्राप्त करना पड़ेगा।

2. हर मजदूर की एक पास बुक जमादार बनाएगा। जिसमें मजदूर का एक पासपोट साइज का फोटो भी होगा। जमादार उस पासपोर्ट में उन बातों को मजदूर की प्रान्तीय भाषा में व हिन्दी में दर्ज करेगा इस पासबुक में उसे यह दर्ज करना पड़ेगा कि (1) किस जगह पर और किस मालिक के भट्ठे या खदान पर उसे मजदूरी दी जाएगी। (2) कितने दिनों के लिए काम मिलेगा ? (3) रेट क्या होंगे व मजदूरी हर सप्ताह मिलेगी या हर महीने ? (4) उसको घर से दूर ले जाने का भत्ता ? (5) उसका काम खत्म होने पर उसे वापसी किराया कितना दिया जायेगा ? यह पासबुक बनाना तथा इसे मजदूरों के पास रखवाना, जमादार की जिम्मेदारी होगी।

3. किसी भी ऐसे प्रवासी मजदूर को किसी भी हालत में हरियाणा सरकार द्वारा निर्धारित न्यूनतम वेतन से कम नहीं दिया जायेगा। उदाहरण के लिए उसे काम दिया जाए या न दिया जा सके, हर हालत में मालिक उसे 9-25 रुपये रोज के हिसाब से देगा ही देगा।

4. वेतन के अलावा दूसरी फैक्टरियों में काम करने वाले मजदूरों को जो छुट्टियां मिलती हैं और उनके काम करने के जो घण्टे हैं और काम करने की जो सुविधाएं उन्हें मिलती हैं वे सब भट्ठों पर तथा खदानों में या खेतों में काम करने वाले मजदूरों को दी जायेगी। प्रवासी मजदूर को उसका वेतन 'नकद ही' दिया जाएगा।

5. जब भी कोई जमादार या कन्ट्रेक्टर दूसरे राज्य से मजदूर लगाएगा तो प्रत्येक मजदूर को अलग-अलग डिस्प्लेसमैंट अलाउन्स देना पड़ेगा। यह घर से दूर जाने का भत्ता उस मदूर की एक महीने की जितनी तनख्वाह बनती है उसका आधा होगा। अथवा कम से कम 75 रुपया होगा। उदाहरण के लिए—मान लीजिए कि एक मजदू की तनख्वाह एक महीने की 500 रु० निश्चित की जाती है तो उसे उसके प्रान्त से दूसरे प्रान्त में ले जाने के लिए 250 रुपये भत्ते के रूप में देने पड़ेंगे। यदि किसी वजह से उसकी मासिक तनख्वाह बहुत कम निश्चित की जाए तो कम से कम प्रति मजदूर 75 रु० तो भत्ता देना ही पड़ेगा। यह भत्ता स्त्री, पुरुष व बच्चे सबका अलग-अलग होगा।

6. प्रत्येक मजदूर को उसके रहने-सहने के लिए मालिक के द्वारा साफ-सुथरे मकानों की व्यवस्था करनी होगी। मकान के अलावा उसके पीने के पानी और उसके बीमारी की दवाई आदि की मुफ्त में व्यवस्था करनी होगी।

7. जितना समय मजदूर को अपने गांव से उठकर काम के जगह पर पहुँचने में लगता है उतने समय का वेतन ही मालिक ही को देना होगा।

8. खास तरह के काम के लिए खास तरह के कपड़े भी मालिक को ही देने होंगे।

9. मजदूरों के बच्चों की पढ़ाई के लिए वहां इन्तजाम करना होगा।

10. जो बच्चे स्कूल जाने योग्य नहीं हैं, उनके लिए उनको खेल खिलाने के लिए आया और दाई की तथा खिलौनों का प्रबन्ध मालिक को करना होगा।

11. हर मजदूर को हर महीने उसका पूरा हिसाब करके उसका जितना पैसा बनता है उसे दे देना होगा। यदि जमादार बीच में पड़ कर मजदूरों का पूरा वेतन न दे अथवा उसकी मजदूरी में से अपना कमीशन काटने लगे तो इसके लिए मालिक सीधे जिम्मेदार होगा।

12. इस कानून के तहत मजदूरों के लिए और एक बड़ी सुविधा दी गई है यदि किसी मजदूर को पेशगी देकर काम पर लाया जाता है या काम करने के वक्त उसे कोई उधार दिया जाता है और जब उसके काम का सीजन खत्म हो जाता है फिर भी मजदू के नाम पर कोई 'टूट' बाकी रह जाती है तो ऐसी टूट माफ समझी जाएगी। कहने का मतलब यह है कि चाहे मजदूर को कितनी भी पेशगी दी गई हो या कितना भी कर्ज़ दिया गया हो, आठ महीने का सीजन खत्म होने के बाद मालिक उससे उसकी मजदूरी का हिसाब में काट सकता है लेकिन जैसा कि प्राय: मालिक लोग मजदूरों से झूठे कोरे कागजों पर अंगूठे लगा कर और मजदूरी उल्टा, सीधा कम बताकर उल्टा मजदूर के नाम पर ही पैसे निकालते हैं और मजदूर को किसी और मालिक से टूट भरने पर ही कहीं जाने देते हैं, यह सब कानून की दृष्टि से गलत समझा जाएगा। सीजन खत्म होने पर चाहे कितना भी रुपया बकाया हो सारा का सारा रद्द समझा जाएगा।

13. सीजन खत्म होने के बाद हर मजदूर का यह मौलिक अधिकार है कि वह अपने गांव वापस जाए। यदि कोई मालिक या कोई जमादार अथवा कांट्रेक्टर मजदूर को या उसके परिवार के किसी भी सदस्य को गांव वापस जाने से रोके तो ऐसा करना मजदूर को बन्धुआ बनाना माना जाएगा और ऐसे मालिक "बन्धुआ मुक्ति कानून 1976" के तहत जुर्म करने वाले अपराधी माने जायेंगे और उसके खिलाफ थाने में अथवा मजिस्ट्रेट के सामने मुकदमा दर्ज किया जा सकेगा।

सरकार द्वारा बनाये गये इस कानून के लागू करने से भट्ठों पर या खदानों में

काम करने वाले उन मजदूरों का कल्याण हो सकता है जो वर्षों से कोल्हू के बैल की तरह सपरिवार काम में जुटे रहते हैं। न मकान है और न तालीम और न चिकित्सा का प्रबन्ध। सरकार ने जिस भावना से उक्त कानून बनाया उसे लागू कराने में हम सब का नैतिक व सामाजिक दायित्व हमें पुकारता है। उन मजदूरों के बच्चों को तभी शिक्षा एवं चिकित्सा सुविधायें प्राप्त हो सकेंगी जब हम अपना नैतिक कर्तव्य समझ कर उपरोक्त कानून के रास्ते में आने वाली रुकावटों को दूर करने में सहयोग प्रदान करेंगे। इस पुनीत कार्य में भट्ठा मालिकों की थैलियां सब से बड़ी रुकावट है और इस रुकावट को दूर करने का एक मात्र तरीका है सामाजिक दबाव। और सामाजिक दबाव के लिए दलगत राजनीनि से दूर रह कर शोषित मजदूरों के लिए प्रशासन को चुस्त करना।

अभी कुछ ही दिनों पहले जिला स्तर पर बन्धुआ मजदुरों की समस्या के लिए समितियां गठित की गई हैं जो जिला उपायुक्त को समय समय पर अपनी रिपोर्ट देंगी। रोहतक जिला समितियों का निर्माण किया जा रहा है उनमें अच्छे स्तर के व्यक्तियों का अभाव पाया गया है अलबत्ता उपमण्डल स्तर की समितियों में कुछ व्यक्ति उच्च स्तर के भी हैं। कुल मिला कर एक अभाव यह भी दिखाई दिया कि, दलित वर्ग संघ, हरिजन सेवक संघ, पिछड़ा वर्ग संघ, बाल्मीक सभा और धानक सभा इत्यादि सामाजिक संगठनों को भी प्रतिनिधित्व दिया जाता तो अच्छा रहता क्योंकि उपरोक्त संगठनों का सीधा सम्बन्ध उन वर्गों से है जिनमें बन्धुआ मजदूर बनाये जाते हैं।

उपरोक्त कमेटी की सब से महान उपलब्धि यही हो सकती है यदि वह इन्टर स्टेट माइग्रेन्ट एक्ट 1980" द्वारा प्रदान की गई सुविधाएं दिलवा सकें।

—सम्पादक

समाज सन्देश के पाठकों की सेवा में नम्र निवेदन

हमने गत मास विद्वान् लेखकों से प्रार्थना की थी कि हमें विद्वान् लेखकों के लेखों की आवश्यकता है। हमने प्रयास किया है कि सभी के लेखों की लेखमाला प्रकाशित की जावे। यदि कोई एकाध लेख शेष रहा है तो वह अग्रिम अङ्क में प्रकाशित होगा। अगला अङ्क एक विशेषाङ्क के रूप में होगा। सम्भवतः यह अङ्क **"उपनिषद विशेषाङ्क"** होगा। आपसे पुनः धार्मिक लेखों के लिए अपील की जाती है। आशा है लेख अवश्य भेजेंगे।

सधन्यवाद !

विनीत :—
धर्म चन्द शास्त्री

अमृत-तत्व

—वीरेन्द्र विद्यालंकार

नैसर्गिक ही बुराई का प्रभाव शीघ्र होता है, अपेक्षाकृत भलाई के। कारण यह है कि बुराई के मूल में आनन्द का अभाव होते हुए भी तात्कालिक सुख या आनन्द की प्रतीति होती है और नेकी में कुछ कष्ट सा लगता है, पर यथार्थ यह है कि बुराई के विपाक काल में रोना पड़ता है और भलाई के विपाक में दिव्यमयी शान्ति का निवास है।

तुच्छ बुद्धिमानव इस क्षणिक झूठे सुख में विलास पूर्वक क्रीड़ा करता हुआ वास्तविक आनन्द से हाथ धोकर आत्मपतन का पथ खोज निकालता है। फिर वह तत्सम्बन्धित करुण क्रन्दन से अनवरत विलपता रहता है। बालक का मन मृदु नीलोत्पलज पल्लव सा कोमल होता है। माता पिता पुत्र को घर से विद्याध्ययन के निमित्त विद्यालय में भेजते हैं; किन्तु वह दुष्ट मित्रों के संसर्ग से कुत्सित आदतों में फंस बैठता है। जिसके दुष्परिणाम से समस्त आयु वह पीडित ही रहता है। क्या ही अच्छा हो! यदि विद्यालयों में विद्यार्थी पावन जीवन व्यतीत करें, तो वे सारी उम्र आनन्द भोगें, नहीं तो जो दुर्दशा है वह स्पष्ट है। वे न कार्यालयों में काम कर सकते हैं और न ही गृहस्थयान के सफल पान्थ हो कर अपने यान को लक्ष्य पर पहुँचा सकते हैं। यही कारण भारत की शारीरिक आत्मिक दशा गिरने का विशेष है।

व्यभिचारी मनुष्य अपने 'अमृत-तत्व' की रक्षा नहीं करते और वे यावज्जीवन दुःखाकुल रहते हैं। वे न सामामजिक कार्य कर सकते हैं और न धार्मिक ही। यह 'अमृत-तत्व' जिसका महत्व आज का युवक समाज नहीं समझ रहा है—कि एक बून्द रक्त की सौ बून्दों के सम है। जो हम खाते हैं सबसे पूर्व उसका रस, फिर रस पकने पर रक्त, रक्त से मांस, मांस पककर जो निकले वह चर्बी, चर्बी से हड्डी, हड्डीसार से मज्जा और मज्जा सार से यही अमृततत्व बनता है। यही रत्न जिससे हमें मनुष्य कहलाने का अधिकार है, इसके न होने से मनुष्य में मनुष्यत्व नहीं। इसकी प्रशंसा में वाणी विराम लेने की अभ्यस्ता नहीं है। सदाचारी पूर्णतया लाभान्वित हो जाता है, लेकिन दुराचारी मनुष्य

वास्तविक जीवन एव स्वास्थ्य लाभ प्राप्त नहीं कर सकते। उनकी ग्रायु छोटी हो जाती है। जो छोटी उम्र में सम्भल जाते हैं वे युवावस्था के उत्तरकाल में ग्रसीम ग्रानन्द को प्राप्त करते हैं। ग्रत: इस 'ग्रमृत-तत्व' की रक्षा करके ग्रमृत कलश बनो। मन को कुत्सित वासनाग्रों से रोको। प्रिय विद्यार्थियो ! प्रिय युवको ! वासना मलिन हृदय-विद्यार्थियों का सम्पर्क कभी भी हित में नहीं हो सकता। कामोत्तेजक थियेटर सिनेमा मत देखो, ग्रश्लील साहित्य भी नैतिक उत्थान में बाधक है। जब मन में बीभत्स कलुषित वासनाएं शयन करें तो उठ कर टहलने लग जाग्रो। ईश्वर को याद करो। इस प्रकार कलुषित मान्यताग्रों का परित्याग करके ईश्वर की परीक्षा में उत्तीर्ण होग्रो, फिर बढ़ेगा पुरुषत्व।

डा० फिट महोदय लिखते हैं कि ग्रमृत-तत्व (वीर्य) सर्वोन्मुखी विकास कर मनुष्य को दृढ़ एवं सुडौल बनाता है।

डा० हालर महोदय ग्रपने विचार केन्द्रित करते हैं कि इससे वाणी में कोमलता तथा तेजस्विता ग्रा जाती है।

क्षमा करें, जिसको जीवित ही मुर्दे के समान होना है, तंग होता है, स्वास्थ्य, सदाचार एवं सुन्दरता को जवाब देना है उसे ही दुराचार की राह पकड़नी चाहिए।

किन्तु सावधान ! ऐसे मनुष्यों को दुर्बलता, क्षय रोग, मिरगी, शून्यता, पागलपन, नेत्र-दुर्बलता, पेशाब-दोष, रात्रि दोष, कमर दर्द, धड़कन, दमा, गुर्दे का दर्द, जिगर दर्द, सुस्ती, उदासी, नपुंसकत्व, विचारों का दूषित होना, सिर-दर्द, नजला, क़ब्ज, गठिया, ग्रांखों के रोग ग्रादि रोगों में से प्राय: ग्रा दबाते हैं।

ग्रमेरिका के एक बड़े धनिक का पुत्र तथा पादरी का पुत्र भी जो पागल हो गए थे—केवल दुराचरण के कारण ही।

डॉ० पाइनल एक मूर्तिकार के विषय में लिखते हैं कि वह ग्रपनी समस्त योग्यता दुराचरण में फंस कर खो बैठा ग्रौर पागल हो गया।

डॉ० टिस्ट एक घड़ी बनाने वाले की एक शिक्षा से प्रबुद्ध करते हैं कि वह ग्रत्यन्त योग्य एवं स्वस्थ था। 17 वर्ष की ग्रायु में वह बुरी ग्रादतों में पड़ गया। मस्तिष्क में इतनी निर्बलता ग्राई कि वह कुछ काल तक ग्रचेत सा हो जाता, सिर पीछे को गिर जाता, गर्दन फूल जाती, शनै: शनै: रोग ने भयंकर रूप धारण किया ग्रौर वह 8 से 12 घंटे तक ग्रचेत रहने लगा, खाना-पीना सम्भव न रहा, मानो मृत हो, मुंह

पीला हो गया, मुंह से पानी आता, नाक से खून और पेचिश का रोग। श्वास भी तंग हो गया और वह असह्य दुःख उठा कर देखने वाले भोले भालों को सावधान करके संसार से चल बसा।

डॉ० जबर मैन तथा डॉ० लैण्ड ने भी इस विषय में स्वविचार दिए हैं कि ऐसे ही कई रोगीं मृत्यु ने अपने कराल-मुख में जकड़ लिए।

डॉ० एक्टन दुराचार-ग्रस्त व्यक्ति के ये चिह्न बताते हैं—पीला, दुबला और एक भयानक सी पतली आकृति का हो जाता है। आंखें अन्दर को धंस जाती हैं और पुतलियां फैल जाती हैं, कायरता आ जाती है, व्यक्ति के साथ आंख नहीं मिला सकता। शर्मीला तथा एकान्त प्रेमी हो जाता है। पीले मुख का, आलसी, निर्बुद्धि, नपुंसक, झुकी हुई कमर का और स्मरण-शक्ति से च्युत हो जाता है।

डॉ० हॉफ मैन महोदय स्पष्ट करते हैं कि दुराचारी को सिर व कमर में दर्द, अत्यन्त बेचैनी, पागलपन, मस्तिष्क में चक्कर, अनिद्रा, भयंकर स्वप्नों का आना आदि विभिन्न-दोष अपने निष्ठुर-पंकों में जकड़ लेते हैं।

प्यारे युवको ! अधिक क्या लिखूं ? 'मातृवत् परदारेषु' का पाठ सदैव स्मृति में रखो। इस अमृतत्व की रक्षा में तनिक उपेक्षा मत करो। जो सदाचारी हैं, उनकी यशोदुन्दुभि से दिग्दिगन्त गुञ्जरित होंगे। वही आदर्श लोकनायक तथा लोकप्रिय होगा। उसके पद-रज-कण किसी के मस्तक-तिलक होंगे तथा उसका जीवन-चरित्र किसी लेखक की लेखनी का प्रिय-विषय।

अमूल्य वचन—

❀

★ धर्म का सम्बन्ध सचाई और ईमान से है, दिखावे से नहीं।

—प्रेम चन्द

★ आदमी की आदमियत तभी कसौटी पर कसी जाती है, जब वह रुपये के सम्पर्क में आता है।

—शरत् चन्द्र

★ स्वार्थ में ही मनुष्य सुनहले किन्तु यथार्थ स्वप्नों का आगार देखा करता है।

—वीरेन्द्र विद्यालंकार

कहानी—

अभिशाप

—कर्मपाल विद्याविनोद

★

(1)

आज सायंकाल अस्पताल से आने के बाद डाक्टर वेद थकावट के कारण 'ड्राईंग रूम' में जाने की अपेक्षा सीधा अपने 'शयन कक्ष' में जाकर पलंग पर लेट गया। लेटे-लेटे वह विचारमग्न हो गया, सम्भवत: वह आज के अतीत पर दृष्टिपात कर रहा था कि अचानक किसी ने उसके कमरे का द्वार खटखटाया, जिससे उसके विचारों का क्रम टूट गया। लेटे-लेटे झुंझलाकर उसने पूछा—'कौन ?' बाहर से आवाज आई—'डाक्टर बाबू ! मैं आप ही के शहर की एक अबला हूँ। घर पर मेरी जवान लड़की बीमार है उसकी दवा-दारू करनी है। इसी लिए मैं आपके पास आई हूँ। डाक्टर मन ही मन सोचने लगा जब देखो कोई न कोई आया ही रहता है। मेरी लड़की बिमार है, मेरा बच्चा बिमार है, मेरी मां बीमार है, एक पल को भी विश्राम नहीं। और तो और रात को भी पीछा नहीं छोड़ते। ऐसा कोई मैं मशीन तो हूँ नहीं, जो रात दिन बीमारों को ही देखता रहूँ। फिर एक लम्बी सांस छोड़ कर पलंग पर लेटा-लेटा बोला—'मेरे पास अब समय नहीं है, सुबह अस्पताल में लेते आना वहीं उसको देख कर दवाई दूंगा।'

यह सुनकर उस औरत का धैर्य टूट सा गया और रोती हुई करुण स्वर में बोली, 'प्लीज़ डाक्टर ! प्लीज, मुझ पर दया करो, मैं तुम्हारे आगे हाथ जोड़ती हूँ। मेरी एक ही लड़की है जो इस समय घर पर बेहोश पड़ी है। आप उसको बचा लीजिए, बचा लीजिए, डाक्टर ! वरना मैं बर्वाद हो जाऊंगी।' यह सुन कर उसके पत्थर-दिल में बैठे एक इन्सानी दिल जो कि मानवता का पुजारी होता है ने प्रेरणा दी कि वेद ! एक औरत रात को तेरे द्वार पर आ, गिड़गिड़ा कर तेरी मिन्नतें कर रही है और तू यहाँ पलंग पर पड़ा पड़ा उसे सुबह आने को कह रहा है। तुझे मालूम है कि उसके दिल पर क्या बीत रही है ? उठ, दरवाजा खोल और उसके साथ जाकर उस लड़की की

रक्षा कर, यही तेरा कर्तव्य है। कर्तव्य-पालन ही इन्सान का धर्म है। वेद अपने पलंग से उठा और किवाड़ खोल कर पूछने लगा—'क्या बीमारी है उसे ?' औरत अपनी दृष्टि नीचे झुकाए भर्राई हुई आवाज में बोली—'डाक्टर बाबू ! मैं क्या जानूं ? मुझे तो बस इतना पता है कि वो इस समय बेहोश पड़ी है। आप वहीं चलकर उसे देख लीजिए। डाक्टर ! मैं आपका एहसान जिन्दगी भर नहीं भूलूंगी।'

डा० वेद ने अपना दवाइयों का बेग लिया और पास खड़ी कार में उस औरत को साथ लेकर उसके घर की ओर चल दिया। उसके घर पहुँच कर डा० वेद ने उसका चैक-अप किया, जिससे ज्ञात हुआ कि उसने कोई जहरीली वस्तु खा ली है जिससे बेहोशी आ गई। डाक्टर ने उसे इन्जैक्शन किया और माथे पर गीली पट्टी रखवा कर पास पड़े पलंग पर बैठ कर सोचने लगा—ऐसी कौनसी परिस्थिति इस लड़की के सामने आई है जो इसने इतना तीव्र विष खाकर हत्या करने का प्रयास किया है। फिर मन ही मन स्वयं को धिक्कारने लगा कि आज तूं नहीं आता तो इस लड़की की मौत का जिम्मेदार तूं होता और यह औरत आजीवन तुझे कोसती रहती। ऐसा विचार क्रम चल ही रहा था कि अचानक उस लड़की की मां बोल उठी—'डाक्टर बाबू ! मेरी बेटी ठीक हो जायेगी ना।' वेद कुछ सोच कर बोला—हां ! ठीक हो जायेगी। उस औरत ने फिर पूछा—'इसे क्या हो गया था डाक्टर बाबू ?' वेद वास्तविकता को छुपाते हुए बोला—कुछ नहीं, खाने के साथ कोई विषैली वस्तु खाई गई जिससे बेहोशी आ गई। यदि मैं ना भी आता तो भी यह ठीक हो जाती। घबराने की कोई बात नहीं।

फिर दोनों लड़की के चेहरे की तरफ देखने लगे। करीब सवा घण्टा बीत गया उस बेहोश शरीर ने कोई प्रतिक्रिया नहीं की। डा० वेद भी इससे कुछ चिन्तित सा हो गया। परन्तु थोड़ी ही देर बाद लड़की ने आंखें खोल दीं और धीरे से बोली, मां ! उसकी मां आनन्द विभोर हो दौड़ कर अपनी लाडली से लिपट कर डाक्टर वेद और परमात्मा का धन्यवाद करने लगी।

डा० वेद खड़ा इस कार्य-कलाप को देखता हुआ विचार करने लगा कि मेरे कारण ही इस औरत की सारी खुशियां लौट आई। यदि मैं आज आकर इस लड़की को ना बचाता तो भगवान मुझे कभी क्षमा नहीं करता। अच्छा हुआ मैं आ गया। फिर उस औरत को सम्बोधित करके बोला, मां जी ! ये दवाई एक घण्टे बाद दे देना, मैं सुवह दोबारा देखने आऊंगा। उस औरत ने दवाई अपने हाथ में लेते हुए कहा—'डाक्टर बाबू ! आपकी फीस और दवाइयों के पैसे।' डाक्टर ने चलते-चलते कहा—सुबह देखेंगे। और कार में बैठ कर अपने फ्लैट की ओर रवाना हो गया। रास्ते में सोचने लगा आज

मैंने अपनी जिन्दगी का सबसे बड़ा कार्य किया है जो एक अबला के दुःखी जीवन को पुनः सुखमय कर दिया। इतने में उसका फ्लैट आ गया। कार को पार्किंग में खड़ी कर शयनकक्ष में जाकर सो गया। प्रातः जब उठा तो उसने स्वयं में एक अद्भुत आनन्द का अनुभव किया जो जीवन में पहली बार ही हुआ था। उसे दुःख था तो बस केवल एक बात का कि ज्योति ने विष खाया तो क्यों खाया।

× × × × +

(2)

सुबह डा० वेद जब उसके घर पहुँचा तो वह औरत दरवाजे पर उसका इन्तजार कर रही थी। उस औरत ने वेद के हाथ से बैग लिया और उसी कमरे में ले गई जहां जहां वह लड़की सो रही थी। डाक्टर वेद पास के पलंग पर बैठ बया। उस औरत ने सो रही अपनी लड़की के पास जाकर कहा—'ज्योति बेटा उठो, देखो! डाक्टर बाबू तुम्हें देखने आए हैं। ज्योंही ज्योति आवाज सुन कर उठी, उसकी नजर डाक्टर वेद पर पड़ी। देखते ही उसे ऐसा अहसास हुआ जैसे उसने वेद को पहले भी कहीं देखा है। फिर उसने अपने दिमाग पर जोर दिया तो उसे याद आ गया। याद आते ही वह शीघ्रता के साथ पलंग से उठती हुई बोली, नमस्ते डाक्टर साहब! वेद ने उसे पलंग पर बैठने का संकेत किया और पूछा—अब आपका स्वास्थ्य कैसा है। ज्योति ने कहा—'ठीक ही है।' डाक्टर वेद ने अपने बैग से दो-तीन गोलियां निकाल कर कागज में लपेटते हुए कहा एक-एक घण्टे बाद लेते रहना, जिससे विष का प्रभाव जोकि सारे शरीर में फैल चुका था सम्यक्तया दूर हो सके।

विष का नाम सुनते ही ज्योति के सारे बदन में आग लग गई। और उसने चिल्लाकर कहा—'नहीं डा० वेद! मैं यह गोलियां नहीं खाऊंगी।' वेद, ज्योति के मुख से अपना नाम सुन कर हैरान रह गया और कुछ सोच कर ज्योति की मां से बोला, आप चलकर चाय बनाइए मैं इसको कुछ समझाता हूँ। उसके जाने के बाद डा० वेद ने पूछा आपने मेरा नाम कैसे जाना। उसने उत्तर में कहा—डाक्टर साहब! जब मैं बी०ए० प्रथम वर्ष में थी तब हमारे कालेज में एक 'रक्तदान' कैम्प लगा था जिसमें मैंने भी रक्त दान किया था उसमें आप भी आये हुए थे तभी आपसे परिचय हुआ था कि आप मैडिकल कालेज में पढ़ते थे।"

अच्छा ज्योति जी आप नाराज न हों तो मैं आपसे एक बात पूछने को गुस्ताखी कर सकता हूँ कि आपके समक्ष ऐसी कौनसी कठिन परिस्थिति आई जिसने

आपको विष खाकर आत्म-हत्या के लिए बाध्य किया। रोते हुए ज्योति कहने लगी— डाक्टर साहब मत पूछो, इसकी कहानी बड़ी दर्दनाक है। इसे मेरे तक ही सीमित रहने दो। इस उत्तर ने वेद को इस घटना को पूर्णतया जानने के लिए और भी ज्यादा उत्सुक बना दिया। वह बोला— ज्योति निःसंकोच होकर कहो, जहां तक हो सका मैं इस विपत्ति को दूर करने का दिलो-जान से प्रयत्न करूंगा। ज्योति आंखो से आंसू पूछती हुई कहने लगी—वेद ! तुम किस-किस के कष्टों को दूर करोगे। न जाने मुझ जैसी कितनी ही युवतियां हर वर्ष इन धन के ठेकेदारों की काली-करतूतों के कारण नदी, तालाब और कूओं में छलांग लगा कर आत्म हत्या का शिकार बनती हैं या मेरी तरह जहर खा अपने आपको समाप्त कर लेती हैं।

वेद कुछ अनमने भाव से बोला मैं आपका आशय समझा नहीं। कृपया मुझे सारी घटना बताओ जिससे में उस तथ्य को पूर्णरूपेण समझ सकू ं।

वेद ! बात कुछ समय की है जब मैं बी० ए० सैकिण्डइयर में थी। मेरी मुलाकात एक विकास नामक लड़के से हो गई। हम दोनों प्यार के इस डगर में इतना दूर तक चले गए कि एक दिन भावनाओं में बहकर दोनों मन्दिर में गए और प्रतिज्ञा कर ली कि चाहे कितनी ही बाधाएं आयें हम दोनों विवाह के प्रेम सूत्र में बंधेंगे। हमारा प्यार अमर और अक्षय है। परन्तु 'होता वही है जो मंजूरे खुदा है'' के अनुसार हम फाईनल के बाद अलग-अलग हो गए। एक दिन मैंने अपने पिता जी को विकास के घर भेज दिया। जब मेरे पिता जी वहां पहुँचे और विकास के पिता से हमारी शादी का जिकर किया तो उसने उचक कर कहा—मैं तो अपने लड़के की मंगनी पर 20000) रुपये नकद लूंगा। मेरे पिता उसके समक्ष विनय पूर्वक कहने लगे मेरी लड़की प्रथम श्रेणी से बी० ए० पास है। आप इसे स्वीकार कर लो। परन्तु उत्तर में केवल गालियां ही मिलीं। इस चन्द दौलत की कमी के कारण विकास के पिता ने हमारे प्रेम रूपी घर को मिट्टी के खिलौने की भांति नेस्तनाबूत कर दिया। मेरे पिता जी ने वहां से लौट कर सारा वृतान्त सुना कर कहा बेटी चिन्ता न करो, मैं और कहीं देखूंगा। परन्तु मैं अपनी जिद्द पर अड़ी रही। इसी बीच मेरा बूढ़ा बाप भी दिल का दौरा पड़ने से हमसे किनारा कर गया। परिवार में मैं और मेरी बेसहारा मां दो ही सदस्य रह गये। आज तक मैं इसी आशा पर जीवित थी कि विकास की अभी तक शादी नहीं हुई, शायद उसे अपने वायदे याद आ जावें लेकिन ऐसा नहीं हुआ। कल उसकी शादी हो गई। अब मेरे लिए और क्या चारा रह गया था। मैंने मर जाना ही श्रेयस्कर समझ कर विष खाया था।

इस दुःख भरी घटना को सुन कर डा० वेद का हृदय पसीज गया आंखों में आंसु

छलक आये, उसकी अन्तर्रात्मा पुकार उठी कि—'कब तक इस ऋषि-मुनियों की पावन भूमि भारत वर्ष में इन निर्धन युवतियों पर, इन धन के प्रभुत्व में अन्धे लोगों द्वारा अत्याचार होता रहेगा ? क्या इनकी कामना कभी पूर्ण होगी। मैं युवा हूँ। मुझ में यह सामर्थ्य है, इस कुरीति के खिलाफ आवाज उठाऊंगा और इसे दूर करके ही चैन लूंगा।

फिर अपने पर काबू करके फफक कर रोती हुई ज्योति के पास गया और अपने रूमाल से उसके आंसू पौंछता हुआ बोला—ज्योति ! अब तक तुम्हारे साथ जो घटित हुआ उसको स्वप्न की भांति मिथ्या समझकर भूल जाओ। जो स्वप्न आपने विकास के साथ संजोये थे, मैं उनको यथा सम्भव पूरा करने का प्रयत्न करूंगा। हम दोनों शिक्षित हैं, अतः दोनों मिलकर उन लोगों का डटकर विरोध करें जो धन की आड़ में अबला नारियों एवं कुमार युवतियों के जीवन को नारकीय और कण्टक मय बना रहे हैं। हम जन साधारण में इस बात की दुन्दुभि बजा दें कि 'दहेज एक अभिशाप है' इसका लेना या देना पाप है।

इतना ही नहीं हम दोनों संयोग से एक ऐसी अद्भुत शक्ति पैदा करेंगे जो हमारे बाद भी इस प्रथा के बिरोध में सदैव केवल आवाज ही नहीं उठाती रहेगी बल्कि इसको जड़मूल से नष्ट भी कर देगी। बोलो—क्या तुम्हें यह मन्जूर है ?'

ज्योति को ऐसा विश्वास भी न था कि कभी भविष्य में उसका उजड़ा संसार फिर से हराभरा होगा। वह प्रसन्नता से स्वकृति में सिर हलाती हुई डा० वेद के सीने से लिपट गई। यह देख उसकी मां जो हाथ में चाय ट्रे लिए हुए थी मारे खुशी के झूम उठी।

★ प्रत्येक मनुष्य को जब तक कि उसके विरुद्ध कोई प्रत्यक्ष प्रमाण न पाओ, भला मानस समझो। —प्रेम चन्द

★ जो वस्तु आनन्द प्रदान नहीं कर सकती वह सुन्दर नहीं हो सकती, और जो सुन्दर नहीं, वह सत्य भी नहीं हो सकती। अतः आनन्द ही सत्य है। —प्रेम चन्द

★ निरर्थक आशा से बन्धा मनुष्य अपना हृदय सुखा डालता है और आशा की कड़ी टूटते ही वह स्वयं टूट गिरता है। —टैगोर

★ अति संयम भी एक प्रकार का असंयम है। —शरत् चन्द्र

बम्बई, गोवा, पूना यात्रा के संस्मरण

—आचार्य विष्णुमित्र विद्यामार्तण्ड

★

हमारी बी. एड. श्रेणी की छात्राओं का भ्रमण का प्रोग्राम बना। ट्रैनिंग कालेज के प्रिंसिपल जवाहर लाल जी बांगू ने मुझे और बहन सुभाषिणी को भी साथ में लिया। हम 4 जनवरी, 1982 को सायंकाल देहली से पश्चिम एक्सप्रैस रेलगाड़ी दिल्ली से सवार होकर पांच जनवरी 6 बजे सक्कर पंचायत भवन बम्बई में ठहरे और 7 तारीख तक वहीं रहे। वहीं से प्रतिदिन बस पर सवार होकर बम्बई के भिन्न-भिन्न स्थानों को देखते रहे।

हम 4 जनवरी के पांच बजे गाड़ी पर सवार हुए थे अतः डेढ़ घण्टे में ही सर्वत्र अन्धकार हो गया था। दिल्ली से चलकर हम जब मध्यप्रदेश में पहुँचे तब रेलगाड़ी के दोनों ओर कभी रेत के टीले, कभी पहाड़ अन्धकार में दिखाई देने लगे। पहाड़ों तथा टीलों से कुछ दूर वन में ऊंचे-ऊंचे वृक्ष भी थे। प्रातः 7 बजे तक हमने अन्धकार में ही मध्य प्रान्त को पार किया।

सूर्य के प्रातः कालिज प्रकाश में हमारी गाड़ी गुजरात प्रान्त में प्रविष्ट हुई। वहां पर भी उसी तरह के टीले और पहाड़ रेल के दोनों ओर थे और बन भी दूर दूर तक फैला हुआ था। वहां पर टीले पथरों से मिले हुए थे।

कुछ दूर तक आगे निकलने पर रेल की पटरी से लेकर मीलों दूर तक भूमि बिल्कुल खाली पड़ी थी। वहां पर किसी प्रकार की खेती नहीं की गई थी। उस भूमि में छोटे छोटे साईज के वृक्ष थे। भूमि कहीं नीची कहीं ऊंची, कहीं टीलों, कहीं गढ़ों वाली थी। इस प्रकार सैंकड़ों मील का रेल के दोनों ओर का भाग बिल्कुल वीरान था। कुछ साहसी किसानों ने उन वनों में छोटे-छोटे टुकड़ों में कुछ बोया हुआ था। कहीं कहीं घिनके जंगली वृक्ष भी थे। गुजरात का यह भाग बरौदा नगर आने से पूर्व सूखा तथा रेतीला था। मुझे ऐसा अनुभव हुआ कि गुजरात की सरकार ने इस भूभाग को बोने योग्य बनाने का प्रयत्न ही नहीं किया।

तदनन्तर हमारी गाड़ी ने बरौदा नगर में प्रवेश किया। इस नगर में अनेक प्रकार की फैक्टरियां लगी हुई हैं। बरौदा आने से दस पन्द्रह मील पहले खेतों में केले,

बाड़ी, ताड़ी आदि के वृक्ष भी पंक्तियों में किसानों ने बोये थे। यहां के किसान हरियाणे के किसानों की तरह काम करते दिखाई देते हैं। केले, बाड़ी, अद्रक, तम्बाकू भी खेतों में बड़ी सुन्दरता से पंक्तियों में उगाये हुए थे।

बरौदा से कुछ आगे चल कर भूमि समतल है। वहां की उगी हुई खेती बहुत सुन्दर प्रतीत होती है। भरुच (भड़ौच) नगर के उत्तर की ओर सुन्दर स्वच्छ जल से पूर्ण नर्मदा नदी बहती है, जिसका जल गङ्गाजल के समान स्वच्छ है। इस नदी में नावें भी चलती रहती हैं। यहां की भूमि कृषि की उपज से हरी भरी है। नदी के साथ-साथ इससे भरुच नगर की शोभा निराली है।

इससे आगे सूरत नगर आता है। इसके समीप ताप्ती नदी बड़े विचित्र प्रकार से बहती है। यहां भी फैक्टरियों की भरमार है। सूरत नगर से लेकर बलसार नगर तक के मार्ग में उद्यानों की शोभा निराली है। बरौदे से लेकर बम्बई तक बीच-बीच में अनेक छोटी-छोटी नदियां बहती हैं।

इसके बाद पं० सातबलेकर जी का नगर पारड़ी दिखाई दिया। जहां पर रहकर पण्डित जी ने वेदों का गहन मन्थन किया था। करंवले नगर सेले के फिर कुछ मीलों तक छोटी-छोटी पहाड़ियां हैं। इसके बाद रेल मार्ग से पहाड़ियां दूर हो जाती हैं। इससे आगे बढ़ कर सैकड़ों मीलों तक नदियों से या समुद्र के जल से सारी भूमि कीचड़ वाली बनी है। यहां पर समुद्र के जल से लोग नमक भी निकाल रहे थे। बम्बई का वह भाग जहां कीचड़ है वह अच्छा नहीं लगता। वहां पर साधारण मजदूरों ने अपने छोटे-छोटे मकान बनाये हैं। उनके साथ पानी और कीचड़ भी है। उसे देखकर मेरे मन में आया कि क्या यही बम्बई है। वह स्थान जो बम्बई से दक्षिण का था सुन्दर नहीं था। वे गरीब नर-नारी शरीर से कमजोर छोटे कद के तथा काले हैं। स्त्रियां वहां लांग बांधती हैं। गाय, भैंस हैं परन्तु बहुत कमजोर हैं।

बम्बई की रेल गाड़ियाँ लोकल बसों का काम देती हैं। प्रत्येक दो मिनट के बाद रेल गाड़ियां वहां पर चलती रहती हैं। सारी गाड़ियां बिजली से चलती हैं। वहां चौबीस घण्टे बिजली रहती है। यदि वहां बिजली न हो तो सारा काम ठप्प हो जावे। उस स्थान पर बम्बई में सफाई नहीं थी। हमारे गाईड श्री सरल गुप्ता सब प्रकार का प्रबन्ध करते थे।

6 जनवरी को बस में सवार होकर हम बम्बई के विशेष स्थानों को देखने चले। बम्बई भारत का पश्चिम दिशा में अन्तिम नगर है। बम्बई के पश्चिम भाग में समुद्र

है, जिसे अरब सागर कहते हैं। हमारी गाड़ी जुहू रोड़ से चली जो समुद्र के साथ-साथ बनी हुई है। उस सड़क पर एक्टर्स तथा एक्ट्रैसों के कई कई करोड़ रुपयों से बने विशाल भवन हैं।

तदनन्तर बससे उतर कर हम सबने समुद्र के जल में प्रवेश कर उसकी शोभा का निरीक्षण किया। वहां पर एक के बाद एक उठती हुई विशाल लहरें तट की ओर आती थीं। कई बार लहरें इतनी ऊंची उठ कर आती थीं कि हमारे सारे कपड़े भीग जाते थे। हमारी छात्राएं समुद्र की लहरों का आनन्द लेने अन्दर तक चली जाती थीं। वहां के मनोरञ्जन में समुद्र तट पर दो घड़ों की बग्गी पर सवार होकर घूमना शोभा मानी जाती है, हमने भी बग्गी में सवार होकर उस आनन्द को लिया। कुछ अंग्रेज लंगोट के प्रकार के कपड़े लपेट समुद्र के तट पर घूम रहे थे तथा स्नान भी करते थे। समुद्र से कुछ दूर घिनके खड़े हुए नारियल के वृक्षों की शोभा अद्भुत थी। उनके साथ-साथ कई मंजिल की बनी कोठियाँ भी अपनी शोभा को धारण किये हुई थीं। इस प्रकार लगभग चालीस मिनट तक हमने तथा हमारी छात्राओं ने समुद्र दर्शन, स्नान आदि से आनन्द प्राप्त किया।

बम्बई का शान्ता क्रूज हवाई अड्डा भी बड़ा विशाल है। अभी भी उसका निर्माण हो रहा है। उस तक पहुँचने के मार्ग अनेक सुन्दर भवन थे। यहां पर एक मील तक लाईन में खड़ी टैक्सी दिखाई देती थीं। बम्बई में सबसे अधिक टैक्सियां हैं।

यहां से पवाई लेक को देखने चले। उस लेक पर पहुँचने के मार्ग में अनेक फ़ैक्टरियां हैं। यह पहाड़ी मार्ग है। पवाई लेक तथा उसके बाहर का वह बन दृश्य 25 किलो मीटर के घेरे में है। इस लेक का निर्माण 1856 से 1860 तक हुआ है। इसके निर्माण में उस समय इस लेक पर 56 लाख रुपया लगा है। इस लेक का चित्र लेना मना है। सारे नगर को इसी लेक से जल मिलता है।

यहां से चल कर हम विहार लेक में गये। यह लेक भी अत्यन्त दर्शनीय है। विहार लेक से चल कर गोरे गांव की ओर चलते हैं। यहां सरकारी मिल्क प्लान्ट है। यह मार्ग बहुत गहन वनों से मण्डित, पर्वतों से शोभित है। अनेक मीलों तक यह मार्ग इसी प्रकार की शोभा से उत्तरोत्तर बढ़ता जाता है। इसको देख कर काश्मीर की सुन्दरता स्मरण हो आती है।

उस मार्ग का अवलोकन करते हुए जब हम बस से चल रहे थे तो हमारी छात्राओं की नजर शूटिंग पर आये हुए एक्टर और एक्ट्रैसों की मण्डली पर पड़ी। उन्होंने

उस वन में किये जा रहे शूटिंग को देखने की इच्छा की। हमने गाड़ी रोक दी। सब उस शूटिंग को देखने गये। वहां पर हेमा मालिनी एक्ट्रैस तथा जितेन्द्र एक्टर थे। छात्राओं ने उनको पहचाना तथा उनके कार्यक्रमों को देखा।

इसके बाद हम गाड़ी में सवार होकर लगभग मील भर ही चले होंगे तो वन में एक और शूटिंग मण्डली के साथ शत्रुघ्न सिन्हा तथा अमजद खां दिखाई दिए। वहां का पहाड़ी दृश्य तथा बन का दृश्य बहुत ही सुन्दर था। वहां पर भी शूटिंग देखी। उन्होंने बतलाया कि वे 'सम्राट्' तथा 'बन की माँटी मांगे खून' नामक चलचित्र तैयार कर रहे हैं। ये लोग चल चित्रों के निर्माण करने में बड़े प्रयत्न से लगे हुए थे। बिना प्रयत्न के कोई काम नहीं होता है। मैं सोचता रहा कि छात्राओं को इनसे बड़ी प्रीति है, इनको इनके गाने आदि उत्तम लगते हैं। इस बहाव को तभी रोका जा सकता है तब माता पिता या सरकार उसे रोकना चाहें। वैसे यह बहाव अब रुकना कठिन प्रतीत होता है।

यहां से आगे हम कन्हौरी गुफा पर पहुँचे। यह विशाल पहाड़ पर है। यह मार्ग भी प्रथम मार्ग की तरह सुन्दर था। हम उन गुफाओं को देखने के लिए उस पहाड़ पर चढ़े। गुफा में प्रविष्ट होते ही बुद्ध देव की विशाल दो प्रतिमाएं गुफा के दोनों ओर थीं। इसके साथ-साथ पत्थर काट कर अन्य अनेक बुद्धदेव के चित्र भी बनाये हुए थे। पहाड़ों पर ऊपर रहने के लिए घर भी बौद्ध भिक्षुओं के लिए बने थे। उनमें पत्थर की चौतरी बनी थी। ऊपर जल था। उस स्थान को या उस गुफा को बनाने में अवश्य पचास साठ वर्ष अनगनित कारीगरों और मजदूरों के लगे होंगे। यह स्थल ऐतिहासिक तथा दर्शनीय है। लगभग इनको बने एक हजार वर्ष हो चुके हैं।

बम्बई नगर में प्राचीन भवन प्रायः चार मञ्जल हैं, कहीं कहीं पांच मंजिल के भवन भी बने हैं। अब तो कई कई मंजिल के मकान बनने लगे हैं। बम्बई में प्रविष्ट होते समय वैतरणी नदी भी है। कहीं यह वही पौराणिकों की नदी वैतरणी तो नहीं है, जिसको पार करने से स्वर्ग की प्राप्ति पौराणिक भाई मानते हैं।

बम्बई नगर में प्रायः गुजरात, महाराष्ट्र और केरल प्रान्त के व्यक्ति रहते हैं। उनकी वेषभूषा भी पृथक्-पृथक् होते हुए भी अब समय के प्रभाव से प्रायः एकसी होती जा रही है। फिर भी केरल वालों का वेष सबसे भिन्न है। केरल वाले व्यक्ति प्रायः समुद्र की नौकरी करते हैं, चाहे जहाज में हो, या समुद्र में हो।

पढ़ने वाले छात्र या छात्राएं प्रातः 6 बजे ही नीकर या अन्य प्रकार के परिधान को धारण कर स्कूल में जाने के लिए भिन्न-भिन्न बस स्टैडों पर खड़े दिखाई देते हैं।

यहां का जनवरी का मौसम मार्च मास के अन्तिम सप्ताह जैसा है। कलह होने पर भी गाली गलोच नहीं देते हैं। यहां पर लड़के लड़कियों की ओर भद्दी नजर से देखते नहीं दिखाई दिये। वस्तुएं सस्ती हैं। मकान महंगे हैं। नगर समुद्र से तीन ओर से घिरा है। उसके अधिक फैलने की गुंजायश नहीं है।

7 जनवरी को हम सकूटर पंचायत भवन से बम्बई की यात्रा के लिए पश्चिम की ओर दक्षिण दिशा में समुद्र के साथ-साथ बस से चले। उस सड़क पर कई मंजले विशाल भवन अपनी सुन्दरता से सारे बम्बई नगर को चैलेन्ज कर रहे थे। सड़क बड़ी चौड़ी, भवन विशाल और सुन्दर थे। कुछ भवन तो बीस मंजिले थे। सड़क पर चलते हुए जब हमारी नजर समुद्र की ओर गई तो वहां जंगी जहाज तथा छोटे छोटे जहाज भी प्रत्यक्ष दिखाई देते थे। इस प्रकार सड़क पर चलती हुई हमारी बस गेट वे ऑफ इण्डिया पर पहुँची, जो अंग्रेजी काल में बना था, वह बड़ा विशाल तथा सुन्दर है। समुद्र के किनारे पर बने भवन अपनी उपमा आप ही हैं। उसी सड़क पर बना ओबराय होटल है, जो तीस मंजिल ऊंचा है। उसकी सुन्दरता भी निराली है। यह समुद्र के तट के पास खड़ा समुद्र का प्रहरी सा प्रतीत होता है। राजकीय कार्यालय भी इस सड़क पर बने हुए बहुत सुन्दर हैं। वहां के भवनों को देख कर यह निर्णय करना अति कठिन हो जाता है कि कौनसा भवन सबसे अधिक सुन्दर है।

इसी सड़क पर सरकार की ओर से बना एक मत्स्य भवन भी है जिसमें अनेक मछलियां विविध रूप रंग की, बनावट की हैं। कइयों को मछली मानना उनकी आकृति के कारण कठिन हो जाता था। पता नहीं कहां कहां से इनका संग्रह किया गया है।

इसके बाद हमने सरफिरोज मेहता पार्क और कमला पार्क की भी शोभा देखी। इस पार्क के समीप ही समुद्र है। इस पार्क को माला बार हिल कहते हैं। यह पार्क माला की तरह पर्वत पर बना है। यहां पर खड़े होकर बम्बई नगर की शोभा दिखाई देती है।

चौपाटी का प्रसिद्ध मैदान भी समुद्र से लगता है। यहाँ पर सायंकाल अनगिनत स्त्री पुरुष इकट्ठे होते हैं, दुकानें लगती हैं, बिजली की चकाचौंध से समुद्र सारा ही बिजलीमय हो जाता है।

तत्पश्चात् हम प्लैनीटोरियम में प्रविष्ट हुए। वहां पर हमको वैज्ञानिकों द्वारा निर्मित कृत्रिम आकाश में तारे तथा नक्षत्र दिखाई दिये। जिनको देख कर यह अनुभव नहीं होता था कि यह सब बनावटी है। वह ऐसा प्रतीत होता था कि वस्तुतः तारे आकाश में छाये हुए हैं। यह निर्माण भी विचित्र है।

8 जनवरी को हम इण्डिया गेट के समीपस्थ जहाज पर सवार होकर बारह किलो मीटर लम्बे समुद्र को पार कर एलीफेन्टा केवस् पर पहुँचे। इण्डिया गेट के साथ ही बन्द्रगाह है। समुद्र में यात्रा करते हुए हमको समुद्र में दौड़ लगाते हुए छोटे बड़े जहाज दिखाई दिए। कुछ बड़े जहाज समुद्र के मध्य में अचल हुए खड़े थे। पैट्रोल को समुद्र से निकालने के सरकार के प्रयत्न भी वहां दिखाई दे रहे थे। एलीफेन्टा केव का पुरा नाम धारापुरी और श्रीपुरी था। यहां पर एक पत्थर का हाथी बना हुआ था। पुर्त्तगालियों को यह हाथी वहुत अच्छा लगा। इस स्थान को जीत कर उन्होंने हाथी की शक्ल को देख कर इसका नाम ऐली फेन्टा केव रक्खा। अंग्रेज शासकों ने अपने शासन-काल में इस हाथी को यहां से उठवा कर बम्बई के विकटोरिया गार्डन में रखवा दिया।

इस केव (गुफा) में बड़ी-बड़ी विशाल मूर्तियां देवी देवताओं और बुद्ध की हैं। पुर्तगालियों ने जब इस स्थान को जीता तो उन्होंने कुछ मूर्त्तियों के हाथ पांव तोड़ दिये थे।

8 जनवरी को हम बम्बई से साढ़े आठ बजे सायंकाल को रेल में सवार होकर गोवा की ओर चले। प्रातः छः बजे मिरज स्टेशन पर पहुँचे। वहां पर गाड़ी से हम सब उतर गये। मिरज से प्रातः आठ बजे गोवा की राजधानी पणजी की ओर चले। मार्ग में गोवा की जुआरी और माण्डवी दोनों नदियों के दर्शन हुए। माण्डवी नदी व्यास नदी की तरह बहुत चौड़ी है। इन नदियों के कारण यह क्षेत्र हरा भरा है। रास्ते में आये गांव बहुत छोटे थे। कहीं तीन घर, कहीं चार घर ही एक गांव में थे। बड़ा कोई भी गांव वहां नहीं था। सब घर खपरैल की छत वाले थे। लोग सीधे सादे हैं। उनका धन्धा खेत के काम के सिवा कुछ नहीं है, ऐसा प्रतीत होता था।

घटप्रभा कस्बे से कर्नाटक प्रान्त प्रारम्भ होता है। यहां से आगे की सैंकड़ों मील भूमि पत्थरों तथा टीलों से व्याप्त है। यहां पर किसी प्रकार की भी खेती नहीं की जा रही है। इससे कुछ आगे निकल कर रेल की सड़क से लगती भूमि कृषि से हरी भरी है। कुछ दूर पर पहाड़ भी दिखलाई देते हैं। कर्नाटक की महिला जल से भरा एक घड़ा सिर पर रखती है और दूसरे घड़े को बगल में दबाकर ले जाती हैं। रेल सड़क से लगभग चार फर्लांग दूर पहाड़ियां हैं। महाराष्ट्र से लगता कर्नाटक का यह इलाका महाराष्ट्र जैसा ही है।

तदनन्तर कर्नाटक का प्रसिद्ध नगर बेलगांव दिखाई दिया। यहां से हरियाली बढ़नी प्रारम्भ हो जाती है। जब हमारी गाड़ी बढ़ी तो हरे-भरे वृक्षों से

आच्छादित पहाड़ तथा बन दिखाई दिये। वृक्ष अनेक प्रकार के फलों और फूलों से लदे हुए थे। लाडण्डा तक यह शोभा बढ़ती ही दिखाई देती थी। उस स्थान की शोभा देहरादून और काश्मीर जैसी कई स्थानों पर थी। उस सुन्दरता को देख कर सृष्टि की विचित्र रचना को देख कर उसके रचयिता का स्मरण हठात् होने लगता था।

लाडण्डा से आगे बढ़ कर हमारी गाड़ी कैसल रोक नामक स्टेशन पर पहुँची। वहां से आगे हमारी गाड़ी सतरह टनलों (गुफाओं) को पार करती बाहर निकली। कितना प्रयत्न किया होगा इन टनलों को बनाने वालों ने, यह उनको देख कर मन में विचार आता था। उसके आगे पहाड़ों से गिरते झरने अपनी अनुपम शोभा प्रकट कर रहे थे। घाटी के बन जो बहुत घिनके थे उनकी शोभा का वर्णन करना कठिन काम है। घाटी में परिश्रमी किसानों ने भूमि बोई हुई थी। हम को बतलाया गया कि इस वन में काजू तथा लीची के वृक्षों की भरमार है। अनेक प्रकार की औषधियां भी यहां उपलब्ध होती हैं।

9 जनवरी को बम्बई से हमने गोवा में प्रवेश किया। यह प्रान्त सब प्रकार की प्राकृतिक शोभाओं से ओतप्रोत है। इसके बन तथा पहाड़ काल्पनिक नन्दन बन को स्मरण कराते हैं। मकान बड़े स्वच्छ साफ हैं। वहत से मकानों के अगले भाग में फूल खिले हुए थे। सर्वत्र सुन्दरता के दर्शन होते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि प्रभु ने इस प्रान्त को सुन्दर, स्वच्छ, दर्शनीय बनाने के लिए अपनी शक्ति का पूरा प्रयोग किया हो।

10 जनवरी को गोआ राजधानी पणजी से हमारी पार्टी समुद्र के दर्शन के लिए चली। नगर से उत्तर की ओर नगर से लगता ही समुद्र है। उससे परले पार पहाड़ हैं। यहां पर पानी के जहाज इधर उधर सामान को ले जाते हैं। यहां के पहाड़ों की भूमि लाल सी है। इसमें से लोहा आदि या अन्य प्रकार की धातुएं निकलती हैं।

मैं, बहन सुभाषिणी तथा प्रिंसिपल जवाहर लाल जी मीरामार बीच पर गये। वहां पर रेत है। जो पहाड़ों से घिस घिस कर वहां इकट्ठा हुआ है। वह दृश्य भी सुन्दर है। हम समुद्र के जल में घुसे और उसमें कुछ काल तक आनन्द लेते रहे।

गोवा दमन, दीव इन तीनों टापूओं को गोआ नाम से कथन किया जाता है। इस टापू को हमारी सरकार ने 1961 में पुर्त्तगालियों से छीना था। इस समुद्र के तट पर प्रसिद्ध देशभक्त बान्देकर प्रथम मुख्यमन्त्री गोवा की समाधि भी है। इस प्रान्त की राजधानी पणजी है।

इसके बाद हमने वहां डोनापाल बीच को देखा। यह स्थान पहाड़ी है। यहां प्रेमिका तथा प्रेमी क्रमश: डोना और पाल ने आत्म हत्या की थी। प्रेमिका डोना राजकुमारी थी और पाल मछिहारा था। इन दोनों के नाम पर ही इस पहाड़ी का नाम डोनापाल रखा गया है। वहां पर खड़े होकर जब हम समुद्र को देखते हैं तो जितनी दूर नजर जाती है वहां तक जल ही जल दिखाई देता है। प्रेमी और प्रेमिका की उस पहाड़ी पर पत्थर की बनी मूर्त्तियां भी हैं।

पुर्त्तगालियों के द्वारा बनाया गया बन्दरगाह भी हमने डोनापाल से चलकर देखा। अब उस बन्दरगाह का कोई प्रयोग नहीं रहा है। अब यह स्थान पत्थर आदि के गिर जाने से बन्दरगाह के योग्य नहीं रहा। अब यहां से जहाजों का आना-जाना नहीं होता है। यहां पर अब जेल बनी हुई है जिसमें कैदी रहते हैं। इसके द्वार पर पत्थर की बनी गोवा माता के हाथों में हथकड़ी लगी दिखाई गई है। वहीं पर बलिदान देने वाले वीरों की स्मृति में एक आदमी के हाथ में जो पत्थर का बनाया गया है, उसके दोनों हाथों से थांभी हुई लाश भी दिखाई हुई है।

यहां से हम कैलेन गेट पर गये। यहां भी समुद्र की अद्भुत शोभा है। इसके पश्चिम की ओर विशाल समुद्र है। इसमें दूर-दूर तक जल ही जल दिखाई देता है। इस समुद्र में मैंने प्रविष्ट होकर स्नान किया। इसे अरब सागर कहते हैं।

अन्जुना बीच भी सुन्दर स्थल है। इसके तट से भी जहाज चलते हैं। यहां से आगे वागातो बीच को भी देखा। यहां पर मानसून के दिनों में ठहरना खतरनाक है। यहां पर भी विशाल समुद्र है।

इसी प्रकार जहां भी हमने गोवा में भ्रमण किया वहां के पहाड़, बन, घाटियां अति सुन्दर पाई। घाटियों को किसानों ने खेती करके हरा-भरा बनाया हुआ है। खेत पूर्णतया हरे-भरे हैं। वास्तव में गोआ की सुन्दरता का वर्णन करना अति कठिन है। मैं यह अनुभव करता हूँ कि यह स्थान काश्मीर सा या कई स्थानों पर उससे भी सुन्दर लगता है। यहां आदमी थोड़े हैं। गाय ही मुझे यहां दिखाई दी, भैंस नजर नहीं आई। सबके घर पृथक् पृथक् हैं, जंगल में हैं, साफ तथा स्वच्छ हैं। किसी प्रकार का भय यहां प्रतीत नहीं होता है। आदमी सभ्य हैं। ईसाई, हिन्दु और मुसलमानों की यहां आबादी है। ईसाई यहां अधिक हैं। यहीं के लोगों को आर्य बना कर उनके द्वारा ही यहां आर्यसमाज का प्रचार होना चाहिए।

इसी प्रान्त में माण्डवी नाम की नदी बहती है जो व्यास नदी के समान चौड़े पाट

वाली है। दूसरी जुआरी है यह भी यहां की बड़ी नदी है। जब माण्डवी नदी का पानी समुद्र में मिलता है तब दूर से वह हलके लाल रंग का प्रतीत होता है। इसकी यह शोभा डोनापाल के पहाड़ पर चढ़ कर देखी जाती है।

यहां से आगे बढ़ कर हमने ओल्ड गोवा चर्च भी देखा, जो बहुत प्रसिद्ध है। जो प्राचीन तथा बहुत विशाल भवन है। जिसकी छत बहुत ही ऊंची है। यहां ईसाइयों की मूर्त्तियां बनी हुई हैं। यहीं पर फांसी पर चढ़ाये हुए ईसा को दिखाया गया है। सैण्डज् नीयर नामक एक ईसाई धर्म प्रचारक प्रसिद्ध व्यक्ति हुआ है। उसके अनेक प्रकार के पत्थर के चित्र यहां बनाये गये हैं। मैं यह मानता हूँ गाईड जो बातें देखने वालों को बतलाता है, उन में बहुत सी मिथ्या बातों से भरी हैं। सैण्ड्ज की लाश भी वहां रखी है, जिसका मुख ही दिखाई देता है, जिस पर बल्ब जलता रहता है। यह चर्च चार सौ वर्ष पुराना है। अभी तक वैसा ही मजबूत है।

आगे चल कर हमने हिन्दु आबादी में मंगेशी मन्दिर देखा, जो सतरहवीं शताब्दी में बना है। इसी गांव में लता मंगेशकर प्रसिद्ध मधुर गायिका का जन्म हुआ है। कहते हैं उसका जन्म मंगेश बाबा की कृपा से हुआ है। इस मन्दिर में लता मंगेशकर ने विशाल धर्मशाला बनवाई है।

आगे चलकर मोटर पर सवार हुए ही कि शिवाजी से निर्मित किले के दर्शन का भी सौभाग्य प्राप्त हुआ।

आगे चलकर रामनाथ देवालय देखा। यह भी सुन्दर मन्दिर है। इसके पास ही चारों ओर से पक्का स्वच्छ सरोवर है। दानी लोगों ने इसके निर्माण में पर्याप्त रुपया खर्च किया है।

कुछ आगे चल कर शान्ता दुर्गामन्दिर के दर्शन भी किये। शिवा जी के पौत्र ने 17वीं शताब्दी में बने इस मन्दिर का परिष्कार किया।

कुछ आगे बढ़कर वास्को-डी-गामा कस्बे को भी देखा। यहाँ समीप पहाड़ है, बन्दरगाह है, फैक्ट्री है। जहाज इधर उधर भागते दर्शन देते हैं। पुर्त्तगाल से चलकर प्रसिद्ध पुर्त्तगाली वास्को-डि-गामा इसी बन्दरगाह पर जहाज से आया था। उसी के नाम पर इसका यह नाम रखा गया है।

11 जनवरी को प्रातः 9½ बजे वास्कोडिगामा से रेल में सवार होकर हम मिराज पहुँचे। वहां से चलते हुए वहां का क्षेत्र मुझे उत्तर प्रदेश और हरियाणा प्रान्त

सा लगा। वहां की भूमि समतल है। स्त्री ग्रौर पुरुष दोनों खेतों में काम करते दिखाई देते हैं। भूमि ऐसी काली है मानों गोबर ग्रादि का खात पानी से भीगा हुग्रा हो। बैलों के, गायों के, भैंसों के सींग खड़ीं दुसंगी मुड़ी हुई जेली जैसे हैं। उन सींगों को वहां से निवासी रंग से रंग देते हैं, ऐसा प्रतीत होता है। या वे स्वभाव से ही ऐसे होंगे।

वहां की बकरियां बहुत काली थीं। मिराज से किर्लोस्कर बाड़ी तक का क्षेत्र समतल है। किर्लोस्कर बाड़ी से बराड़ तक पश्चिम की ग्रोर रेल मार्ग के पहाड़ हैं। ये पहाड़ियां वृक्ष रहित हैं। दूसरी ग्रोर भी कहीं कहीं पहाड़ियां दिखाई देती थीं। वहां की महिलाएं बिल्कुल सादी लाल, हरी या पीली साड़ियां पहने फिर रही थीं। वहां के कूएं बहुत चौड़े हैं।

बराड़ से ग्रागे भी कहीं पहाड़ियां थीं, कहीं कहीं पर मैदान ही थे। यहां पर सरकार की ग्रोर से उन्नत करने की कोई योजना दिखाई नहीं दी। गांव खपरैल की छत वाले तथा बहुत छोटे हैं। यहां कोई पक्की सड़क की व्यवस्था नहीं है जिससे किसान को कोई वस्तु सुलभ हो सके। पुराने प्रकार की छोटी-छोटी बैलगाड़ियां हैं। बिना उन्नत हुए खेत हैं। कोई उन्नति या विकास वहां मुझको दिखाई नहीं दिया।

रहमतपूर से कोरे गांव तक पहाड़ियां दूर से दिखाई देती थीं। कुछ ऊंचे-नीचे टीले थे। यहां किसी प्रकार की राजनैतिक चेतना का दर्शन नहीं है। ट्यूबवैल ग्रादि की भी व्यवस्था नहीं है। यहां की भूमि को समतल कराने का कोई प्रयत्न नहीं हुग्रा। कहीं भी ट्रैक्टर चलते दिखाई नहीं देते थे। रेलवे स्टेशनों के भोजन को देख कर भी प्रसन्नता न होती थी वह बहुत सस्ता था।

सितारा से लेकर कुछ ग्रागे तक की भूमि सूखी है। केवल वहां पर पहाड़ी हैं। जमीन को इकत्रित करके किसान के खेत को पानी देने की वहां कोई योजना नहीं है। लोगों का भोजन भी बहुत हल्का है जिसये वे सारे ही कमजोर दिखाई देते हैं।

पठार से लेकर लोनन्द तक का सारा भूभाग पथरीला है। सर्वत्र पत्थर ही पत्थर हैं। बोने की भूमि बहुत थोड़ी है। इस प्रकार भूमि का यह पत्थरीला सिलसिला चालीस मील तक लगभग चलता रहा। कहीं कहीं पर घाटियों में खेती है। वह भी सूखी हुई ज्वार है। जेजुरी तक सर्वत्र पत्थर ही पत्थर हैं। इससे ग्रागे हरियाली है। जेजुरी से कुछ ग्रागे चलकर एक नदी है जिसके कारण कहीं कहीं नहरें भी दिखाई दी। जेजुरी से कई मील तक पूना ग्राने से पहले चारों ग्रोर पत्थर ही पत्थर या पहाड़ ही दिखलाई देते हैं। पूना के ग्राने से 20–25 मील पहले गाड़ी पहाड़ काट कर बनाये हुए रास्ते पर चल रही थी। उत्तर की ग्रोर की भूमि समतल थी। यह स्थान सारा पहाड़ी है।

हम 12 जनवरी को रात्रि में पूना में ठहरे। पुनः प्रातःकाल हमने आग़ाखां महल (अब राष्ट्रीय गान्धी संग्रहालय) को देखा। बहुत सुन्दर बिल्डिङ्ग है, बहुत स्वच्छ तथा फूलों से सजी है। सन् 1942 में महात्मा गान्धी को यहीं पर नजरबन्द किया गया था। यहीं पर माता कस्तूरबा और महात्मा जी के प्राईवेट सैक्रेटरी महादेव देसाई की मृत्यु हुई थी। यहां पर उनकी समाधि बनी हुई थी। बड़ा सुन्दर पार्क है।

उसके बाद हम आचार्य रजनीश के आश्रम में गये। यह भी सुन्दर है, उत्तम भवन है। वृक्ष भी आश्रम की शोभा बढ़ा रहे हैं। वहां की स्वागताध्यक्षा ने थोड़ा सा आश्रम दिखाया और कहा और आगे जाने की आज्ञा नहीं है। वहां कुछ गैरिक वस्त्र धारी व्यक्ति रहते हैं। आचार्य रजनीश की पुस्तकों का पर्याप्त मात्राओं में संग्रह है। कुछ उदासी सी वहाँ प्रकट हुई।

कुछ दूर आगे चल कर सिन्धिया देवस्थान भी देखा जो दो सौ वर्ष पुराना है।

शिव पार्वती मन्दिर भी पहाड़ी पर बना हुआ है। उसके निर्माण में उत्तम कला का दर्शन दीखता है। पेशवा जू पार्क और सारस बाबा का मन्दिर भी देखा। तदनन्तर राजा केलकर राष्ट्रीय संग्रहालय को भी हम देखने गये, जो एक मनुष्य का पुरुषार्थ है। संग्रहालय में प्राचीन कालीन वस्तुएं रखी हैं। शिवा जी के पिता शाह जी की तलवार भी है। राजा केलकर सतासी वर्ष के पुरुष हैं। वे हम से मिले। हरियाणे की प्राचीन कला को वहां स्थिर करने की इच्छा भी उन्होंने हमसे प्रकट की। उनका प्रयत्न प्रशंसनीय है।

शनिवार बाड़ा भी देखा जिसे प्रथम पेशवा ने सन् 1734 में बनवाना प्रारम्भ किया था। 1738 तक यह तैयार हुआ। किला है, बहुत ऊंचे कपाट हैं जिनमें भाले से गड़े हैं। यह सात मञ्जला भवन था कहते हैं आग लगने से जल गया था पुनः इसकी मरम्मत कराई गई है। इस प्रकार हमारी यह यात्रा 10 दिन में पूर्ण हुई।

इस यात्रा से मुझे अनुभव हुआ कि अभी भारत वर्ष के कुछ प्रान्त पिछड़े हुए हैं, कमजोर हैं, सम्भाल भी पूरी तरह से होने नहीं पाई है। भोजन व्यवस्था उत्तम ननीं है। मछली आदि के खाने का बहुत व्यवहार है। देहली के चारों ओर का सौ सौ मील का स्थान या इससे कुछ दूर तक ही आर्यवर्त प्रतीत होता है। इसका भी खान-पान अपवित्र और दूषित होने लगा है। आर्य पुरुषों को इसके सुधार का प्रयत्न करना चाहिए। आर्य समाज का प्रचार केवल उत्तर भारत में ही न करके दूर दूर तक होना चाहिए तभी देश का और विश्व का कल्याण होगा।

मैं इस यात्रा से यह भी अनुभव करता हूँ कि भारत विभिन्न संस्कृतियों का केन्द्र होते हुए भी एकता की ओर बढ़ रहा है और बढ़ता ही रहता है। यह भारत की संस्कृति की विशेषता है। ★★★

तुम प्राणवान हो–

तुम प्राणवान हो नव चेतन,
जीवन के घन जीवन के धन ।
बरसो-सरसो-हरसो हे ! जन,
जोन के जीवन बन शोभन ॥

आह्लाद भरा हो घर-आँगन,
जिसमें विचरें निर्भय हो जन ।
तेरे पूजन के पूजन बन,
आमोद भरें जन-जन के मन ॥

जन से जन का हो नित पूजन,
ना टूटे जन से जन का मन ।
सद् प्रेम भरा हो जन-जीवन,
जीवन सा जीवन जन-जीवन ॥

जन सुधा-सरित निर्झर-सा बन,
भर दे मरु-मरु में यौवन-धन ।
हँस उठे सरस हरियाली बन,
नाचे-नाचे जन-जन का मन ॥

तुम प्राणवान हो नव चेतन,
चेतन से चेतन हो चेतन ।
साकार सत्य के पूजक बन,
जन-जन को दो नव-नव चेतन ॥

—डॉ० चन्द्र दत्त कौशिक
एम. ए., आचार्य, बी. ए. एम एस.
प्रोफेसर, महिला आयुर्वेदिक कालेज,
खानपुर कलां (सोनीपत)

विपश्यना साधना

—**धर्मवीर सिंह मलिक**
सरपंच, बीघल (सोनीपत)

मुझे विगत कई वर्षों से कुछ शारीरिक विकार चले आ रहे हैं। आहार-विहार के रख-रखाव से मैं अपने आपको कुछ ठीक रखे हुए हूँ। गुजरात के भुज कच्छ निवासी डा० सावला जी ने मुझे प्रेरणा दी कि मैं परम आदरणीय कल्याण मित्र श्री सत्यनारायण जी गोयनका के इगत पुरी आश्रम में अवश्य जाऊं। मैं 20-1-82 से 31-1-82 तक उक्त आश्रम में रहा। जैसी कि मुझे आशा थी उससे भी अधिक मुझे सुख शान्ति का अनुभव हुआ। मेरी मनोस्थिति में बहुत सुधार आया। निश्चय ही विपश्यना साधना मानव के लिए एक कल्याणकारी सिद्धि है। विपश्यना साधना क्या है, यह मैं लिख रहा हूँ।

संसार के समस्त प्राणी जन्म, रोग, वृद्धत्व और मरण के भय से त्रस्त हैं। उन समस्त प्राणियों में मानव एक ऐसा विशिष्ट प्राणी है जो सभी प्रकार के सुख दुःखों की अनुभूति को साक्षी भाव से देख सकता है और उनसे छुटकारा पा सकता है। जो सुख और दुःख की अनुभूति होती है उस पर हमारा इतना अधिक लगाव रहता है कि जिसके मुक्त होने की इच्छा होते हुए भी, मुक्त नहीं हुआ जा सकता। प्रसव की अति वेदना सहन करने वाली स्त्री भी पुत्र प्राप्ति की खुशी से उस पीड़ा को सुख मान कर सहन करती है। यही लगाव का द्योतक है। संसार के प्रति लगाव ही अनेक जन्मों से नए-नए संस्कारों को अर्थात् कर्मों को जन्म देने वाला होता है।

इस लगाव को मोह की संज्ञा दी जाती है। जहां मोह उत्पन्न हुआ वहां राग होता है, जहां राग है वहां द्वेष है। दोनों एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। राग और द्वेष दोनों एक दूसरे से सम्बन्धित हैं। राग और द्वेष से जितनी मुक्ति होगी उतनी संसार-चक्र से मुक्ति होगी। राग द्वेष से पूर्ण मुक्ति का अर्थ है मोक्ष अर्थात् वीतराग अवस्था।

इस राग-द्वेष की मुक्ति का मार्ग क्या है ? यह मार्ग है हमारे अन्दर की खोज। राग और द्वेष दोनों हमारे अन्दर हैं इसलिए हमें हमारे अन्दर ही उसे खोजना है। यह एक वैज्ञानिक अन्वेषण है जिसे हम विपश्यना कहते हैं। विपश्यना का अर्थ होता है विशेष प्रकार से देखना। अपने आपको विशेष प्रकार से देखना। हमारे अन्दर के शारीरिक और मानसिक, अच्छे और बुरे सभी विकारों को समताभाव की दृष्टि से देखना, इसे ही विपश्यना कहते हैं। समताभाव से देखने का अर्थ होता है 'सम्यक दर्शन'। एक बार सम्यक् दर्शन की प्रतीति हो जाती है तब चित में उद्‌भाव होने वाले विकारों से मुक्त होने का मार्ग दिखाई पड़ता है। एक बार उस मार्ग पर चलना प्रारम्भ किया और उस मार्ग पर निरन्तर आगे बढ़ते चले गये तो मुक्ति अवश्यंभावी है।

'विपश्यना' की यह विधि अनेक साधु, ऋषि, मुनि, अर्हत करते आए हैं। अभी भी कई लोग करते होंगे, किन्तु अभी तक गुप्त अवस्था में थी अथवा लुप्त सी रही। भगवान बुद्ध द्वारा प्रसारित यह विधि भारत में भूली जा चुकी थी किन्तु भारत के पड़ौसी देश बर्मा में लगभग दो हजार वर्षों से गुरु-शिष्य परम्परा में शुद्ध रूप में सुरक्षित रही। गुरु अपनी अन्तिम अवस्था को निकटस्थ पाकर दो-तीन शिष्यों को यह विधि सिखाते थे। उस समय यह मान्यता थी कि इस विधि को सामान्य जनता को न सिखाई जाए। क्योंकि इस विधि द्वारा प्राप्त सिद्धियों का दुरुपयोग होना सम्भव है। और एक मान्यता यह भी थी कि भगवान बुद्ध के 2500 वर्ष पूर्ण होने के पश्चात् ही यह विधि सर्वसामान्य जनता का बहुत भला करेगी। उक्त मान्यता के अनुसार अब यह विधि सर्वजन सुखाय प्रसारित की गई है।

बर्मा शासन के अकाउन्टेन्ट जनरल श्री सयाजी ऊबा खिन ने इस विधि को प्राप्त किया और अनेक लोगों को लाभान्वित किया। वर्तमान में भारत में यह साधना विधिवत सिखाने की क्षमता एक ही व्यक्ति में है, वे हैं श्री सत्यनारायण गोयनका। वे बर्मा से आकर भारत बसे हैं और पिछले सात वर्षों से लगातार शिविर लगाकर सिखा रहे हैं। अभी तक भारत के कई बुद्धि जीवी व्यक्तियों के अतिरिक्त 70 देशों के विभिन्न वर्गों के व्यक्ति सीखने आए हैं—जिसमें डाक्टर, वकील, इन्जीनियर, वैज्ञानिक, साहित्यकार आदि सम्मिलित हैं।

वैसे यह विधि बहुत ही सरल है। प्रथम तीन दिनों तक श्वासोश्वास की प्रक्रिया को देखना होता है। जिससे मन सुक्ष्म बनकर स्थिर होने लगता है। बाद में सात दिनों तक अपने स्वयं के शरीर के एक-एक अंग का निरीक्षण करना होता है। इस निरीक्षण में जैसे जैसे मन सूक्ष्म होकर स्थिर होता है, वैसे वैसे शरीर को संवेदनाओं

की अनुभूति प्राप्त होती है। शरीर की संवेदनाओं की अनुभूति होने पर चित्त की वृतियों का दर्शन होता है। चित्त के विकार उभर कर आते हैं और उनका क्षय होता है। जैसे चित्त के विकारों का क्षय होता है वैसे-वैसे कर्म के संस्कार नष्ट होते हैं। एकांत निर्जरा होती है। सारी विधि देखने में सरल है किन्तु सफलता हमारे अपने गम्भीर प्रयत्नों पर निर्भर करती है। हम मन को कितने प्रमाण में सूक्ष्म कर सकते हैं और मन के विकार काम, क्रोध, अहंकार, लोभ, कपट आदि पर कितनी विजय प्राप्त कर सकते हैं।

अभी तक श्री गोयनका जी भारत के विभिन्न नगरों में शिविर लगा कर लोगों को लाभान्वित करते रहे और अब "विपश्यना विश्व विद्यापीठ" के नाम से नासिक जिले के इगतपुरी के नयनरम्य स्थान पर स्थायी केन्द्र का निर्माण किया गया है। वहाँ ग्यारह दिन के शिविर आयोजित किये जाते हैं। निवास और भोजन का पूरा निःशुल्क प्रबन्ध रहता है और साधना के लिए स्वयं गुरुजी (गोयनका जी) मार्ग दर्शन करते हैं। शिविर में प्रवेश के लिए पूर्व अनुमति लेनी आवश्यक है। क्योंकि शिविर निर्धारित तिथि को शुरु होते हैं और स्थानाभाव भी रहता है। बीच में प्रवेश नहीं मिलता। शिविरार्थियों के आवेदन पूर्व प्रेषित होने पर सुविधानुसार अनुमति प्रदान की जाती है। अतः इच्छुक साधक पहले से अनुमति प्राप्त कर वहां जा सकते हैं।

पता :— **विपश्यना विश्व विद्यापीठ, धम्मगिरि इगतपुरी – 422403**
(नासिक—महाराष्ट्र) म० रेलवे

अक्षरों की महता—

❀

रा— राम राम सब रटत हैं, वेद रटे न कोए।
जो वेद में भी ध्यान धरे, भला उसी का होए॥

म— मन को काबू पाइए, शुद्ध विचार इस में लाइए।
गन्दे विचार आते ही, फिर तू खूब पछताइए॥

क— कण-कण में है ओज भरा, नश-नश में है खून।
जब से गन्दे विचार हैं, तब से लगा है घूण॥

र— रक्षा करना क्षत्री का काम, सेवा करना शुद्र का।
ज्ञान बांटना ब्राह्मण का है, धन बांटना वैश्य का॥

बसन्त ऋतु

★

मन्द - मन्द समीर चले,
पक्षी चले गगन में ।
धीमी - धीमी धूप खिली है,
चढ़ चली है नभ में ॥

खग कुं-कुं करके चहकाए,
पञ्चम स्वर में कोयल गाए ।
इतना मधुर गान गाए,
सबके मन को वह बहलाए ॥

धरती पर हरियाली छाई,
सब के मन को वह बहलाई ।
इतना सुन्दर सच्चा प्यारा,
अपना रंग वह ले आई ॥

भू पर पीताम्बर रंग चढ़ा,
सरसों के पुष्पों से ।
अब सुनहरा रंग आवेगा,
थोड़ी और उष्णता से ॥

—रामकरण मलिक

परिवार का मोह

—पहलाद सिंह बलहारा
एम० ए०

किसी गांव में एक प्रेम सिंह नामक किसान रहता था। उसके पास 200 बीघे का इकट्ठा खेत था। किसान ने खेत में अपनी सुख-सुविधा हेतु प्रायः सभी साधन जुटा रखे थे। खेत के मध्य में पशुओं को पानी पिलाने के लिए तालाब और आदमियों के लिए कुआं खुदवा रखा था। कुएं और तालाब के आस-पास फलदार वृक्ष रोप दिये थे। रहने, आराम-विश्राम हेतु एक पक्का दुमंजिला छोटा सा सुन्दर भवन बनवाया हुआ था जिसमें अतिथि-कक्ष का भी प्रावधान था। कुल मिलाकर एक मध्यम वर्गीय परिवार की सुख-सुविधा कार्य-कलाप आदि के लिए प्रायः सभी प्रबन्ध जुटाए गए थे।

प्रेम सिंह की पत्नी प्रेमवती एक गुणवती, सुशीला, सरल प्रकृति वाली साधवी स्त्री थी। वह भी अपने नाम के अनुकूल गुणों को सार्थक करती थी। घर आये अतिथि का सत्कार, सेवा करना उसके जीवन का लक्ष्य बन चुका था। भूखों को भोजन देना, साधुओं की सेवा करना, पूजा करना, दान देना आदि उसके नित्यकर्म बन चुके थे। इतना होने पर भी परमात्मा ने चार पुत्रियों के पश्चात् सज्जन सिंह पुत्र रत्न दिया। पुत्रोत्पत्ति की प्रसन्नता में प्रेम सिंह ने गांव में दिसोटन किया। गरीबों को दिल खोल कर भोजन, वस्त्र और दान दिया। प्रेम सिंह अपने शुभ कर्मों में अपने गांव तथा गुहाण्ड में ख्याति प्राप्त कर चुका था।

प्रेम सिंह अपना अधिकांश समय खेत पर काम करने में व्यतीत करता, स्वयं काम करता और मजदूरों से भी काम करवाता। प्रेम सिंह को जहां मानवता से प्यार था वहां प्रकृति से भी प्यार था। उसने एक छोटा सा सुन्दर बगीचा लगवा रखा था। वह ऋतु अनुकूल सब्जी भी लगवाता था।

गर्मी की ऋतु थी, लूएं अपने पूरे यौवन पर थीं। सारा जंगल शुष्क एवं उजाड़ सा प्रतीत होता था। प्राणी को प्रातः 9 बजे के पश्चात् जंगल में रहना मृत्यु को

निमन्त्रण देने के तुल्य था, पर प्रेम सिंह के खेत का कुछ भाग अब भी हरियाली से भरपूर था। उसने अपने खेत में गर्मी की ऋतु के अनुकूल खरबूजे, तरबूज, ककड़ी, कोहला आदि बो रखे थे। खरबूजों की महक जंगली जानवरों, विशेषकर शृगालों को तथा मानवों को अपनी ओर चुम्बक की भांति आकृष्ट कर लेती थी। आस-पास के भूखण्ड में उसका खेत प्राणियों के लिए मरु उद्यान था। कीड़ी से लेकर कुंजर तक प्रायः सभी वन्य प्राणी किसी न किसी रूप में उसके खेत में शरण लेते थे।

प्रेम सिंह के खेत के पास से एक सर्वसाधारण मार्ग गुजरता था। आने जाने वाले व्यक्ति वहां अवश्य विश्राम करते थे। एक दिन चार साधु उसी मार्ग से गुजरे। साधुओं ने प्रातः से अन्न जल ग्रहण नहीं किया था। पैदल चलते-चलते साधु भूखे और प्यासे हो गये थे। मार्ग की थकावट और जठरानल की प्रचण्डता व प्यास की तीव्रता के कारण साधुओं के प्राण होठों तक आ गये थे। साधुओं के लिए पैदल चल कर किसी दूरस्थ गांव में पहुँचना असम्भव सा हो गया था, फिर भी साधु जीवन पर खेल कर आगे बढ़ रहे थे। इतने में उनकी दृष्टि प्रेम के मरुउद्यान पर पड़ी। वहां से प्रेम का खेत लगभग आधा मील था। साधुओं के लिए वह आधा मील तै करना हिमालय पार करने के तुल्य प्रतीत होता था। फिर भी मरता क्या न करता, साधुगण ज्यों-त्यों करके जेठ की चिलचलाती धूप में पसीने से तरवतर प्रेम के खेत में पहुँच गये। साधुओं की दुर्दशा को देख कर प्रेम सिंह ने आगे बढ़ कर उनका स्वागत किया, उन्हें उचित यथासम्भव आसन दिया। साधुओं ने प्रेम सिंह के खेत में पहुँच कर गोतम बुद्ध को गोद में बैठने वाले आहत पक्षी के समान सुख का अनुभव किया और नवजीवन सा प्राप्त किया।

साधु भूखे एवं प्यासे थे। साधुओं ने प्रेम सिंह से कहा—"बच्चा ! हम भूख से मर रहे हैं, हमारे प्राणों की किसी भांति रक्षा करो।" साधुओं की इच्छा एवं आवश्यकता अनुसार प्रेम सिंह अपने खेत से पके हुए खुशबूदार खरबूजे तथा तरबूज लाया। साधुओं ने खरबूजे एवं तरबूज जी भर कर खाए। जठरानल शान्त होते पर साधुओं की जान में जान आ गई, उनकी आंखों में ज्योति एवं मुखमण्डल पर साधुत्व के तेज की प्रकाश रश्मियां उदीयमान रवि की भांति प्रस्फुटित होने लगी। प्रेमसिंह ने दोपहर व्यतीत करने के लिए उन्हें चारपाइयां दी। साधु आराम करने लगे। दूसरी ओर प्रेम सिंह ने अपने नौकर को घोड़ी पर सवार करा साधुओं के लिए दोपहर का भोजन घर से लाने के लिए भेज दिया। साधुओं ने घण्टा भर ही आराम किया था कि इतने में प्रेम सिंह ताजा भोजन लेकर साधुओं की सेवा में उपस्थित हुआ। साधुओं ने जी भर कर भोजन खाया और ठण्डा पानी पिया। साधुजन प्रेम सिंह के आतिथ्यसत्कार, सेवा भाव सौम्य व्यवहार से अत्यधिक प्रभावित हुए। साधुओं ने 4 बजे तक आराम किया। 4 बजे

उठकर उन्होंने शीतल निर्मल जल में स्नान किया। प्रेम सिंह के प्रत्येक कार्य से हार्दिक शुद्ध प्रेम टपकता था।

वे साधु क्या थे, परमात्मा का रूप थे। प्रेम सिंह की परीक्षा करने आए थे। प्रेम सिंह के नाम के अनुसार व्यवहार से प्रभावित होकर साधु मण्डली ने चलने से पूर्व प्रेम सिंह से कहा—"बच्चा! हम आपके व्यवहार से अत्यन्त प्रसन्न हैं। आप मांगें; हम आपको मुंह मांगी वस्तु देंगे।" प्रेम सिंह ने प्रत्युत्तर स्वरूप करबद्ध साष्टांग प्रणाम किया और कहा—प्रभु! आपकी कृपा है, मुझे कुछ नहीं चाहिए, यह सब आपका ही आशीर्वाद है। आपकी केवल दया दृष्टि चाहिए। आपके दर्शनों से ही मैंने स्वर्ग का सा सुख प्राप्त कर लिया है। प्रेम सिंह ने स्वर्ग नरक दोनों के नाम सुने थे परन्तु स्वर्ग नरक के विषय में कभी गहन चिन्तन नहीं किया था। वह करता भी क्यों—उसे इसी धरती पर प्राय: जीवन के सभी सुख-सुविधाएं प्राप्त थे। फिर स्वर्ग एक मध्ययवर्गीय कृषक परिवार के व्यक्ति का विषय हो नहीं सकता। स्वर्ग और मोक्ष आदि विषय तो बुद्धिजीवी, अध्ययन शील एवं साधुओं के चिन्तन का विषय हो सकता है। साधुगण और प्रेम सिंह परस्पर बातें करते रहे। साधुओं के बार-बार आग्रह करने पर भी प्रेम सिंह ने कोई मांग नहीं की। प्रेम सिंह ने साधुओं को दक्षिणा स्वरूप कुछ रुपये और वह खरबूजा जो प्रात:काल ही मीठा भरकर ठण्डे जल में रखा हुआ था, सादर प्रस्तुत किया। साधुओं में से वरिष्ठ वयोवृद्ध साधु ने प्रेम सिंह से खरबूजा ग्रहण करते हुए, और यह उक्ति कहकर

साधु भूखा भाव का, धन का भूखा नाहिं।
जो तो धन का भूखा फिरे, सो तो साधु नाहिं।।

रुपये वापिस लौटा दिए और साथ ही दक्षिणा के खरबूजे का रसास्वादन किया। इतना मीठा खरबूजा साधुओं ने अपने जीवन में पहले कभी नहीं खाया चा। प्रेम सिंह अगाध श्रद्धा प्रेम भाव से प्रभावित होकर वरिष्ट साधु ने साधु मण्डली से कहा—"अब हमें प्रेम सिंह को बिना मांगा वरदान 'मोक्ष' दे देना चाहिए।" सभी ने रजामन्द होकर एक स्वर में प्रेम सिंह से कहा—"बच्चा! हम आपके सौजन्य व्यवहार से अत्यन्त प्रभावित एवं प्रसन्न हैं। आपका आचार-व्यवहार आपकी प्रसारित ख्याति से भी कहीं बढ़ कर है। अत: हम प्रसन्न होकर, यदि आप चाहो तो, 'मोक्ष' दिला सकते हैं।" साधुओं ने प्रेम सिंह के 'मोक्ष' के विषय में पूछने पर सरल शब्दों में उसे समझाते हुए कहा—"मोक्ष या मुक्ति का अर्थ है आवागमन से छुटकारा पाना अर्थात् बार-बार जन्म लेने और मरने से छुटकारा पाना ही मुक्ति है।" प्रेम सिंह सांसारिक सुख भोग, पुत्र, पत्नी, धरती, धन सम्पत्ति के मोह जाल में इतना वशीभूत हो चुका था कि इनके आगे उसे स्वर्ग या मोक्ष सब फीके लगते थे। दूसरे मोक्ष के सम्बन्ध में प्रेम सिंह ने अपने अनेक

जन्म-जन्मान्तरों में कभी सोचने का प्रयत्न भी नहीं किया था। भला एकाएक ऐसे गहन विषय को प्रेम सिंह कैसे समझ सकता था। अन्त में प्रेम सिंह ने यह कहते हुए कि मेरी मुक्ति के पश्चात् मेरी पत्नी, पुत्र विलख विलख कर मेरे वियोग में मछली की भांति प्राण दे देंगे। अतः मुझे 'मोक्ष' नहीं चाहिए। यदि मेरी मुक्ति हो जाती तो आप के प्राण कौन बचाता। जो घटना आज आपके साथ हुई है वह यहां अनेक व्यक्तियों के साथ प्रतिदिन होती हैं। मैं मोक्ष से प्राणीमात्र की सेवा करना कहीं अधिक श्रेयस्कर समझता हूँ। प्रेम सिंह का दो टूक कोरा उत्तर पाकर साधु मण्डली समझ गई कि प्रेम सिंह अभी परिवार मोह में लिप्त है इसे मोक्ष का ज्ञान नहीं है। बिना आवश्यता किसी को अमूल्य वस्तु देना ठीक नहीं होता। अतः सुखी रहो, बने रहो आदि आशीर्वाद देकर साधुगण चल पड़े।

प्रेम सिंह अपने सांसारिक कार्य-कलापों में व्यस्त रहा और अपनी प्रकृति के अनुसार सेवा करता रहा। यह कार्यक्रम कई वर्षों तक चलता रहा। मौत और ग्राहक का कोई समय और अनुमान नहीं होता। एक दिन प्रेम सिंह प्रातःकाल स्नान करके अपने किसी इष्ट मित्र की शादी में सम्मिलित होने के लिए घोड़े पर सवार हो चल पड़ा। सायंकाल होते-होते अपने लक्ष्य स्थान पर पहुँच गया। मित्र के पुत्र की बारात में प्रेमसिंह जैसे कई और अश्वारोही बराती बन कर चल पड़े। रास्ता लम्बा था। बारात में घोड़ों की होड़ होना स्वाभाविक था। किस का घोड़ा तेज है यह कह कर सभी ने अपने-अपने घोड़े ढीले छोड़ दिये। प्रेम सिंह का घोड़ा किसी से कम नहीं था। उसके अपने शरीर में भी यौवन ठाठें मार रहा था। दोनों ही यौवन पर गर्वित थे। प्रेम का घोड़ा पवन वेग से दौड़ने लगा और दूसरों से काफी दूर चला गया। घोड़ा इतना उत्तेजित हो गया था कि उसे रोकना कठिन हो गया था, प्रेम सिंह ने घोड़े को थपथपा कर कुछ ठण्डा किया ही था कि पीछे से अन्य अश्वारोही ने ललकारा। बस क्या था, प्रेम का घोड़ा चौका और बेकाबू हो गया। रास्ता अपरिचित एवं बीहड़, उबड़ खाबड़ था, घोड़ा बेकाबू था। अपने पास से दूसरे घोड़े को निकलता देख प्रेम सिंह के घोड़े ने जान की बाजी लगा दी। प्रेमसिंह भी असहाय घोड़े की काठी दृढ़तापूर्वक पकड़े चिपका बैठा था। अचानक घोड़ा एक वृक्ष के नीचे से गुजरने लगा कि प्रेम सिंह का सिर वृक्ष की मोटी टहनी से टकराया और पृथ्वी पर आने से पूर्व खरबूजे की भांति फट कर खील-खील हो धराशाही हो गया। प्रेम सिंह उफ तक भी न करने पाया कि उसके प्राण पखेरू उड़ गए। उसके सभी अरमान, बच्चों, बीवी का प्यार अन्दर ही रह गया। मरते समय भी उसके मन में परिवार प्यार ही था परन्तु इतनी दूर था कि बीवी बच्चों के दर्शन न कर सका और न एक शब्द कह सका।

अन्तिम समय में प्रेम सिंह के हृदय में पारिवारिक मोह उद्वेलित हो रहा था। उसके प्रेम का परिणाम यह रहा कि उसका जन्म उसके गांव में कुत्ते के रूप में हुआ। कुत्ते के रूप में प्रेम सिंह के परिवार के बच्चों ने उसे अपना पालतू कुत्ता बना लिया। कुत्ते के रूप में उसने अपना कर्तव्य पालन किया। वह अनाज निकालने के दिनों में खलिहान की रखवाली करता। आवश्यकता अनुसार खेत और घर की रखवाली करता। जब घर वाले खेत पर कार्य करने जाते तो वह घर की रखवाली करता। रात को सीमा-प्रहरी की भांति घर का पहरा देता। बच्चों ने उसका नाम भोला रखा।

गर्मी की ऋतु थी, फसल कटाई का समय था। परिवार के प्रत्येक व्यक्ति में से दो-दो बनते थे। भोला भला किसी से पीछे कैसे रह सकता था। दिन भर भूखा प्यासा घर की रखवाली करता और रात को रात्रि भर खलिहान में पहरा देता। परिणाम यह हुआ कि वह रुग्ण हो गया। रोगी अवस्था में भी जैसा बनता कार्य करता रहा। एक अवस्था ऐसी आई कि सूख कर कांटा हो गया और खेत या खलिहान तक पहुँचने में असमर्थ हो गया परन्तु तिस भर भी वह घर के सिंह पौर पर घर की रखवाली करता। उसकी दयनीय अवस्था पर किसी को तरस नहीं आता।

एक दिन वही साधुमण्डली उसके मकान पर भिक्षाटन हेतु पधारी, साधुओं और कुत्ते भोला (प्रेम सिंह) की आंखें मिलीं, दोनों पक्ष एक दूसरे को पहचान गए। साधुओं ने भोला (प्रेम सिंह) से फिर संकेत किया कि अब भी मोक्ष प्राप्ति का स्वर्णावसर है परन्तु इस योनी में आने पर भी भोला मोक्ष के महत्व को नहीं समझ पाया था और साधुओं की प्रार्थना को नकार दिया। साधु उसके भौंकने के भाव को समझ कर भिक्षाटन लेकर चले गये। भोला कार्य अधिक्य के परिणाम स्वरूप स्वस्थ न हो पाया और अतृप्त इच्छा को हृदय में संजोए संसार से चल बसा।

उसकी अतृप्त इच्छा के परिणाम स्वरूप उसने (प्रेमसिंह) ने सर्प की योनि धारण की। वह सर्प के रूप में अपने मकान में या आस-पास रहता रहा। इस प्रकार कई वर्ष व्वतीत हो गए। सर्प योनि में भी परिवार के व्यक्तियों से प्यार करता रहा, उनके क्रिया-कलापों को देखता रहा।

एक दिन प्रम सिंह की पौत्रवधु अपने नन्हे मुन्ने पुत्र को पालने में सुला कर पानी भरने चली गई। कूआं घर से दूर था घर में कोई व्यक्ति नहीं था। माता के आने से पहले जो पुत्र पालने में सोया हुआ था रोने लगा। सर्प रूप में प्रेम सिंह के प्यार ने

उसे पौत्र कीं सेवा करने के लिए बाध्य किया । वह अपने पौत्र को इस प्रकार बिलबिलाता नहीं देख सकता था । वह झटपट मकान छत पर गया वहां से छत के मार्ग से पालने की रस्सी के पास आकर लोहे के कुण्डे में बैठ अपनी पूंछ का लपेटा पालने की रस्सी से लगाकर जोर का झटका दिया कि पालना हिलने लगा और पालना हिलने से बच्चा रोने से बन्द हो गया। थोड़ी देर में बच्चे की माता पानी लेकर घर आई। माता को आया जान कर बच्चा फिर रोने लगा। माता बच्चे को लेने के लिए आगे बढ़ी कि सर्प से डर कर एक छपकली पालने में गिर पड़ी। छपकली के पड़ते ही माता की दृष्टि ऊपर गई तो वह सर्प को ऊपर देख कर घबरा गई और जोर-जोर से चिल्लाने लगी। उसकी आवाज सुन कर प्रेम सिंह का पुत्र सज्जन सिंह तथा एक अन्य रिश्तेदार आ पहुँचे । रिश्तेदार ने सर्प को लम्बी लाठी से जमीन पर गिरा दिया और सज्जन सिंह ने लाठियों से सर्प के शरीर के अंग प्रत्यंग तोड़ कर ढीले कर दिए और सिसकती अवस्था में उसे उठा कर बाहर साधारण मार्ग के पास सूखी झाड़ियों पर डाल दिया।

संयोगवश वही साधु मण्डली उसी मार्ग से गुजर रही थी। साधु मण्डली सिसकती अवस्था में देख कर उसे कहा—प्रेम सिंह अब क्या विचार है। अब सर्प (प्रेम सिंह) के विचार बदल चुके थे। प्रेम सिंह को उसकी सेवा का फल जिस रूप में मिला, उससे वह भली भांति अवगत हो चुका था। अब वह साधुओं की प्रार्थना से सहमत हो चुका था। अब वह चाहता था कि साधु उसकी अन्तिम इच्छा (मोक्ष) पूर्ण करें। उसकी इतनी दयनीय अवस्था थी कि वह हां करना चाहता था परन्तु हां करने से पूर्व ही उसके प्राण पखेरू हो गये।

ण— ण से कोई शब्द न बने, बने न कोई अक्षर।
केवल ण लिखने से, नहीं है कोई डर ।।

म— मनन कर, मनन कर, मनन से हर काम ले।
मनन करके ही तू, इस जग को पहचान ले ।।

लि— लिख लिख कर पन्ना भरा, भर दिया एक पेज।
और ज्यादा क्या लिखूं, अभी नहीं है एज ।।

❀ ❀

यह भी रूप है

उस नारी का
जो मदहोश
सारा जीवन
अपने लिए नहीं
अन्य के लिए भी
बलि कर देती है
सर्व-हित पर
खिझ कर नहीं
उस मुद्रा में
जो शिव का
अनुपम रूप है
पार्वती का नहीं
सर्व-जग का भूप है,
यह सुहासिनी-सी
मन्दाकिनी-सी
कल-कल वादिनी-सी
अविरल-अजस्र
अविरल धारा-सी
बिछ जाती हो
मरु-जीवन में
जहां न श्वास
न गति
न क्षत की आश,
जहाँ चहचहाले
कोई विहङ्ग
पंख फैला कर
आजीवन की
स्वास लेकर ।।
पर—

वह भी रूप है

उस नारी का
बाह्य जिसका
अद्भुत स्वप्न
कृत्रिमता ही
जिस जीवन का
अभिन्न अंग है
जो मृग तृष्णा-सी
स्वर्ण-कलश-सी
पूर्व किरण-सी
मँजु तन-सी
बिछ जाती हो
तृप्त-जीवन में
जहां हास-स्वास
सुख-सम्पदा
निरन्तर बह रही
पूर्ण वैभव लेकर
सोख लिया हो
बन तप्त किरण
जीवन का उपहार
पूर्व सन्ध्या पर
ले तम की आंधी
फैल गई हो
कराल रूप ले
सर्व-नाश-सी
निरवस्त्र-सी
भग्न-आश-सी
ठहाका भर कर,
जहां कोई विहङ्ग
क्षत-विक्षत हो
गिर जाता हो
भूतल पर ।।

—आजाद सिंह मलिक (मास्टर)
राजकीय उच्च विद्यालय, रूखी (सोनीपत)

दूध--एक अमूल्य भोजन

—अजित दलाल

भारतीय सांस्कृति में दूध की अलग महता है। दूध को सदैव भारत में अमृत के रूप में जाना जाता रहा। वेदों तथा उपनिषदों में दूध की खुल कर प्रशंसा की गई है तथा भारतीय सभ्यता के प्रतीक 'हवन' में भी घी का प्रयोग होता है जो दूध से प्राप्त होना है। श्री कृष्ण जी को आज हम भगवान का स्वरूप मामते हैं जो मूल रूप से गौ पालक या ग्वाले थे, इसके पीछे भी गाय और दूध के प्रति छुपी पड़ी भारतीय श्रद्धा का अन्दाजा भी सहज ही लगाया जा सकता है।

आज भी दूध की महत्ता को समझ कर राष्ट्र में दूध उत्पादन बढ़ाने पर जोर दिया जाता है इसी कारण भारत सरकार ने डेरी विकास कार्यक्रम तथा सघन पशुधन विकास कार्यक्रम शुरू करके देश में श्वेत क्रान्ति हेतु सतत् प्रयत्न प्रारम्भ किये।

आधुनिक विज्ञान और टैक्नोलोजी ने भी यह सिद्ध कर दिया है दुनिया में आज तक उपलब्ध भोज्य पदार्थों में दूध सर्वश्रेष्ठ भोजन है। दूध में वे सभी तत्व मौजूद हैं जो शरीर के विकास तथा मानसिक व शारीरिक सन्तुलन हेतु आवश्यक हैं। दूध बच्चों, बूढ़ों तथा युवकों, महिलाओं व पुरुषों सभी के लिए आवश्यक है।

रासायनिक तौर से दूध एक मिश्रण है जिसमें 65 से 85 प्रतिशत तक पानी होता है। शेष पदार्थ को कुल ठोस पदार्थ या अंग्रेजी में टोटल सोलिड मैटर कहा जाता है। बसा या फैट दूध का मुख्य तत्व है जो सामान्यतः 2 से 12 प्रतिशत के मध्य मौजूद रहता है। शेष ठोस पदार्थ जो वसा या फैट के अलग किए जाने पर बच जाता है, उसे एस. एन. एफ. (सॉलिडस नॉट फैट) कहा जाता है।

इस श्रेणी में प्रोटीन, विटामीन, लैक्टोज, कार्बोहाइड्रेट तथा खनिज पदार्थ यथा लोहा, कैलशियम, मैंगनीज, बेरियम, गलैक्टोज, सोडियम तथा पोटाशियम आदि आते

हैं जो दूध में पर्याप्त मात्रा में मौजूद रहते हैं। इनके अतिरिक्त कई प्रकार के लवण तथा क्षार भी मौजूद रहते हैं जो शारीरिक पाचन क्रिया हेतु आवश्यक हैं।

एक विशेष ध्यान देने योग्य बात यह है कि किन्हीं भी दो प्राणियों तथा एक प्राणी के भी दो समयों के दूध की संरचना एक प्रकार की मिलना कठिन है। दूध संरचना में भिन्नता के अनेक कारण हैं जिनमें प्रमुख है—पशु को दिये जाने वाले चारे तथा अन्न की मात्रा, विधि व गुणों में अन्तर, पशु का स्वास्थ्य, पशु की शरीर क्रियात्मक प्रणाली, पशु को दिए जाने वाले पानी का समय अन्तर तथा मात्रा, मौसम का प्रभाव, दूध के निकालने के समय में अन्तर तथा दूध निकालने की विधि आदि।

वसा या फैट दूध का एक मुख्य तत्व है जो दूध में छोटे छोटे कणों में मौजूद रहता है। इन वसा कणों को फैट गलोब्यूल कहा जाता है। घी, मक्खन व क्रीम में वसा ही बिलौकर या तेजी से घुमा कर इकट्ठा की हुई अवस्था में होता है। वसा शरीर में सर्वाधिक ऊर्जा का निर्माण करता है। शरीर में खून का निर्माण मुख्यतः वसा से ही होता है साथ ही वसा हमारे शरीर की हड्डियों के निर्माण तथा इनके रख रखाव में भी शक्ति प्रदान करता है। एक ग्राम वसा मानव शरीर को नौ किलो कैलोरी ऊर्जा प्रदान करता है। पुरुष मानव शरीर में वीर्य का निर्माण भी वसा द्वारा ही होता है, जिसके माध्यम से आज विश्व में प्रजनन प्रणाली प्रचलन है।

लैक्टोज, ग्लूकोज का ही दूसरा रूप है तथा भौतिक व रासायनिक दोनों दृष्टि से इसमें वही गुण हैं जो ग्लूकोज में विद्यमान हैं, यहां तक कि दोनों का रासायनिक सूत्र भी एक ही है। सम्भवतः प्राकृतिक रूप से प्राप्त लैक्टोज पाचन में ग्लूकोज से भी श्रेष्ट है।

विटामीन तो निश्चिततः शरीर व मानसिक विकास हेतु जरूरी हैं। दूध में विटामीन—ए, डी, के, ई, बी–I तथा बी–II प्रर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हैं साथ ही विटामीन सी तथा एल भी ठीक मात्रा में मौजूद रहते हैं।

प्रोटीन भी शरीर के लिए आवश्यक है तथा दूध में इसकी मात्रा 3 से 9 प्रतिशत के बीच रहती है। दूध में मौजूद प्रोटीन रासायनिक क्रिया द्वारा प्रोटियोलिसीस में परिवर्तित होता रहता है और इस प्रकार दूध की पाचन शक्ति में बढ़ोतरी करता रहता है।

खनिज पदार्थ जहां शारीरिक व मानसिक विकास हेतु जरूरी है वहां ये खून में गाढ़ापन लाते हैं। वीर्य शक्ति में प्रजनन गुण जिन्हें जीन व हारमोन कहा जाता है मुख्यत: दूध में उपस्थित खनिज पदार्थों से गहरे रूप से प्रभावित रहते हैं और इनकी शक्ति मूल रूप से दूध लवण व खनिजों पर आधारित रहती है।

दूध के एक किण्वन्तित उत्पाद दही की रासायनिक गुणशक्ति दूध के समकक्ष ही रहती हैं हालांकि इनके भौतिक गुणों में कई परिवर्तन हो जाते हैं। दही दूध की अपेक्षाकृत अधिक पाचय होती है क्योंकि दूध जमाए जाने पर जब दही का निर्माण होता है तब तक दूध फरमेंट या किण्वित हो चुका होता है जहां उसमें क्षार शक्ति (एसीडीटी) कुछ अधिक तो हो जाती है किन्तु बहुत अधिक नहीं जो हानिकर हो सके। अत: दही में क्षारता बढ़ जाने से इसकी पाचन शक्ति में जहां वृद्धि होती है वहां इसकी वसा मात्रा भी संयुक्त अवस्था में आ जाती है और दूध वसा या मिल्क फैट, फ्री फैटी एसिड में बदले जाने को बहुत कम सम्भावना बच जाती है फलत: दही दूध से अधिक गुणकारी हो जाती है। दही यों तो हर प्राणी के लिए अत्यन्त लाभप्रद है किन्तु बच्चों, वृद्धों व महिलाओं के लिए विशेष रूप से लाभकारी है। युवकों को दही की अपेक्षा दूध के प्रयोग को अधिक महत्ता देनी चाहिए।

इसी प्रकार दूध से बने अनेकों दूसरे उत्पाद यथा पनीर, मक्खन, खोआ, घी, छन्ना, आईस क्रीम, क्रीम व विशेष तथा माल्टिड दूध जो आज बाजार में उपलब्ध रहते हैं निश्चित तौर से स्वास्थ्य के लिए लाभ प्रद हैं परन्तु यदि गाय, भैंस या बकरी का ताजा निकला हुआ दूध किसी को प्राप्त होता है तो निश्चितत: उसे अमृत की प्राप्ति हो रही है।

दूध हमारे भारतीय सांस्कृति व सभ्यता का प्रतीक ही नहीं है बल्कि वैज्ञानिक दृष्टिकोण से भी आज विश्व के विज्ञानिकों ने यह स्वीकार किया है कि दुनिया में आज तक उपलब्ध सभी भोज्य वस्तुओं में दूध सर्वश्रेष्ट एवम् सर्वाधिक गुणकारी है। दुर्भाग्य से पिछले कुछ वर्षों से भारत में दुध का प्रयोग लगातार कम होता जा रहा है जिसका प्रभाव हमारे राष्ट्र के जन स्वास्थ्य पर आसानी से देखा जा सकता है। यह निश्चित है कि राष्ट्र के विकास व जनस्वास्थ्य विकास हेतु दूध के प्रयोग को अधिक लोकप्रिय बनाना होगा, जिसके लिए देश में दूध उत्पादन भी बढ़ाना होगा।

शहीदों के प्रति सच्ची श्रद्धाञ्जलि—लेकिन कब ?

—ब्रह्मचारी धर्मवीर मलिक

आज मानव स्वार्थवश अपनी मशीनी जिन्दगी में इतना व्यस्त है कि उसे किन्हीं महापुरुषों या शहीदों की कल्पनाओं एवं आदर्शों पर चलने का विचार कभी प्रेरित नहीं करता। उनके आदर्श पर चलने का विचार तो तभी प्रेरित करे ना जब वह उनको कभी याद भी करता हो। जब हम उनको याद ही नहीं करते, तो हमें यह भी विचारना चाहिए कि उनसे प्रदत्त जो स्वतन्त्रता सुख है उसको भोगने के भी हम अधिकारी नहीं हैं। सारा दोष सामान्य वर्ग पर तो मढ़ा नहीं जा सकता क्योंकि उसमें से आधा वर्ग तो अज्ञानावरण से ही युक्त है। उन बेचारों को तो कुछ पता नहीं और न ही उनकी कुछ चलती है। एवं जिनकी चलती है वे कुछ करते नहीं। कुछ करते भी नहीं, फिर भी स्वयं को नेता कहते हैं तथा अपने आपको 'सिविलाइज्ड' समझते हैं। तरह-तरह के सम्मेलनों की रचना करके उनमें भाषण झाड़ते हुए, जनता जनार्दन को बहकाते हुए, 'केवल पैसा ही सब कुछ है' मानने वाले, विलासिता के जीवन में फंसे हुए तनिक भी विचार नहीं करते कि हम शहीदों के बलिदानों का जो रट्टा लगाते हैं क्या उनके सिद्धान्तों पर चलते भी हैं? अथवा सिर्फ कुर्सी से चिपके रहने के लिए ये सब प्रोपगेन्डा रचा जाता है। परन्तु इन व्यर्थ की बातों से उन्हें क्या लेना। वे तो बस तरह-तरह के वायदे करने के बाद 'एयरकन्डीशन' कमरों अथवा सेठों द्वारा बुक कराये गए 'फाइव स्टार' होटलों के कमरों में जा विराजते हैं फिर उन्हें गरीबों की झोंपड़ियों का ख्याल सताये भी तो कैसे? स्वार्थवश 'विषकुम्भं पयोमुखम्' की नीति अपनाते हुए व कूटनीतिज्ञ का पार्ट बखूबी अदा करते हुए कभी कोई 'शहीद-दिवस' मना भी लिया तो उससे क्या फायदा जब उनके (शहीदों के) स्वप्नों का भारत बिखरता चला जा रहा हो। जिन्होंने हमें आजादी दिलाई, उनके विचार तो कल्पना से उत्पन्न होकर क्रियात्मक रूप में परिवर्तित होते थे। परन्तु आजकल तो इस का विल्कुल उलट हो रहा है।

उन वीरों में कोई हीन-भावना या दब्बूपन की भावना नहीं पनप पाती थी क्योंकि वे खुले दिमाग के होते थे। छल कपट से एकदम रहित। इसीलिए वे किसी के

बहकावे में नहीं आते थे, अपितु अपने मन की करते थे। जब पहले-पहल भगत सिंह का मन अंग्रेजों के खिलाफ भड़क उठा तो कुछ लोगों ने उसे वहीं दबा देने का प्रयत्न करते हुए कहा—"अरे नादान ! चन्द सिरफिरों की टोली में मिलकर तू अपनी जान को ही खतरे में डालेगा। बागी होने में कुछ नहीं रखा। तेरे पास पैसा है, भरा-पूरा परिवार है। जिन्दगी सुख से कट जायेगी। वतन से ज्यादा मोहब्बत जिन्दगी बरबाद कर देती है।" तब भगत सिंह ने निडरता पूर्वक कहा था—

"माना कि मोहब्बतेवतन,
जिन्दगी बरबाद करती है।
मगर ये भी क्या कम है कि,
मर जाने के बाद दुनिया याद करती है ।।"

जिन्होंने भी वतन के लिए कुर्बानी दी है, उन्हें ये बिल्कुल भी पसन्द नहीं था कि उनकी मर्जी के चने को कोई दुश्मन खा जाये। फलतः हमें स्वतन्त्रता दिलाने हेतु 'कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन' के अनुसार उन्होंने कर्म किया। उस कर्म का फल उन्हें तो फाँसी के रूप में मिला, परन्तु हमें तो स्वतन्त्रता के रूप में मिला है। उस का (स्वतन्त्रता रूपी फल का) उपयोग भी हमें उनके विचारों पर चलकर करना चाहिए। लेकिन, दुर्भाग्यवश उसको तो आजकल का 'सिविलाइज्ड मैन' रूढ़िवाद कहता है।

यदि आज हम उन वीरों के स्वप्नों का भारत बनाना चाहते हैं एवं अपने पूर्वजों द्वारा निर्दिष्ट अगम्यरूपा 'मानवी पदवी' को प्रतिष्ठित करना चाहते हैं तो हमें उन शहीदों के दुःखों को स्मरण करना होगा। सोचना होगा कि कितने कष्टों से ये आज़ादी हमें मिली है। जब हम इस प्रकार से विचारने लगेंगे तो हमें याद आयेंगे वे दृश्य जब भगत सिंह व बटुकेश्वर दत्त जैसे वीर फांसी के फन्दे को चूमते हुए किसी कवि की कल्पना के अनुसार गा रहे थे—

"बड़ा ही गहरा दाग़ है यारो, जिसका गुलामी नाम है,
उसका जीना भी क्या जीना, जिसका देश गुलाम है।
सीने में जो दिल था यारो, यारो आज बना वो शोला.......
मेरा रंग दे बसन्ती चोला, माँ ए रंग दे बसन्ती चोला ।।"

फिर तो हमारी स्मृति पटल पर उभर आयेंगे चन्द्रशेखर व सुभाष जैसे वे शहीद, जिन्होंने हमारे लिए गोलियां खाईं तथा जेलों में सड़ते रहे। उन वीरों की याद तो हमें

बिल्कुल ही रुला देगी जो फांसी से भी बदतर 'काले पानी' की सजा देकर अपनी प्यारी भारत माता से दूर कहीं समुद्रों के बीच स्थित टापूओं की जेलों में भेज दिये गये थे। जहां से मौत के सिवाय न तो कोई उन्हें छुड़ा सकता था और न ही उनकी मदद कर सकता था। स्वदेश में जन्मे हुए भी जो जबरदस्ती परदेशी बना दिए गए थे। तड़पाती थी उन्हें वहां भारत-भू की गुलामी। याद आती थी उन्हें वहां अपने गांवों की वे गलियां, वे मन्दिर जहाँ वे कभी अपनी मां द्वारा दी गई मक्खन-रोटी खाते हुए एवं उछलते-कूदते हुए घंटियां बजाया करते थे। मजबूर हो गये थे बेचारे, जग ने उनके लिए भेष जो बदल लिया था। सिर्फ आंखों के आंसुओं या उड़ती हुई पक्षियों की डारों के सिवा उनका वहां कोई साथी नहीं था। भारत माता के प्रति उमड़ते हुए अपने सन्देशों को भी वे अगर किसी को कहना चाहते तो उड़ती हुई पक्षियों की डारों को ही कह सकते थे। देखिए ऐसे ही किसी स्थल से मर्माहत होकर सहृदय कवि ने कितना सुन्दर लिखा है —

"ए पन्छी, पंछी हम किस्मत के मारों को, भूल न जाना,
आते जाते खैर खबर सब लोगों की दे जाना।
ले जाना सन्देश, सन्देश हम परदेशी हो गए—
छूटा अपने देश हम परदेशी हो गए।

हमारा इतिहास बतलाता है कि भगत सिंह, सुभाष चन्द्र बोस, रानी लक्ष्मीबाई, वीर सावरकर, महात्मा गांधी व चन्द्रशेखर आजाद जैसे जितने भी क्रान्तिकारी हुए हैं, सब, "जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी" के सिद्धान्त को लेकर चले। परन्तु आज हमारे देश का युवा-वर्ग अपनी, प्राचीन परम्पराओं को भूलकर पाश्चात्य सभ्यता के सुवर्णमय पाश में 'भेड़ चाल' का अनुसरण करते हुए बुरी तरह फंसा जा रहा है। उसे कोई 'गाइड' करने वाला ही नहीं। जब नेताओं में ही रिश्वतखोरी, स्मगलिंग आदि का बाजार गर्म है तो वे किस प्रकार से देश का सुधार करेंगे तथा कैसे वे युवा पीढ़ी के लिए उचित शिक्षा आदि की व्यवस्था कर सकेंगे। इसके अभाव में देश के भावी कर्णधार 'मिसगाइड' नहीं होंगे तो और क्या होंगे। वर्तमान में तो नेता वर्ग धन कमाने व कोठियां बनाने में लगे हुए हैं। उन्हें देख कर ऐसा लगता है कि जैसे ये सब उनके साथ जाएगा। उन्हें समझना चाहिए कि श्री रामचन्द्र, हरिश्चन्द्र, रावण, मान्धाता व सिकन्दर जैसे प्रख्यात सम्राट् भी अपने साथ कुछ नहीं ले जा सके। मरते समय सब के सब खाली हाथों गए। फिर उनकी तो हैसियत ही क्या है। जिन्दगी किसी के साथ वफादारी भी तो नहीं करती। अतएव किसी कवि ने कहा है कि—

जिन्दगी तो बेवफा है एक दिन ठुकराएगी।
मौत महबूबा है अपनी साथ लेकर जाएगी॥

इसीलिए अय् ! मानव देहधारी शैतानों ! कुछ सम्भलो। यह संसार परिवर्तन शील है। इसमें पैदा हो करके मरना तो एक दिन सबको पड़ता है। परन्तु पैदा होना सफल तो उसी का है जो देश को तरक्की के मार्ग पर ले जा सके एवं वंश का नाम उज्जवल कर सके। तस्मादेव किसी विज्ञ ने कहा है कि—

"परिवर्तनशीलसंसारे मृतः को वा न जायते।
स जातो येन जातेन याति वंशः समुन्नतिम्।"

आज हम उन महापुरुषों के उपकारों को भूलकर कृतघ्न हो गये हैं। देखिये— कवि लोग तो फूलों के मुख से भी शहीदों के प्रति उद्‌गारों का सृजन करा देते हैं—

"मुझे तोड़ लेना वनमाली,
उस पथ में देना तुम फैंक।
मातृभूमि पर शीश चढ़ाने,
जिस पथ जावें वीर अनेक॥"

और हम तो मनुष्य हैं। परमात्मा ने हमें बुद्धि दी है। अतः हमें विवेकपूर्वक विचारना चाहिए कि जिन लोगों ने जिन स्वप्नों व जिन आदर्शों को लेकर हमें जो आजादी दिलवाई, उस आजादी का उपयोग करने के लिए सच्चा अधिकारी बनने हेतु एवं उनके स्वप्नों को पूरा करने के लिए, उनके द्वारा निर्दिष्ट उन आदर्शों पर, जिनमें कि 'आत्मवत् सर्वभूतेषु' का सार निहित है, चलना चाहिए। तभी हम उनके प्रति सच्ची श्रद्धाञ्जली अर्पित कर सकेंगे और तभी हम गर्व से सिर उठाकर फिर से कह सकेंगे :—

'एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः॥
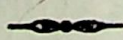
आज के नेता— और गरीब जनता

—सुधीर कुमार
शास्त्री (द्वितीय वर्ष)

★

"आसमाँ की शोभा शून्य से नहीं सितारों से है।
देश की शोभा गद्दारों से नहीं वफादारों से है॥
मनुष्य की शोभा उसके रंग रूप से नहीं।
उसके उच्च चरित्र सद विचारों से है॥"

आज देश में कितने नेताओं के सदविचार है यह आज आपके समक्ष हैं। दुनिया को तरह-तरह से बहका कर अपनी गद्दारी का परिचय दे रहे हैं। बस इन नेताओं को क्या चाहिए अपनी गद्दी, इस गद्दी के लिए चाहे कुछ भी क्यों न करना पड़े। तरह-तरह से दुनिया को ठग कर अपना मतलब सिद्ध कर रहे हैं। अब नेताओं के चाल-चलन से जनता उक्ता गई है। नेताओं का तो बस एक ही काम रह गया है, झूठे वायदे तथा पर निन्दा करनी। जहां भी अपना स्वार्थ दीखे उसी के पीछे वाह वाह करना। इस तरह आज देश के नेता देश को उन्नति की तरफ नहीं बल्कि अवन्नति की ओर ले जा रहे हैं।

भारत वर्ष स्वतन्त्र होने से पहले देश में कितनी बुरी तरह से जातिवाद का जहर था, जब देश स्वतन्त्र हुआ तब उस जातिवाद का जहर तो कम हुआ परन्तु समाप्त नहीं हुआ। उसी जातिवाद का सहारा लेकर पुनः ये नेता लोग उसी जातिवाद का जहर फैला रहे हैं। इस तरह कोई तो अपने आपको जाटों का और कोई अपने आपको हरिजनों का ठेकेदार मानता है। इस प्रकार से जातिवाद का जहर फैला रहे इन नेताओं से बढ़ कर और क्या गद्दारी हो सकती है। जब बाड़ खेत को खाए तो खेती कैसे सफल हो वाली बात है। जब रक्षक ही भक्षक बन जाए तो इससे बढ़कर और क्या बुराई होगी। इन नेताओं को चाहिए था कि जितनी देश में बुराई बढ़ रही है उसको खत्म करे। इसके विपरीत ये दुगनी बुराई को फैला रहे हैं, रिश्वतखोरी भ्रष्टाचारी में न जाने कितने नेताओं का हाथ होता है। आज गरीब, किसान, मजदूरों पर न जाने कितने अत्याचार

हो रहे हैं। रोज-ब-रोज की महंगाई ने गरीबों की कमर तोड़ दी है लेकिन फिर भी ग्राज के ये नेता लोग यों कहते हैं कि हम देश से गिरीबी मिटायेंगे, कोई पांच साल का ग्राश्वासन देता है, कोई दश साल का; क्योंकि ग्राश्वासन देना तो इनका काम हो गया है ग्रौर ग्राश्वासन न दे तो इनको ग्रागे कौन ग्राने दे। ग्रौर जब चुनाव होता है ग्रौर उसमें जीतने के बाद इनका क्या व्यवहार होता है वह सब को विदित है। महंगाई ग्रपने पूरे नव यौवन पर है उस महंगाई का फायदा इन नेता लोगों को ग्रौर बुर्जवा वर्ग को ही मिलता है।

ये नेता लोग मजदूरों की मजदूरी में 10 या 15 रुपये की वृद्धि करके ग्रपने ग्रापको यों समझते हैं कि मैंने इन पर कितना ग्रहसान किया है परन्तु महंगाई जो दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है यानी तिगुनी, चौगुनी हो रही है, हर वर्ष बजट में किसी भी वस्तु का मूल्य घटने की ग्रपेक्षा बढ़ता ही जा रहा है, ऐसी स्थिति में 10 या 15 रु० की वृद्धि में मजदूर ग्रपना कैसे गुजारा चला सकता है। किसी शायर ने कहा भी है कि—

उन्हीं को लूटते हैं, ग्रौर उन्हीं पर दान करते हैं।
ये कहते हैं कि हम गरीबों पर, बड़ा ग्रहसान करते हैं॥

लोगों का खून चूस-चूस कर लाखों करोड़ों रुपये कमा कर फिर उसी में से थोड़ा बहुत दान देकर नेता दानवीर कहलाता है। ग्राप लोग सोचते हैं कि नेताजी तो बहुत ग्रच्छे हैं क्योंकि इन्होंने गांव का पुल बनवा दिया, स्कूल या कमैटी में कुछ रुपये दान कर दिये। ग्रौर फिर कभी गांव में ग्राते हैं तो ग्राप फूलमाग्रों द्वारा उनका स्वागत करते हैं। यह नहीं सोचते कि ग्राखिर इनके पास इतना पैसा ग्राया कहां से ? ग्राप लोगों के ही रुपये ठग कर फिर उन्हीं में से कुछ रुपयों का पुल या स्कूल बनवा दिया ग्रौर ग्रपने ग्रापको ये सोचते हैं कि मैंने इन पर बड़ा ग्रहसान किया है तथा वही शैतान ग्राप लोगों की जिन्दगी बर्बाद करने में लगा हुग्रा है ग्रौर फिर वही दानवीर बन जाता है।

दूसरी तरफ वह किसान जो दिन भर महनत करके खून-पसीना एक करके ग्रन्न उत्पादन करता है, उसी गरीब किसान के ग्रन्न को मिट्टी के भाव खरीद कर ये पूंजोपति लोग इन नेता लोंगों के बल पर सांप की कुण्डली लगा कर बैठ जाते हैं तथा ऐश ग्राराम से रहते हैं। वे इन गरीब किसान मजदूरों का खून चूस रहे हैं।

ग्रब देश को स्वतन्त्र हुए तो 34 वर्ष बीत चुके हैं परन्तु ग्रभी भी भारत वर्ष की जनता ग्राधे से ऊपर गरीबी की रेखा में ग्राती है, 25 प्रतिशत मध्यम दर्जे में, बाकी 20 प्रतिशत के लगभग लोग ही सारी सम्पत्ति पर ग्रपना ग्रधिकार किये बठे हैं। ग्रौर उन 20 प्रतिशत लोगों के पीछे लग कर ये नेता लोग ग्रपना स्वार्थ सिद्ध कर रहे हैं तथा

दूसरी तरफ जनता को रोटी भी खाने को नहीं मिल पा रही है। किसी शायर ने कहा भी है कि—

तड़प रहा इन्सान भूख से,
दानव बदले भेष को।
ये कैसी आजादी दे दी,
तुमने मेरे देश को॥

इस तरह एक तरफ तो इन्सान भूख से बिलख रहा है तथा दूसरी तरफ ये नेता लोग वेष को बदल कर यानि सच्चा (?) समाज सेवक बन कर जनता को भेड़िये की तरह खा रहा है। जनता की आवश्यकता पूरी नहीं हो पा रही है तो ऐसी आजादी से क्या फायदा जब भ्रष्टाचार, चोरबाजारी, लूटमार, महंगाई, बेकारी, बेरोजगारी दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। ये सब बातें तो पहले भी थीं और अब भी हैं। जबकि देश को स्वतन्त्र होने के पश्चात् तो चाहिए था कि व्यवस्था ठीक ढंग से चले, सभी को रोजगार मिले तथा जनता को शिक्षित करे परन्तु अब विपरीत है। जनता को चुल्हा टैक्स आदि अनेक करों के बोझ से दबा कर रखा हुआ है।

आज किसी के पास तो इतना पैसा है कि खर्च नहीं कर पा रहे हैं तथा उस पैसे को भोग-विलास में, भ्रष्टाचार में पानी की तरह बहा रहे हैं तथा कोई इस हालात में है कि भरपेट रोटी नसीब नहीं होती है। तो इन नेताओं को चाहिए कि जो ये पूंजी-पति लोग हैं उनसे सम्पत्ति लेकर गरीब जनता में वितरित कर दें। परन्तु आज यह बात तो कहां, उल्टा मजदूरों पर अत्याचार कर रहे हैं। मील मालिकों का तथा भट्टे के ठेकेदारों का एवं बुर्जुवा वर्ग के लोगों का गरीब जनता के प्रति कितना बुरा व्यवहार होता है वह सबको विदित है। वेतन कम देते हैं तथा मजदूरों को गाली देकर या अन्य कई ढंगों से दबा कर रखा जा जाता है। जो कोई मजदूर इनका विरोध करे तो उसको मजदूरी से निकाल दिया जाता है। आखिर बेचारे मजदूर को चुपचाप अन्याय को सहन करना पड़ता है। भूखा मरता क्या नहीं करता। इस तरह से ये भेड़िये अपना दमन-चक्र गरीब जनता पर चला रहे हैं तथा जनता को तरह-तरह से बहका रहे हैं।

जब तक इस देश से इन भेड़ियों के कुचक्र को नहीं कुचला जाता तब तक ये भेड़िये यों ही गरीब जनता को खाते रहेंगे। यानि इन नेताओं का यों हि अत्याचार चलता रहेगा। रिश्वत खोरी, बेरोजगारी, लूटमार, महंगाई बेकारीयां ही चलती रहेंगी। अतः इन भेड़ियों से जनता को सावधान रहना चाहिए तथा इनके कुचक्र को दफनाकर देश में समाजवाद लाकर ही वे देश में बेरोजगारी, महंगाई, भ्रष्टाचार जैसे दमन दूर हो सकते हैं वरना इन बुर्जुवा और इनके दलाल नेताओं का दमनचक्र योंहि चलता रहेगा।

अनन्य - भक्त

—वीरेन्द्र शास्त्री
(गोहाना)

परम सौभाग्य एवं निरतिशय-वर्ग की बात है कि विभिन्न युगों में हमारे पूर्वजों मर्यादा पुरुषोत्तम राम, योगीराज कृष्ण आदि तथा ऋषियों ने इस आर्यावर्त भारत भूमि में जन्म लेकर इस पवित्र भूमि को अपने तपःसमुद् भूत ज्ञान से अलंकृत किया; तथा अमिट आदर्श का मन्त्र देकर चले गये।

महान् भयंकर काल कलियुग में जबकि भारत माता रसातल की चरम-सीमा पर पहुँच रही थी; तथा परतन्त्रता की असह्य कड़ी बेड़ियां पहन कर करहा रही थी—तब एक सच्चे देवपुत्र, महान् योगी, अखण्ड ब्रह्मचारी तथा विद्वत्ता की साक्षात् मूर्त्ति से यह सब माता की दुर्दशा न देखी गई। और उस महान् योगी स्वामी दयानन्द सरस्वती ने वह ज्ञान-ज्योति जलाई, जो किसी के बुझाने पर भी न बुझ सकी, अपितु उग्र रूप धारण करने में सक्षम रही।

महर्षि दयानन्द सरस्वती 'मानव' की उज्ज्वल परिभाषा बन कर इस भूमि पर अवतरित हुए। पृथ्वी पर जो उज्ज्वल प्रकाश अनेक तारक-गण न कर सके, वह प्रकाश अकेले शूर-चन्द्रमा देव दयानन्द ने कर दिखाया। तथा शीघ्र ज्ञान ज्योति को प्रज्वलित करके इस नश्वर देह का परित्याग कर इस संसार से चले गये। परन्तु देव दयानन्द की मृत्यु सामान्य मृत्यु न थी—नीले आकाश ने मानों रो कर चन्द्रमा को छिपा लिया था। वट वृक्षों पर खगवृन्द मधुर कलरव नहीं कर रहा था और शायद सरित् प्रवाह ने भी एक क्षण रुक कर कल-कल करने से विश्राम ले लिया था। सर्वत्र नीरवता सी दृष्टिगोचर हो रही थी। वह ऐसा रवि था जिसके अस्त होने पर आज भी रश्मियां चमचमा कर चकाचौंध पैदा कर रही हैं।

महर्षि के समक्ष घोर तिमिर था। ऋषि वर को एक ऐसा मूर्त्तिकार कह सकते हैं, जिस मूर्त्तिकार के सामने केवल एक पत्थर का टुकड़ा है। उसने पत्थर उठाया और श्रम किया, क्रमशः आंख, हस्त, उदर आदि अवयव दीखने लगे। यह देव मूर्ति थी। मूर्त्तिकार ने यह प्रतिमा अपने तक ही सीमित न रखी, अपितु सब के समक्ष स्थापित कर दी। भक्त जन 'देवता' को देखने आने लगे। मूर्त्ति भी सुन्दरता की पराकाष्ठा थी। अतः कुछ महाशय मूर्त्तिकार को प्रलोभन देकर प्रतिमा खरीद लेना चाहते थे, पर प्रतिमाकार ने न दी। सहसा प्रतिमा बोल उठी—मूर्तिकार ! तुम्हीं मेरे अनन्य-भक्त हो, अतः जो मांगना चाहो मांगो। यह सुन मूर्त्तिकार गद्गद् हो गया, और यह अमूल्य क्षण अपार्थ (वृथा) न जाने दिया, बोला—देव ! यही कामना है कि जब भक्त जन आपके दर्शन करने आयें तो सीधे आपके दर्शन कर सकें, बीच में मेरी कला का अवलोकन न करें।

ठीक इसी प्रकार महर्षि दयानन्द ने भी मूर्ति को पाया। जैसे मूर्तिकार पत्थर पर श्रम करता हुआ मूर्त्ति तक पहुँच गया, उसी प्रकार देव दयानन्द भी श्रम करते हुए ईश्वर तक पहुँच गया। कठिन तपस्या के उपरान्त महर्षि ने परमात्मा तक जाने का मार्ग तैयार किया। अनेकों प्रलोभन आये पर धुन के धनी महर्षि दयानन्द का लक्ष्य पर अचूक निशाना गया। बहुत से भक्त जन ऋषि के बतलाए मार्ग पर चल कर ईश्वर को प्राप्त करना चाहते थे। सहसा परम पिता परमात्मा बोल उठे—दयानन्द ! तुम मेरे अनन्य भक्त हो, इसलिए यथेष्ट आशीर्वाद पा सकते हो। महर्षि भी इस अमूल्य क्षण में बोले—सर्व शक्तियुक्त सर्वज्ञ भगवन् ! यही कामना है कि जब भक्त समूह मेरे द्वारा बतलाये मार्ग पर चलते हुए यहां तक आयें तो स्पष्ट रूप से आपके दर्शन हों, मार्ग पर चलते हुए उनकी दृष्टि मुझ पर न पड़े।

मूर्त्तिकार ने पाषाण में से जो मूर्त्ति पाई उसने आशीर्वाद दिया या नहीं, कौन जाने ? पर महर्षि ने यथार्थ ही अपने इष्ट देव को प्राप्त कर लिया, यह सब जानते हैं।

ऐसे महर्षि को शतशः प्रणाम !

परोपकारिणी यज्ञ समिति (दिल्ली)

सम्पर्क-कार्यालय :

10–ए / 15, शक्ति नगर, दिल्ली–7

दिनांक 31–1–82 को दिल्ली परोपकारिणी यज्ञ समिति का वार्षिक चुनाव आर्य बालगृह पटोदी हाऊस, दरियागंज दिल्ली में श्री पं० देवव्रत धर्मेन्दू जी की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। जिसमें निम्नलिखित अधिकारी चुने गये :—

संरक्षक : श्री पं० देवव्रत धर्मेन्दू, श्री गोविन्द राम ग्रोबर

प्रधान : श्री एस० के० कपूर

उप-प्रधान : श्री राम किशन ग्रोवर एवं ललिता प्रसाद बन्सल

महामन्त्री : श्री कमल किशोर आर्य

उपमन्त्री : श्री उमेश गुप्ता

प्रचार मन्त्री : श्री यज्ञेन्द्र प्रसाद मालवीय

कोषाध्यक्ष : श्री प्रकाश चन्द शास्त्री

लेखा निरीक्षक : श्री सुन्दर सिंह शर्मा

भण्डारी : श्री प्रेम सिंह आर्य

संयोजक : श्री किशन लाल शर्मा

भवदीय—

कमल किशोर आर्य

महामन्त्री

क— कली अभी खिली नहीं, पेड़ गया मुरझाए।
बहुत लम्बी उमरीया पड़ी, आगे तुम क्या कर पाए ।।

गु— गुणवान् बनो-गुणवान् बनो, गुण की तुम सब खान बनो।
गुण की जग में पूजा होती, गुण के तुम महमान बनो ।।

रू— रूप बनावनहार न, रूप का रच दिया चाला।
किसी को रूप गोरा दिया, किसी को दिया काला ।।

* गुरुकुल समाचार *

प्रस्तुत कर्ता :—
वीरेन्द्र विद्यालंकार, (मन्त्री, वाग्वर्द्धिनी सभा)

गुरुकुल भैंसवाल कलां महाविद्यालय के प्रांगरण में ब्रह्मचारियों के वक्तृत्व कला के विकास के लिए 23–1–1982 को वाग्वर्द्धिनी सभा आयोजित की गई। इस सभा में महाविद्यालय के प्राध्यापकों एवं विद्यार्थियों ने सोल्लास भाग लिया और भविष्य में भी इस प्रकार के आयोजन सम्पादन करने के लिए कृत-संकल्प हुए।

सर्व-प्रथम भारतीय-वैदिक-परम्पराओं के अनुसार वेद-मन्त्रों से मंगल प्रार्थना की। इसके पश्चात् सभा की कार्रवाई सुष्ठुरुपेरण संचालित करने के लिए सर्व-सम्मति से निर्विरोध वीरेन्द्र कुमार शास्त्री विद्यालंकार प्रथम वर्ष को सभा मन्त्री तथा ब्रह्मचारी कर्मपाल विद्या विनोद प्रथम वर्ष को उप-मन्त्री चुना गया। तदनन्तर मन्त्री जी ने श्री आचार्य महामुनि जी का नाम सभापतित्व में सारा कार्य-कलाप सुचारुरूपेरण सम्पन्न हुआ।

महा विद्यालय के सभी छात्रों ने अपने-अपने विषयों की पुष्टि की। ब्र० वीरेन्द्र कुमार, धर्मवीर, कर्मपाल कर्मवीर जी के वक्तव्य विशेष सराहनीय रहे।

सभापति भाषरण के अनन्तर शान्ति-प्रार्थना के साथ ही सभा विसर्जित हुई।

कु— कुण्डल पहन तुम क्या समझो, कुण्डल जग की शान नहीं।
पीला सारा चेहरा होग्या, शरीर में टोपा ज्ञान नहीं॥
ल— लक्ष्मी तुम्हारे पास पड़ी है, जल्द सम्भालो इसको।
इन्द्रिसंयम पाकर के, तुरन्त उठालो इसको॥
भैं— भैया तेरे पास खड़ा है, मत घबराओ तुम।
राखी की चुनौती देकर, मत शर्माओ तुम॥
स— संसार है अद्भुत माया, जिसने संसार रचाया।
तरह-तरह के लालच देकर, जीवन है बर्बाद बनाया॥
वा— वाचक तेरी वारणी को, सुनने हम सभी खड़े हैं।
शीतल-भूतल करने को, जलद भी उमड़ पड़े हैं॥
ल— लग्न से हर काम कर, थोड़ा कर या ज्यादा कर।
दबाव किसी का है नहीं, जी चाह जितना कर॥

Statement about ownership and other particulars about newspaper "SAMAJ SANDESH" to be published in the first issue every year after last day of February.

FORM IV

(See Rule 8)

1. Place of Publication ... Gurukul Bhainswal (Sonepat)

2. Periodicity of its Publication ... Monthly

3. Printer's Name ... Dharam Bhanu
   Nationality ... Indian
   Address ... Gurukul Vidyapeeth Haryana Bhainswal Kalan, Distt. Sonepat

4. Publisher's Name, Nationality, Address } Same as above No. 3

5. Editor's Name, Nationality, Address } Same as above No. 3

6. Name and address of individual who own the news paper and partners or share-holders holding more than one per cent of the total capital. } Mahasabha, Gurukul Bhainswal Kalan (Sonepat)

I, DHARAM BHANU, hereby declare that the particulars given above are correct to the best of my knowledge and belief.

(Sd.) DHARAM BHANU
Printer & Publisher,
"SAMAJ SANDESH"

Dated : 25-3-1982

गुरुकुल
चाय

खांसी, जुकाम, ज्वर,
इन्फ्लूएन्जा, बदहजमी
तथा थकान में मादकता
रहित उत्तम पेय।

च्यवनप्राश

चरक संहिता अष्टवर्ग युक्त
हिमालय की दिव्य जड़ी
बूटियों से तैयार, शरीर
की क्षीणता तथा फेफड़ों
के लिए प्रसिद्ध
आयुर्वेदिक रसायन।
बाल, युवक तथा वृद्ध
सबके लिये हितकर।

भीमसैनी
सुरमा

आंखों को निरोग
व शीतल रखता है।

पायोकिल

- दांतों का दर्द व टीस
- मसूढ़ों का फूलना
- मसूढ़ों में खून व पीप आना
- पायोरिया को जड़ से मिटाने के लिए उत्तम आयुर्वेदिक औषधि

गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी
ओ३म्
हरिद्वार

agnihotri

शाखा : चावड़ी बाजार, दिल्ली-६

Approved for Libraries by. D.P.I's Memo No. 3/44—1961—B. Dated 8-1-62
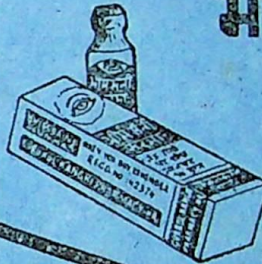
Approved by the Chairman Central Library Committee, Panjab Vide their Memo No. PRD-Lib.-258-61/1257-639 dated Chandigarh, the 8th Jan., 1962.

सम्पादक-मण्डल

व्यवस्थापक :
धर्म भानु जी

❀

सम्पादक :
आचार्य हरिश्चन्द्र
आचार्य विष्णुमित्र

❀

सह सम्पादिका :
आचार्या सुभाषिणी

'समाज सन्देश'–डाक घर गुरुकुल भैंसवाल कलाँ
Regd. No. D/RTK-21

सदस्य संख्या
नाम
स्थान
पत्रालय
जिला

व्यवस्थापक श्री धर्मभानु गुरुकुल भैंसवाल ने नेशनल प्रिंटिंग प्रेस, रोहतक में छपवा कर कार्यालय समाज सन्देश गुरुकुल भैंसवाल (सोनीपत) से मुद्रित तथा प्रकाशित किया ।

(हिन्दी मासिक-पत्र)

सांस्कृतिक, सामाजिक व साहित्यिक लेखों का संगम

प्रकाशन तिथि : 25 फरवरी, 1983

वर्ष 23 ❀ जनवरी — फरवरी, 1983 ❀ अंक 9/10

हुतात्मा शहीद श्री भक्त फूल सिंह जी

वार्षिक चन्दा 10 ·१५

इस अंक में—

समाज सन्देश में छपे विचारों से हमारा सहमत होना या न होना आवश्यक नहीं। समाज सन्देश में हर व्यक्ति चाहे वह किसी भी मत से सम्बन्ध रखता हो अपने लोकहितकारी विचार अथवा लेख प्रकाशनार्थ भेज सकता है। उसकी मौलिकता का लेखक स्वयं उत्तरदायी होगा।

—सम्पादक

लेख भेजने तथा अन्य विषयक पत्र व्यवहार का पता :—

धर्म चन्द शास्त्री

प्रकाशन प्रबन्धक

C/o नेशनल प्रिंटिंग प्रेस, झज्जर रोड़, रोहतक फोन : 2662

सम्पादकीय—

गुरुकुल के उत्सव

प्रत्येक वर्ष के फरवरी तथा मार्च महीने ऐसे होते हैं जिनको बसन्त मधुमास कहा जाता है। चहुँ दिशाओं में फूल खिले हुए होते हैं, खेतों में सरसों खिली होती है सरसों का पीलापन आंखों को मोह लेता है। बागों में कोयल की कू कू की आवाज सुनाई देने लगती है। वृक्षों के पुष्पों पर मधुमक्खियां बैठ कर अपना आधिपत्य जमाकर गौरवान्वित सी नजर आती हैं। आमों पर मोर आ जाता है। हर तरफ ऋतुराज की निराली छवि मनमोहक होती है। प्रकृति पूरे यौवन पर होती है और दुल्हन की तरह सजी होती है। प्रत्येक पशु पक्षी, जीव जन्तु, मनुष्य आदि में इस ऋतु में नवजीवन का सा संचार हो जाता है। वैसे भी फाल्गुन का महीना तो सारे देश में प्रसिद्ध है। देहात के आंचल में महिलायें बहू बेटियां बसन्तोत्सव को बड़ी उमंग से मानती हैं।

ऐसे सुन्दर समय में आर्य समाज की ओर से ग्राम ग्राम, नगर नगर, गली गली कूचे कूचे में उत्सव मनाये जाते हैं। न अधिक सर्दी तथा न अधिक गर्मी। उत्सवों की सभी ओर गूंज सुनाई देती है। सभी ओर नई रोशनी दृष्टिगोचर होती है। इसी ऋतु के प्रारम्भ में ही शिवरात्रि के दिन आर्य समाज के प्रवर्तक ऋषि दयानन्द जी को बोध हुआ था। शिवरात्रि को बोधरात्रि के नाम से भी याद किया जाता है। उस दिन से लेकर रामनवमी के दिन चैत्र मास तक आर्य समाज के उत्सव की भरमार होती है। गुरुकुलोत्सव भी इन्हीं दिनों मनाये जाते हैं। हरियाणे में भी गुरुकुलों का प्रसार है। हरियाणा के प्रसिद्ध गुरुकुल कन्या गुरुकुल खानपुर का उत्सव भी भरवरी माम में मनाया जाता है। जिसे अभी मनाया भी गया है। इसी तरह गुरुकुल भैंसवाल हरियाणा का मब से बड़ा गुरुकुल है इसका उत्सव भी मार्च मास में 12—13 मार्च 1983 को मनाया जा रहा है। जिसमें हजारों की संख्या में नर नारी पहुँच कर

भजनोपदेशकों, साधु सन्यासियों महात्माओं के विचार सुनकर अपने आपको धन्य समझते हैं। और कृत-कृत्य हो जाते हैं। गुरुकुल भैंसवाल की स्थापना मार्च 1920 में हुई थी। भक्त फूल सिंह जी की गुरुकुलों के प्रति अपनी उत्कट अभिलाषा को देख कर अमर शहीद श्रद्धानन्द जी ने स्थापना मार्च में ही की थी। अमर शहीद भक्त फूल सिंह जी की शहादत से संस्था दिन प्रतिदिन चौगुनी उन्नति कर रही है।

गुरुकुलों की शिरोमणि संस्था गुरुकुल कांगड़ी का उत्सव भी इसी ऋतु में बैशाखी के दिन बड़ी धूम-धाम से मनाय जाता है। पिछले दिनों शिवरात्रि के शुभ दिन आर्य गुरुकुल झज्जर का उत्सव भी मनाया गया। कन्या गुरुकुव नरेला, गुरुकुल मटिण्डू, कन्या गुरुकुल खरल (नरवाना जीन्द) गुरुकुल जद पुरा भौण्डा कलां गुड़गावां, घरोण्डा करनाल आदि के उत्सव भी इन्हीं दिनों मधुमास में ही मनाये जाते हैं। आर्य समाज के अन्य उत्सव भी इन्हीं दिनों, किये जाते हैं। जनता इन उत्सवों में पहुँच कर ज्ञान अर्जित करती है। ये उत्सव प्राय: आत्मनिरीक्षण के लिए होते हैं। आशा है कि आर्य-जन आर्योत्सवों में पधार कर ज्ञानोपार्जन करके लाभान्वित होते रहेंगे। 12, 13 मार्च को होने बाले गुरुकुल भैंसवाल के उत्सव में आप सभी सादर आमन्त्रित हैं।

कन्या गुरुकुल खानपुर का उत्सव सम्पन्न

कन्या गुरुकुल खानपुर कलां का 43वाँ वार्षिकोत्सव दिनांक 12, 13 फरवरी, 1983 को बड़ी धूम-धाम से मनाया गया। जिसमें आस-पास के गांवों के काफी संख्या में आर्य नर नारी सम्मिलित हुए। पं० चिरंजी लाल, श्री खेमचन्द, श्री सूरत सिंह तथा श्री रतन सिंह के भजनों से व पं० समर सिंह, ब्र० कर्मपाल, पं० सुखदेव शास्त्री, आचार्य विष्णुमित्र विद्यामार्तण्ड, स्वामी इन्द्रमोहन तथा प्रो० प्रकाशवीर विद्यालंकार आदि के उपदेशों से आर्यजन बड़े लाभान्वित हुए।

दानी महानुभावों में प्रो० सतबीर सिंह दुहन किसान कालेज जीन्द (5100/- रु० तथा 6000/- रु० का वचन), श्री महेन्द्रसिंह बावरी (मु० न०) (1100/- रु० तथा 9000/- रु० का वचन), मा० राजेन्द्र सिंह राजलू गढ़ी (1100/- रु०), श्री महासिंह

खेड़ी छिछड़ाना (1100/- रु०), हाई स्कूल की छात्रा व स्टाफ (1036/- रु०), ब्र० कर्मपाल (1100/- रु०) तथा ग्राम न्याय सभा खानपुर (1600/- रु०) आदि विशेष रूपेण उल्लेखनीय हैं।

प्रो० सतबीर सिंह ने कन्या गुरुकुल हाई स्कूल की छात्राओं को पुरस्कारों का वितरण किया तथा बहिन सुभाषिणी और चौधरी माडूसिंह जी के प्रति संस्था में बुलाने पर कृतज्ञता प्रकट की और निरन्तर संस्था की सहायता करने का आश्वासन दिया। अन्त में ब्र० कर्मपाल ने 1985 में 'भक्त फूलसिंह जन्म शताब्दी' मनाए जाने का उद्‌घाटन किया और शान्ति पाठ पूर्वक उत्सव निर्विघ्न समाप्त हुआ।

इस अवसर पर सभा प्रधान चौ० माडूसिंह जी ने यज्ञ के साथ आयुर्वेद महा विद्यालय के लगभग 21000/- रुपये की लागत से निर्मित "छोटू राम द्वार" का भी उद्‌घाटन किया। उत्सव की कार्यवाही का संचालन सभा उपमन्त्री श्री धर्मचन्द्र ने बड़ी कुशलता पूर्वक किया।
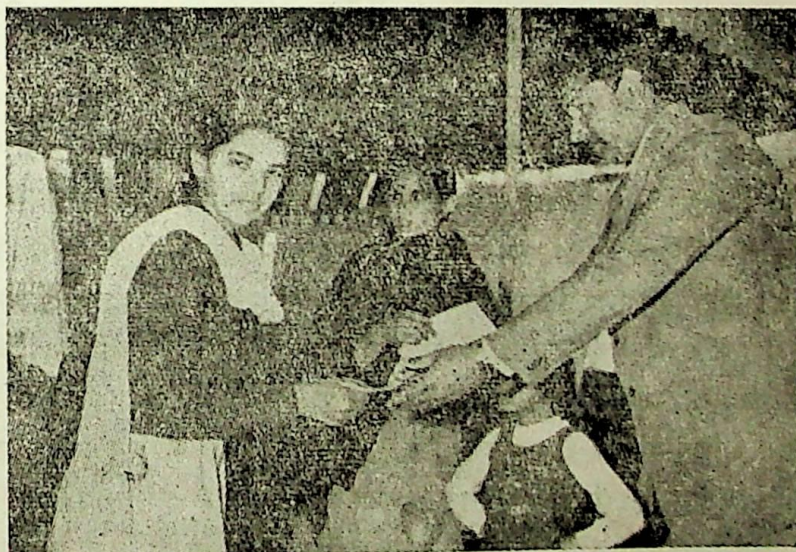
कन्या गुरुकुल खानपुर कलां के उत्सव पर
प्रो० सतबीर सिंह दुहन से पुरस्कार लेती हुई गुरुगुल की छात्रा

—:※:—

किसानों का एक और मसीहा चल बसा

जनवरी मास 1983 के आखिरी सप्ताह में गरीब किसान को यह समाचार सुन कर बेहद दु:ख हुआ कि लम्बी बिमारी के कारण राव बहादुर चौ० सूरजमल जी (भूतपूर्व मन्त्री पंजाब) का देहावसान हो गया। प्रात: ही हिसार शहर के नागरिकों, देहाती किसानों, खाण्डा गांव के निवासियों का काफला अपने नेता के दर्शन के लिए उमड़ पड़ा। हजारों की संख्या में लोग अपने नेता के अन्तिम दर्शन के लिए हिसार पहुँच गये।

चौ० सूरजमल जी का जन्म गांव खाण्ड (खेड़ी) जिला हिसार तहसील हांसी में हुआ। हांसी तहसील को यह सौभाग्य प्राप्त है कि इस तहसील ने जहां बड़े दानवीर छाजूराम जी जैसे दानी पैदा किए वहां राव बहादुर सूरजमल जी जैसे राजनीतिज्ञ किसानों के हमदर्द पैदा किये। चौ० साहब 1937 में पहली बार अविभक्त पंजाब विधान सभा के सदस्य निर्वाचित हुए। स्वर्गीय चौ० छोटू राम जी के साथ साथ किसानों, मजदूरों की भलाई तथा पंजाब की प्रगति के लिए कन्धे से कन्धा मिला कर साथ दिया। अपनी कर्मठ शक्ति तथा दूरदर्शिता के कारण पार्लियामेन्टरी सेक्रेटरी बने। अनेकों वर्षों तक पार्लियामेन्टरी सेक्रेटरी रहे। वर्षों तक भरतपुर स्टेट के दीवान भी रहे।

आजादी के बाद आप विधान परिषद् तथा विधान निर्माण कौन्सिल के सदस्य रहे। हरियाणा वासियों की बेहबूदी वृद्धि के लिए कई बार उच्च कमान के लोगों से सम्पर्क स्थापित किया एवं संघर्ष के साथ सफलता प्राप्त की। 1957 में पुन: विधान सभा के सदस्य निर्वाचित हुए। स्वर्गीय सरदार प्रतापसिंह कैरों ने सब से पहले अपने मन्त्रीमण्डल का सहयोगी निर्वाचित किया। आप पब्लिक वर्कस डिपार्टमैन्ट (P.W.D.) के मन्त्री थे आपने कार्यकाल में हरियाणा में सड़कों, सरकारी भवनों का बड़ी भारी संख्या में निर्माण कराया। सरदार प्रतापसिंह कैरों से मिलकर किसानों, मजदूरों की भलाई के लिए अनेक कानून बनवाये। उनका राजनीतिक जीवन बड़ा स्वच्छ, बेलाग, बेदाग रहा। आप जाट कालिज हिसार, हाई स्कूल तथा अनेक शिक्षण संस्थाओं के प्रधान रहे। अपने कार्यकाल में उन्होंने संस्थाओं की प्रगति के लिए स्तुत्य कार्य किये। आजकल आप अपना समय वनस्थ की तरह बिता रहे थे। आपको कुछ दिन पूर्व पक्षाघात हो गया था। आप 86 वर्ष की आयु में प्रात: स्वर्ग सिधार गए। आपकी तेरहवीं 6–2-83 को मनाई गई। हजारों की संख्या में लोगों ने अपने नेता को श्रद्धांजलि अर्पित कर परमात्मा से प्रार्थना है कि उनकी आत्मा को सद्गति प्रदान करें तथा पुत्र, पौत्र एवं सम्बन्धियों को शान्ति दे। समाज सन्देश अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करता है।

श्री रामपत जी वानप्रस्थी

श्री रामपत जी वानप्रस्थी का तिथि 9-2-83 को अचानक हृदयगति से स्वर्गवास हो गया। आप कट्टर आर्यसमाजी तथा श्री बस्ती राम जी के परम शिष्य थे। आप प्रत्येक काम या गायनादि से प्रारम्भ करते समय अपने पूज्य गुरु बस्तीराम जी को अवश्य स्मरण करते थे। आपकी खड़ताल बड़ी मशहूर थी। आप बस्तीराम जी द्वारा निर्मित काशी शास्त्रार्थ को बड़ी तन्मयता से गाते तथा श्रोताओं को मन्त्र मुग्ध कर देते थे। आपके हृदय में आर्य समाज के प्रचार की बड़ी लग्न थी। आपको समाज सुधार की बड़ी टीस थी—आर्य समाज प्रचार के दीवाने थे। आपके भजनों को सुनने के लिए देहाती महिलाएं बेटियां बड़ी संख्या में उपस्थित होती थीं। बड़ी से बड़ी भीड़ को भी कन्ट्रोल करना आपके लिए सहज था। गुरुकुल शिक्षापद्धति के उपासक थे। सादा जीवन उच्च विचार आपका विशेष गुण था। आपके सुपुत्र श्री सुखदेव शास्त्री स्नातक गुरुकुल भैंसवाल भी कट्टर आर्यसमाजी बेधड़क वक्ता हैं। आपके कई लड़कियां हैं। रामपत जी कई वर्षों से गृह त्याग दयानन्द मठ रोहतक में ही रहते थे। अपना जीवन पूजा पाठ, सन्ध्या वन्दन, कीर्तन, वाद-विवाद में बिताते थे। मृत्यु से पूर्व आप मदीना दांगी गये हुए थे वहीं अचानक आपका हृदयगति रुकने के कारण 80 वर्ष की आयु में देहावसान हो गया। परमात्मा से प्रार्थना है कि उन्हें सद्गति प्रदान करे।

"महिला आयुर्वेदिक कालेज, कन्या गुरुकुल खानपुर कलां की समस्त छात्राओं एवं स्टाफ की यह सभा डा० अनन्तानन्द जी प्राचार्य महोदय के अनन्य आत्मीय पुत्रवत् भ्रातृज श्री आनन्द के असामयिक निधन के दुःख सम्वाद से हार्दिक दुःख का अनुभव करते हुए शोक सन्तप्त परिवार के प्रति हार्दिक समवेदना प्रकट करती हैं तथा परमपिता परमात्मा से दिवंगत आत्मा की चिरशान्ति की कामना करती है। प्रभु से प्रार्थना है कि वह सभी परिजनों को इस असह्य बज्राघात को सहने की क्षमता प्रदान करे।"

दिनांक 1-2-83 को 10-30 बजे कालेज परिवार की सामूहिक सभा में पारित एवं 2 मिनट तक मौन रख कर दिवंगत को श्रद्धांजलि एवं शान्ति की प्रार्थना

करके विर्जित द्वारा समर्पित उक्त प्रस्ताव डा० अनन्तानन्द जी प्राचार्य, महिला आयुर्वेदिक कालिज खानपुर कलां (सोनीपत) की सेवा में प्रेषित कर निवेदन है कि वह इसे दिवंगत की माता, पत्नी एवं अन्य सभी परिजनों तथा हितेच्छुओं तक पहुँच कर हमारे समवेदन को प्रकट करने का कष्ट करें।

1–2-83

● ● ●

● महिला आयुर्वेदिक कालिज, खानपुर कलां (सोनीपत) के समस्त शिक्षक, स्टाफ एवं छात्राएं इस कालेज की प्रतिभाशाली स्नातिका एवं उदीयमान शिक्षक के श्रीमती चांद अग्निहौत्री, डिमोस्ट्रैटर असामयिक एवं हृदयविदारक करुण अवसान पर हार्दिक शोक एवं समवेदना प्रकट करती है तथा परमपिता परमात्मा से प्रार्थना करती है कि वह दिवंगत आत्मा को चिरशान्ति प्रदान करे तथा उसके परिजनों एवं सम्बन्धियों तथा हितैषियों को इस असह्य बज्राघात को सहने की क्षमता प्रदान करे।

श्रीमती चांद अग्निहोत्री, महिला आयुर्वेदिक कालिज खानपुर कलां के असामयिक और हृदय विदारक निधन के समाचार से सम्पूर्ण कालेज परिवार, छात्राओं एवं स्टाफ की शोकसभा कालिज प्रांगण में आयोजित हुई, तथा परिवार के सदस्यों के शोक एवं याद प्रकट करने के बाद निम्नोक्त शोक प्रस्ताव सर्वसम्मति से पारित कर निश्चय हुआ कि इसे शोक सन्तप्त परिजनों को भेज दिया जावे। 3–2–83

* गुरुकुल समाचार *

विद्यार्थियों की वक्तृत्व कला को विकसित करने के लिए महाविद्यालय विभाग, गुरुकुल भैंसवाल कलां के प्रांगण में सभा आयोजित की गई। सभी महाविद्यालय के प्राध्यापकों एवं विद्यार्थियों ने सभा में सोल्लास भाग लिया, और भविष्य में भी इस प्रकार के आयोजन सम्पादित करने के लिए कृत-संकल्प हुए।

प्रथम विशिष्ट सभा 22 दिसम्बर, 1982 बुधवार को आयोजित की गई। सर्वप्रथम भारतीय एवं वैदिक परम्परा के अनुसार वेद मन्त्रों द्वारा मंगल प्रार्थना की गई। उसके पश्चात् सभा की कार्रवाई सुष्ठुरूपेण संचालित करने के लिए सर्वसम्मति से वीरेन्द्र कुमार शास्त्री विद्यालंकार द्वितीय वर्ष को निर्विरोध सभा मन्त्री चुना गया। मन्त्री जी ने प्रतियोगियों की नामवाली उपस्थित की और सभी विद्यार्थियों ने अंग्रेजी भाषा में अपने अपने विशिष्ट-विषयों की परिभाषा की।

द्वितीय विशिष्ट सभा बुधवार 29 दिसम्बर 1982 को आयोजित की गई। भाषा का माध्यम देववाणी संस्कृत रखा गया। संस्कृत एवं वेद के उपाध्याय आचार्य विद्यानिधि जी एवं अंग्रेजी के प्राध्यापक श्री राम दयाल जी ने अपना अपना निर्णय घोषित किया।

शान्ति प्रार्थना के साथ सभा विसर्जित हुई।

वृक्षारोपण

इस वर्ष विद्यार्थियों ने अपने कौशल से लगभग 500 वृक्षों एवं फूलदार पौधों का आरोपण गुरुकुल-परिवेश में किया। समस्त विद्यार्थी अपने अपने पौधों का शिशु की तरह उत्सुकता से निरीक्षण करते हैं तथा अपने प्रयत्नों को फलीभूत कर रहे हैं।

अन्य समाचार

● बिजली की इतनी कटौती से विद्यार्थियों की पढ़ाई में बाधा पैदा हो गई है। इन अमूल्य परीक्षा के क्षणों में विद्यार्थी लैम्प, दीपक आदि का प्रयोग कर इस कमी को दूर करने का प्रयास कर रहे हैं। अनुमान नहीं कर सकते कि इसमें पूरी सफलता हाथ लगेगी या नहीं।

2-1-83 की अन्तरङ्ग सभा में गुरुकुल के सुयोग्य स्नातक एवं कर्मठ कार्यकर्त्ता श्री सत्यपाल शास्त्री को आचार्य पद का नए आचार्य की नियुक्ति तक कार्यभार सौंपा है। इससे छात्रवर्ग में हर्ष की लहर दौड़ गई। शास्त्री जी का सम्पूर्ण जीवन गुरुकुल में ही व्यतीत हुआ है। शास्त्री जी निरन्तर संस्था के हितचिन्तन में लगे रहते हैं। छात्रों को समुन्नत करने में भी दिन रात कोई कसर न उठा रखते हैं। ऐसे सुयोग्य आचार्य के मार्ग-निर्देशन में संस्था की उन्नति होगी।

कुरुक्षेत्र विश्वविद्याल द्वारा आयोजित संस्कृत-भाषण प्रतियोगिता में—जिसका आयोजन फरवरी मास की 12 तारीख 1983 को किया गया था।

गुरुकुल विद्यापीठ हरियाणा भैंसवाल कलां जि० सोनीपत के छात्र

श्री वीरेन्द्र कुमार विद्यालंकार
द्वितीय वर्ष
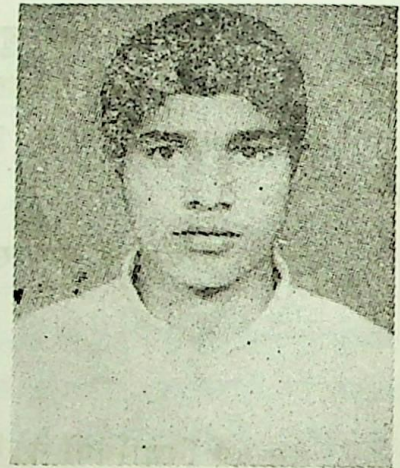
श्री ब्रह्मदेव विद्यालंकार
प्रथम वर्ष

संस्कृत-भाषण प्रतियोगिता में प्रथम स्थान प्राप्त कर चलविजयोपहार (शील्ड) प्राप्त करने में सफल रहे। उपर्युक्त दोनों छात्र बधाई के पात्र हैं, जिन्होंने अपनी प्रतिभा से संस्था को गौरवान्वित किया है।

(गतांङ्क से आगे—3)

* बृहदारण्यकोपनिषद् सार *

अश्वमेध यज्ञ का आध्यात्मिक रूप बतलाते हुए उपनिषद्कार कहते है—

कर्मकाण्ड में यज्ञयि कर्मों में हिंसा का प्रचलन हो चुका था। उस समय के ऋषियों ने हिंसा आदि कर्मों को वेद निषिद्ध मान कर इनका विरोध किया। यज्ञ में हिंसा वेद निहित है ऐसा कह कर कर्म काण्डियों ने हिंसा चालू की थी उसकी वास्तविकता भी प्रदर्शित की। कर्म-काण्डियों से संचालित इन यज्ञों में एक अश्वमेध नामक यज्ञ था, जिसमें अश्व की अहिंसा की जाती थी। उपनिषद्कारों ने इस प्रकार यज्ञ में अश्व को मारना निन्दित कर्म बतलाया और अश्वमेध क्या है इसका आध्यात्मिक रूप दिखलाया, वह इस प्रकार है—

इस सृष्टि में एक विशाल अश्वमेध यज्ञ हो रहा है। उस अश्वमेध यज्ञ में 'उषाकाल को या उषा को अश्व का सिर, सूर्य को अश्व का नेत्र, वायु को अश्व का प्राण, द्युलोक को अश्व की पीठ, अन्तरिक्ष लोक को अश्व का उदर, पृथिवी लोक को अश्व के पैर, दिशाओं को अश्व के पखवाड़े, अवान्तर दिशाओं को अश्व की पसलियां, ऋतुओं को अश्व के अंग, बादलों को अश्व का मांस, नदियों को अश्व की आंतें, औषधियों और वनस्पतियों को अश्व के लोम, बादलों की गर्जन को अश्व का हिनहिनाना कहा है। इस वर्णन का भाव यही है कि पवित्र यज्ञ में जो कर्मकाण्डियों ने यज्ञ की हिंसा का प्रचलन किया था वह निन्दित कर्म है वस्तुत: सृष्टि ही एक शीघ्रगामी अश्व है उसी में यह अलंकार रूप से यज्ञ हो रहा है, यह मानना चाहिए।

देवासुर कथा कह कर नि:स्वार्थ कर्म की प्रशंसा करते हुए उपनिषद्कार कहते हैं—प्रजापति की देव और असुर ये दो प्रकार की सन्तानें थीं। देवों की संख्या थोड़ी और असुर संख्या में अधिक थे अत: वे असुर अपना आधिपत्य सर्वत्र जमाना चाहते थे। देवों ने उनके आधिपत्य से बचने के लिए ओङ्कार की उपासना प्रारम्भ की जिससे वे असुरों से आगे बढ़ जावें।

तदर्थ देवों ने प्रथम वाणी को अपना उद्गाता बनाया। वह वाणी ब्रह्माण्ड में और पिण्ड में उद्गाता बन कर उद्गीथ द्वारा देवों के लिए गाने लगी। वाणी ने यह तो कह दिया मेरे कर्म का फल देव अर्थात् इन्द्रियां भोगें परन्तु इसके साथ वह उद्गीथ के गाने के शुभ फल को स्वयं चाहने लगी। असुरों को यह जानकारी हो गई कि वाणी में स्वार्थ आ गया है, तब असुरों ने स्वार्थ रूपी पाप से वाणी को बिद्ध कर दिया इस स्वार्थ के कारण वाणी असत्य बोलने लगी। इस स्वार्थ के कारण उद्गीथ गान करते हुए भी वाणी ने जो पाप करना प्रारम्भ किया इससे देवगण असुरों का मुकाबला न कर सके। भाव यह है कि स्वार्थवश ही मनुष्य असत्य का प्रयोग करता है।

इसके बाद देवों ने नासिका के श्वास को अपना उद्गाता बनाया। उसने भी यह तो कह दिया कि मेरा उद्गीथ उपासना का फल देवों अर्थात् इन्द्रियों को मिले परन्तु उद्गीथ गान के शुभ फल को नासिका अपने लिए ही चाहने लगी। असुरों को नासिका के श्वास में स्वार्थ आ गया है इसकी जानकारी हो गई। उन्होंने इसे स्वार्थ रूपी पाप से बिद्ध कर दिया। इससे नासिका सुगन्ध के साथ दुर्गन्ध भी सूंघती है। उद्गीथ गान के साथ नासिका ने जो पाप करना प्रारम्भ किया इससे देव असुरों का मुकाबिला न कर सके।

इसके बाद देवों ने नेत्र को उद्गाता बनाया। उसने भी यह तो कह दिया कि मेरा उद्गीथ उपासना का फल देव (इन्द्रियां) भोगें परन्तु जो शुभ फल हो वह उसे मिले। असुरों को इसकी जानकारी हो गई। उन्होंने नेत्र को पाप से विद्ध कर दिया, इससे नेत्र दृश्य के साथ अदृश्य भी देखता है। इस प्रकार नेत्र के स्वार्थ के कारण देव असुरों को पराजित नहीं कर सके।

इसके बाद देव श्रोत्र की शरण में गये और उसे अपना उद्गाता बनाया। उसने भी उद्गाता बनकर देवों के लिए उद्गीथ गाया। उसने यह तो कह दिया मेरा उद्गीथ उपासना का फल देवों को मिले परन्तु शुभ फल को उसने भी अपने लिए चाहा। असुरों को इस बात का पता लग गया कि श्रोत्र में स्वार्थ आ गया है। उन्होंने श्रोत्र को स्वार्थ रूपी पाप से बिद्ध कर दिया इससे श्रोत्र श्रवणीय और अश्रवणीय दोनों सुनता है। इस प्रकार देव असुरों का मुकाबिला न कर सके।

इसके बाद देवों ने मन को उद्गाता बनाया। उसने भी उद्गाता बन कर उद्गीथ द्वारा देवों के लिए गाने गाये। उसमें यह तो कह दिया कि मेरे कर्म का फल सब देव अर्थात् इन्द्रियां भोगें परन्तु अच्छे फल की अपने लिए ही कामना करी। असुरों को

मन के इस स्वार्थ का पता लग गया। उन्होंने मन को पाप से बिद्ध किया इससे मन बुरा संकल्प भी करने लगा तथा अच्छा संकल्प भी करने लगा। अतः देव असुरों को पराजित न कर सके।

अन्त में देवों ने प्राण को उद्गाता बनाया। वह उद्गाता बन कर देवों के लिए उद्गीथ गान करने लगा। असुरों ने प्राण को भी पाप से बिद्ध करना चाहा परन्तु जैसे मिट्टी का ढेला पत्थर से टकरा कर चूर चूर हो जाता है इसी प्रकार असुर टुकड़े-टुकड़े होकर चूर-चूर हो गये। इसके बाद देव जीत गये और असुरगण पराजित हो गये। जो निःस्वार्थ भावना से काम करता है वह अपने असली रूप को प्राप्त करता है और जो उससे द्वेष करता है नष्ट हो जाता है।

इस कथानक का भाव यह है जीवन की वास्तविकता निःस्वार्थ भावना से पूर्ण होती है। हमारी वाणी को, आंख को, कान को, मन को स्वार्थ या आसक्ति का विष दूषित कर देता है। वाणी चाहे कितना ही ओङ्कार को स्मरण करे यदि उस में स्वार्थ आ जाता है तो उसे ओङ्कारोपासना से कोई लाभ नहीं होता है। इसी प्रकार श्रोत, नेत्र, मन आदि के विषय में भी यही कथन है। जहां जहां स्वार्थ है वहां वहां नाश है और जहां प्राण की तरह निःस्वार्थता है वहीं पर जीवन का संचार होता है। अतः इस संसार में निःस्वार्थ भावना से काम करना चाहिए।

सृष्टि की रचना आत्मतत्त्व से ही हुई इसका वर्णन करते हुए उपनिषद्कार कहते हैं—सृष्टि के प्रारम्भ में पुरुषरूप आत्मा ही था। सारी सृष्टि परमाणु रूप में स्थित थी। प्रारम्भ में उसकी शकल ऐसी थी जैसे दो स्त्री पुरुष मिले हुए हों। उसने उन दोनों मिले हुए शरीरों को पृथक् पृथक् किया। तब वे दोनों आपस में पति पत्नी बने। भाव यह है कि सृष्टि के प्रारम्भ में इस सृष्टि को चलाने के लिए प्रभु ने मानवों के, पशु-पक्षियों के जोड़े बनाये जो अमैथुनी सृष्टि के प्रतीक थे। जिस प्रकार फार्म वाले बीज बना कर वितरित कर देते हैं इसी प्रकार अमैथुनी सृष्टि के प्रभु ने जोड़े बनाये। इसके पश्चात् इस सृष्टि का मैथुनी सृष्टि से विकास हुआ। वास्तविक तत्त्व आत्मा है वह नाम के कारण और रूप के कारण पृथक् पृथक् दिखाई देने लगा।

यह आत्मतत्त्व प्रत्येक वस्तु से अधिक प्रिय है। वह आत्मतत्त्व (अपनापन) धन से भी अधिक प्रिय है। जो आत्मा से पुत्र, कलत्र को अधिक प्रिय मानता है वह कभी भी भगवान् तक न पहुँच सकेगा। जो अपने आत्मा को प्रिय समझेगा वह शक्ति सम्पन्न हो जावेगा। मनुष्य को आत्मा की उन्नति करनी चाहिए। जो व्यक्ति पुत्र, कलत्र के मोहपाश में जकड़ा जाता है वह प्रभु प्राप्ति के लक्ष्य से भटक जाता है।

सृष्टि की रचना—ब्रह्मतत्त्व से इसका वर्णन करते हुए उपनिषद्कार कहते हैं—पहले प्रकरण में कहा था कि प्रारम्भ में आत्मा अकेला था, यहां सृष्टि की रचना के प्रारम्भ में कहा है कि ब्रह्म अकेला था। वह यह मानता था कि मैं ब्रह्म (महान्) हूँ। यह सब विशाल जगत जो दिखाई देता है इसमें मेरी ही सत्ता है।

जैसे आत्मतत्त्व से सब प्राणी उत्पन्न हुए उसी प्रकार ब्रह्मतत्त्व से सारी सृष्टि का निर्माण हुआ। ब्रह्मतत्त्व से ही इन्द्र, सोम, रुद्र, पर्जन्य, यम, मृत्यु, ब्राह्मण धर्म, क्षत्रिय धर्म, वैश्य धर्म, शूद्रधर्म का विकास हुआ।

सृष्टि के सात प्रकार के अन्नों में एक 'साधारण अन्न' भी है उसके विषय में वर्णन करते हुए उपनिषद्कार कहते हैं :—

सृष्टि के पिता ने मेधा और तप से सात अन्न उत्पन्न किये। इनमें से एक साधारण अन्न है। इसे साधारण इसलिए कहते हैं कि इसको सब प्राणी खाते हैं। जो इस अन्न को अकेला खाता है वह पाप का भागी होता है। यह साधारण अन्न सब के उपभोग के लिए ही है अतः इसको सब का साझला मानना चाहिए।

अजात शत्रु का हप्त बालाकि गार्ग्य को ब्रह्म का उपदेश देते हुए उपनिषद्कार कहते हैं :—

हप्त बालाकि एक बार काशिराज अजात शत्रु को बोला—मैं आपको ब्रह्म का उपदेश दूंगा। राजा ने कहा, बहुत अच्छा मैं भी तुमको ब्रह्मोपदेश देने पर एक सहस्र गाय दान में दूंगा।

गार्ग्य ने अजातशत्रु से कहा—यह जो आदित्य में पुरुष है अर्थात् सूर्य है मैं इसे ब्रह्म मानकर इसकी उपासना करता हूँ। यह सुनकर अजात शत्रु बोले यह आदित्य संसार में सबसे ऊपर तो स्थित है, सब से श्रेष्ट है पर यह ब्रह्म नहीं है। यह तो आदित्य (सूर्य) ही है। भौतिक पदार्थ है।

गार्ग्य ने फिर कहा कि मैं चन्द्र में जो पुरुष है उसे ब्रह्म मानता हूँ। यह सुन कर अजातशत्र बोले—ऐसा नहीं है यह चन्द्र तो चान्दनी फैलाने वाला भौतिक पदार्थ है इसे ब्रह्म स्वीकार नहीं किया जा सकता है।

गार्ग्य ने फिर कहा मैं जो यह विद्युत में पुरुष है इसको ब्रह्म मानता हूँ। ब्रह्म मानकर उसकी उपासना करता हूँ। अजातशत्रु ने कहा कि विद्युत एक अचेतन शक्ति है और भौतिक तत्त्व है। यह ब्रह्म नहीं हो सकता है।

गार्ग्य ने फिर कहा यह जो आकाश में पुरुष है मैं उसे ब्रह्म मानता हूँ। अजातशत्रु ने कहा कि ऐसा न कहो। आकाश तो गति शून्य तत्त्व है। यह दूसरों को गति नहीं दे सकता है। यह ब्रह्म नहीं माना जा सकता है।

गार्ग्य ने फिर कहा यह जो वायु है मैं इसको ब्रह्म मान कर इसकी उपासना करता हूँ। अजातशत्रु ने कहा वायु गतिशील अवश्य है परन्तु यह भौतिक पदार्थ है। इसे ब्रह्म नहीं माना जा सकता है।

गार्ग्य ने फिर कहा यह जो जल में पुरुष है मैं इसे ब्रह्म मान कर इसकी उपासना करता हूँ। अजातशत्रु ने कहा—जल सब को अच्छी लगने वाली वस्तु है और भौतिक तत्त्व भी है पर इसे ब्रह्म के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता है।

ब्रह्म के सूर्य, चन्द्र, विद्युत, आकाश, वायु और जल से हटकर पिण्ड (शरीर) के भागों को ब्रह्म कहते हुए गार्ग्य ने कहना प्रारम्भ किया—दर्पण में जो पुरुष दीखता है, नाद (ध्वनि) में जो पुरुष दीखता है, चारों दिशाओं में जो पुरुष फिर रहे हैं मैं उन्हें ब्रह्म मान कर उपासना करता हूँ। अजातशत्रु ने गार्ग्य से कहा—कि दर्पण में तो अपना प्रतिबिम्ब दीखता है। नाद में अपने प्राण की ही ध्वनि सुनाई देती है। चारों ओर जो पुरुष घूमते फिरते दिखाई देते हैं वे सब हमारे जैसे ही पुरुष हैं।

गार्ग्य ने फिर कहा जो अपने शरीर में आत्म पुरुष है मैं उसी को ब्रह्म मानकर उसकी उपासना करता हूँ। यह सुन कर अजातशत्रु ने कहा कि यह भी उचित नहीं है यह शरीर गत आत्मा तो स्वयं दूसरे की अपेक्षा रखता है अतः यह ब्रह्म नहीं है। यह सुन कर गार्ग्य चुप हो गया।

तब अजातशत्रु बोले—हे गार्ग्य ! यदि ब्राह्मण क्षत्रिय के पास ब्रह्मविद्या सीखने आता है तो यह उलटी सी बात प्रतीत होती है। ऐसा होने पर भी मैं तुझको ब्रह्म का उपदेश अवश्य दूंगा। यह कह कर अजातशत्रु गार्ग्य को हाथ से पकड़ कर उसे एक सोते हुए पुरुष के समीप ले गया। उसके पास जाकर उसका नाम लेकर उसे पुकारने लगे परन्तु वह नहीं उठा। फिर उसे हाथ से हिलाया तो वह जाग गया।

अजातशत्रु ने गार्ग्य से कहा—बताओ इसका विज्ञानमय पुरुष कहां था ? यह नाम पुकारने पर भी नहीं बोला और जब हमने हाथ से हिलाया तब वह विज्ञानमय पुरुष कहां से आ गया ? यह बात गार्ग्य की समझ में नहीं आई।

तब अजातशत्रु ने गार्ग्य को इस प्रकार समझाया। जब यह व्यक्ति सो रहा था तब भी इसमें विज्ञानमय पुरुष था, परन्तु उस समय अपने सम्पूर्ण ज्ञान को चारों ओर से समेट कर यह हृदयाकाश की ओर चला गया था। सोने के समय यह विज्ञानमय पुरुष इन्द्रियों के ज्ञान को अपने भीतर खींच लेता है। इस अवस्था में हम इसे यह सो रहा है, यह कहते हैं, वस्तुत: उस समय वह अपने स्वरूप में पहुँचा हुआ होता है। उस समय आत्मा वाणी, चक्षु, श्रोत्र, मन इन सब को और इनके ज्ञान को अपने में पकड़ कर भीतर विद्यमान होता है।

स्वप्नकाल में जहां जहां वह घूमता है वे ही उसके लोक होते हैं। स्वप्न में वह कभी राजा बन जाता है, कभी ब्राह्मण और कभी नीच पुरुष बना हुआ अपने को देखता है। जैसे राजा अपने सेवकों को साथ लेकर अपनी इच्छानुसार इधर उधर फिरता है इसी प्रकार यह विज्ञानमय पुरुष इन्द्रियों को अपने साथ लेकर अपने शरीर में इच्छानुसार भ्रमण करता है।

स्वप्न के बाद यह सुषुप्तावस्था में पहुँचता है, तब इसे बिल्कुल ज्ञान नहीं होता है। तब हृदय से निकली अनेक नाड़ियों में से यह पुरीतत् नाड़ी में चला जाता है। उस समय ऐसा होता है जैसे कोई राजकुमार आनन्द की पराकाष्ठा में पहुँचा हुआ हो, वैसे ही आत्मा उस समय आत्मा आनन्द की पराकाष्ठा में पहुँचा हुआ होता है।

जैसे मकड़ी अपने तन्तु के सहारे कभी नीचे उतरती है और कभी ऊपर चढ़ती है वैसे ही आत्मा जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति में विज्ञान रूपी तन्तु के सहारे अन्दर और बाहर आता जाता रहता है। जब यह सुषुप्तावस्था में होता है उस समय आनन्दस्वरूप ब्रह्म के निकट पहुँचने के कारण उसे आनन्द का ही अनुभव होता रहता है। यह ब्रह्म प्राप्ति की एक झांकी है। जिस प्रकार अग्नि से छोटी छोटी चिनगारियां निकलती हैं, वैसे ही आनन्दघन ब्रह्म की निकटता के कारण आनन्द की अनुभूतियां होती हैं।

गार्ग्य ब्रह्माण्ड के भौतिक पदार्थों को देख कर कहता था कि ये ही ब्रह्म हैं और पिण्ड (शरीर) की इन्द्रियों को देख कर कहता था कि ये ही ब्रह्म हैं, इसके अतिरिक्त और कोई ब्रह्म का रूप नहीं है। आजातशत्रु ने उसे समझाया कि जिन को तुम ब्रह्म समझ बैठे हो, यह ब्रह्म नहीं है, ये भौतिक पदार्थ हैं। ब्रह्म का स्वरूप आनन्द-घनता है। जिसकी कुछ झांकी सुषुप्तावस्था में सबको प्राप्त होती है। सुषुप्तावस्था में जो आनन्द का अनुभव है वह ब्रह्म की समीपता का स्मरणमात्र है।

याज्ञवल्क्य मैत्रेयी संवाद को लिखते हुए उपनिषद्कार कहते हैं :—

यज्ञावल्क्य ने अपनी पत्नी मैत्रेयी से कहा—हे मैत्रेयी ! मैं अब वानप्रस्थाश्रम में यहां से जाना चाहता हूँ, आओ तेरे और कात्यायनी के झगड़े को चलता चलता समाप्त करता चलूं ।

याज्ञवल्क्य धन का बटवारा कर वानप्रस्थाश्रम में प्रवेश लेना चाहते थे मैत्रेयी को पता लग गया कि उसके पति याज्ञवल्क्य दोनों पत्नियों के लिए धन का बटवारा करके घर से जाना चाहते हैं । याज्ञवल्क्य के मन की बात को समझ कर मैत्रेयी ने अपने पति से पूछा—भगवन् ! यदि यह सारी भूमि धन से पूर्ण होकर मुझे मिल जावे तो क्या मैं अमर हो जाऊंगी । याज्ञवल्क्य ने कहा कि तुम अमर तो नहीं हो सकती परन्तु धन मिलने पर धनी पुरुषों के समान तुम्हारा जीवन सुख से बीतता रहेगा । अमर जीवन प्राप्ति के लिए तो वित्त से किसी प्रकार की आशा नहीं है ।

यह सुन कर मैत्रेयी बोली—हे भगवन् ! जिस धन से मुझे अमरता प्राप्त नहीं होगी उन धन को लेकर मैं क्या करूंगी । आप मुझे अमर होने का ज्ञान दीजिए । यह सुन कर याज्ञवल्क्य बोले—तुमने मेरी प्रिय बात कही है, आ बैठ तू मेरी बात को ध्यान से सुन ।

हे मैत्रेयी ! पति की कामना के पति प्रिय नहीं होता है, आत्मा की कामना के लिए पति प्रिय होता है । पत्नी की कामना के लिए पत्नी प्रिय नहीं होती है पर अपनी कामना के लिए पत्नी प्रिय होती है । पुत्रों की कामना के लिए पुत्र प्रिय नहीं होते हैं परन्तु अपनी कामना के लिए पुत्र प्रिय होते हैं । धन की कामना के लिए धन प्रिय नहीं होता है अपने लिए धन प्रिय होता है । जनता की सेवा की कामना के लिए या सब की हित की कामना के लिए जनता के प्रति प्रेम नही उमड़ता है आत्मा की कामना के लिए सबके लिए हित दिखाने की भावना होती है ।

हे मैत्रेयी ! आत्मा का दर्शन करना चाहिए, आत्मा के विषय में श्रवण करना चाहिए, आत्मा के विषय में मान करना चाहिए, आत्मा का ही ध्यान करना चाहिए, आत्मा के विषय में सुनने से, उस पर मनन करने से, आत्मा को पूर्णतया जान लेने से संसार का सब कुछ जान लिया जाता है ।

हे मैत्रेयी ! यह संसार आत्मा का ही खेल है, आत्मा से ही प्रत्येक वस्तु की उत्पत्ति होती है । आत्मा के प्राप्त होने पर सब कुछ प्राप्त हो जाता है । जो आत्मा को

छोड़ संसार की वस्तुओं की ओर दौड़ता है उसे संसार की सारी वस्तुएं छोड़ जाती हैं अतः आत्मा ही प्राप्तव्य है।

दुन्दुभि पर चोट लगाने से शब्द निकल कर बाहर आते हैं, यदि उन शब्दों को पकड़ने का प्रयत्न करें तो वे शब्द हाथ में नहीं आते हैं। यदि हम दुन्दुभि को ही पकड़ लें तब सब हाथ में आ जाता है। शंख में हवा भरने से आवाज निकलती है। यदि हम उस ध्वनि को पकड़ने का प्रयत्न करें तो वह हाथ नहीं आ सकती है। शंख को पकड़ लें ता तब सब हाथ में आ जाता है। वीणा को भी पकड़ने से सब हाथ में आ जाता है। इसी प्रकार आत्मा का यह जो खेल संसार है यदि हम उस संसार के पीछे भागें तब कुछ भी हाथ नहीं आता है। आत्मा को ही पकड़ लें, तब सब कुछ हाथ में आ जाता है क्योंकि यह सब खेल आत्मा का ही है। जैसे सब जल समुद्र में जाता है, सब स्पर्श त्वचा को, सब गन्ध नासिका को, सब रस जिह्वा को, सब रूप चक्षु को, सब शब्द श्रोत्र को, सब कर्म हस्त को, सब गति पांव को पहुँचती है, इसी प्रकार सृष्टि का सब कुछ आत्मा को ही पहुँचता है। अत: बाह्य जगत् को छोड़ कर आत्मा की तलाश करनी चाहिए।

जिस प्रकार नमक पानी में विलीन हो जाता है, उसे पानी से निकाला नहीं जा सकता है, इसी प्रकार विज्ञान धन आत्मा सृष्टि में सर्वत्र विद्यमान है। पृथक दिखाई नहीं देता है।

राजा जनक की सभा में याज्ञवल्क्य तथा अश्वल का संवाद उपनिषद्कार लिखते हैं :—

विदेह राज जनक ने बहुदक्षिणा नामक यज्ञ किया। वहां अनेक ब्राह्मण इकट्टे हुए थे। राजा जनक यह जानना चाहते थे कि इन सब विद्वानों में सब से अधिक विद्वान् कौन है? सर्वोत्तम विद्वान् को राजा ने एक हजार गाय देने का निश्चय किया। जिनके सींगों पर उसने दस दस तोले सोना बन्धवा दिया था।

राजा ने उस ब्राह्मण सभा में कहा कि जो आपमें सर्वश्रेष्ठ ब्राह्मण या विद्वान् हो, वह इन गायों को अपने आश्रम में ले जावे। यह सुन कर याज्ञवल्क्य ने अपने शिष्य सामश्रुवा को कहा कि इन एक हजार गायों को हांक कर अपने आश्रम में ले चलो। उस सभा में राजा जनक के पुरोहित अश्वल विद्यवान थे, उन्होंने याज्ञवल्क्य से कहा कि हे याज्ञवल्क्य! पहले हमारे प्रश्नों का उत्तर दो, फिर गायों को हांक कर ले जाना। याज्ञवल्क्य ने कहा पूछो?

सबसे पहले अश्वल ने उससे प्रश्न किया—

1. यज्ञ का उद्देश्य यजमान को संसार के बन्धन से छुटकारा देना है और मोक्ष प्रदान करना है। जब मृत्यु किसी को भी जीवित नहीं छोड़ती है, तब यजमान मृत्यु से छुटकारा कैसे पा सकता है? उसे मोक्ष कैसे प्राप्त हो सकेगा?

उत्तर—उसका प्रश्न सुनकर याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया—मृत्यु से छुटकारा पाने का यह अर्थ नहीं है कि यजमान की कभी मृत्यु ही नहीं होती है। भौतिक जगत् में 'अग्नि' जो काम करती है, व्यक्ति जगत् में वाणी का भी वही महत्त्व है। जैसे अग्नि में पड़ कर सारा मैल दग्ध हो जाता है इसी प्रकार यजमान की वाणी में तेजस्विता आ जाती है। यही यजमान का मृत्यु को जीतना कहलाता है। या मोक्ष पाना कहा जाता है। समष्टि जगत् की अग्नि में और व्यष्टि जगत् की वाणी में समरसता आ जाना मृत्यु से छूट जाना है। यहा मोक्ष है, यही मुक्ति है, यही अति मुक्ति है।

इसके पश्चात् अश्वल ने दूसरा प्रश्न पूछा—

2. यज्ञ का उद्देश्य यजमान को दिन रात के बन्धन से मुक्त कर उसे अमर कर देना है। दिन रात तो सर्वत्र विद्यमान हैं, फिर दिन रात के बन्धन से छुटकारा कैसे होगा?

इसका उत्तर देते हुए याज्ञवल्क्य ने कहा—दिन रात के बन्धन से छुटने का यह मतलब नहीं है कि यजमान के लिए दिन रात होते ही नहीं हैं। भौतिक जगत् में 'सूर्य' जो काम करता है, व्यक्ति के जगत् में 'चक्षु' का वही काम है। जैसे सूर्य के होने पर दिन रात का भेद न रह कर सर्वत्र प्रकाश ही रहता है वैसे ही जिसके तत्त्व-ज्ञान के नेत्र खुल जाते हैं उसके लिए कहीं भी अन्धकार नहीं रहता है। यही दिन रात के बन्धन से छूट कर अमर होना है। यही मोक्ष है, यही मुक्ति है, यही अति मुक्ति है।

तत् पश्चात् अश्वल ने तीसरा प्रश्न किया—

3. यज्ञ का उद्देश्य यजमान को शुक्लपक्ष और कृष्ण पक्ष के बन्धन से मुक्त कर उसे अमर कर देना है। शुक्लपक्ष और कृष्ण पक्ष तो संसार में हर वस्तु के होते हैं। हर वस्तु का पूर्व पक्ष और अपर पक्ष होता है। हर वस्तु के दो पहलू होते हैं। फिर यजमान पूर्व पक्ष तथा अपर पक्ष से कैसे मुक्त हो जाता है?

याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया—पूर्व पक्ष तथा अपरपक्ष से छूटने का यह मतलब नहीं है कि यजमान किसी बात में भी जीवन में अवश्यंभावी दो पहलुओं से छूट जाता है। भौतिक जगत् में जो 'वायु' काम करता है, व्यक्ति जगत् में 'प्राण' वही काम करता हैं। वायु की दो दिशायें हैं—पूर्व पश्चिम, उत्तर दक्षिण, प्राण की भी दायां

सांस और बायां सांस ये दो दिशाएं हैं। श्वास प्रश्वास पर आधिपत्य प्राप्त करना ही पूर्वपक्ष और अपर पक्ष के बन्धन से मुक्त हो जाना है। यही मुक्ति है, यही अति मुक्ति है।

फिर अश्वल ने प्रश्न किया—यज्ञ का उद्देश्य यजमान को स्वर्ग तक पहुँचा देना है। जब अन्तरिक्ष निरालम्ब है, उसकी कोई टेकन नहीं, तब किस सीढ़ी से यजमान स्वर्ग तक पहुँचता है ?

याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया—यजमान के स्वर्ग में पहुँचने का यह अर्थ नहीं है कि अन्तरिक्ष में किसी स्थान पर स्वर्ग लोक है, जिस पर पहुँचने के लिए सीढ़ी की आवश्यकता हो। भौतिक जगत् में 'चन्द्र' जो काम करता है व्यक्ति के जगत् में 'मन' वही काम करता है। चन्द्र समुद्र में ज्वार भाटा लाता है जल के उत्थान पतन का वही कारण है। इसी प्रकार मन का काम भी जीवम का उत्थान तथा पतन है। जब यजमान मन पर आधिपत्य प्राप्त कर लेता है तब मानो वह स्वर्ग लोक में पहुँच जाता है। यही मुक्ति है, यही अति मुक्ति है।

फिर अश्वल ने पांचवां प्रश्न किया—आज जनक के यहां जो यज्ञ हो रहा है उसमें कितनी और किन-किन ऋचाओं का प्रयोग किया जावेगा ?

याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया—तीन ऋचाओं का इस यज्ञ में प्रयोग होगा जिनके नाम हैं पुरोनुवाक्या, याज्या, शस्या। 'पुरोनुवाक्या'—वह ऋचा है जिसमें यज्ञ का आरम्भ करते हुए यजमान के संकल्प की घोषणा की जाती है। 'याज्या'—वे ऋचायें हैं जिनमें इस संकल्प को दृढ़ करने के लिए उन्हें बार बार भिन्न-भिन्न प्रकार से पढ़ा जाता है। 'शस्या'—वे ऋचायें हैं जो संकल्प कृत कार्य की समाप्ति पर मानसिक प्रसन्नता के लिए की जाती है। यज्ञ ही नहीं परन्तु प्रत्येक कार्य को यज्ञ समझ कर तीन प्रकार की शब्दावली का प्रयोग करना अभीष्ट है। समष्टि तथा व्यष्टि में इन तीन प्रकार के संकल्प कृत कार्य करना ही मुक्ति है, अपने प्रश्नों के उत्तर को पाकर अश्वल चुप हो गये।

राजा जनक की सभा में याज्ञवल्क्य तथा आर्तभाग के संवाद का वर्णन करते हुए उपनिषद्कार कहते हैं :—

आर्तभाग ने पूछा—ग्रह कितने हैं ? अतिग्रह कितने हैं ? ग्रह कहते हैं जो ग्रहण करें और अतिग्रह कहते हैं जो इतनी जोर से पकड़े कि फिर उस से छुटकारा होना कठिन हो जावे।

याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया—नासिका ग्रह है और गन्ध अति ग्रह है। नासिका तो केवल ग्रहण करती है पर गन्ध को मनुष्य जोर से पकड़ लेता है जिससे छुटकारा पाना बड़ा कठिन है।

वाणी ग्रह है परन्तु वाणी का प्रयोग अपने नाम को फैलाने में करते हैं अतः 'नाम' अति ग्रह है।

जिह्वा ग्रह है और रस अति ग्रह है। रस के वश होकर मनुष्य चटोरा हो जाता है। चक्षु ग्रह है और रूप अति ग्रह है। रूप पर मनुष्य मोहित हो जाता है। श्रोत्र ग्रह है शव्द अति ग्रह है—संगीत के शब्द पर पुरुष मोहित हो जाता है। मन ग्रह है और कामना अति ग्रह है—कामना के कारण मन वश में नहीं रहता है। हाथ ग्रह है, कर्म अतिग्रह है। त्वचा ग्रह है, स्पर्श अतिग्रह है। इस प्रकार इन आठों के जाल में फंसकर मनुष्य जीवन में फिसल जाता है।

आर्तभाग ने दूसरा प्रश्न किया—यह ग्रह और अतिग्रह मृत्यु का रूप धारण करके मनुष्य मात्र का संहार कर रहे हैं। विषयों में फंस कर मनुष्य का छुटकारा नहीं होता है। ये तो साक्षात् मृत्यु हैं। फिर इनकी मृत्यु कैसे हो सकती है। क्या मृत्यु की भी मृत्यु हो सकती है ?

याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया—मृत्यु की मृत्यु हो सकती है। जैसे—अग्नि सब पदार्थों को भस्म कर देता है पर जल अग्नि को भी मार डालता है। अग्नि मृत्यु है। जल उसे अन्न की तरह खा जाता है, नष्ट कर देता है। ब्रह्म साक्षात्कार से ही इन सब विषयों की मृत्यु हो जाती है।

आर्तभाग ने तीसरा प्रश्न किया—जब मनुष्य मर जाता है तब इन्द्रियां तथा उनके विषय जिन्हें तुमने ग्रह तथा अतिग्रह कहा है वे सब उस समय कहां जाते हैं—क्या ये उसके साथ जाते हैं ?

याज्ञवल्क्य ने कहा—नहीं ये विषय और इन्द्रियां उसके साथ नहीं जाते हैं। ये यहीं भौतिक तत्वों में लीन हो जाते हैं। शरीर से प्राण निकलने पर शरीर मरा रह जाता है।

आर्तभाग ने चोथा प्रश्न किया—आपके कथनानुसार इन्द्रियां तो यहीं लीन हो जाती हैं। क्या कोई ऐसी वस्तु भी है जो जीवात्मा के साथ जाती है और वह उससे छूट नहीं सकती है ?

याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया—जब मनुष्य मर जाता है तब नाम इसे नहीं छोड़ता है। अर्थात् इस पुरुष का यह नाम था यह सदा रहता है।

आर्तभाग ने पांचवां प्रश्न किया—जब पुरुष मर जाता है तब उसकी वाणी अग्नि में, प्राण वायु में, चक्षु आदित्य में, मन चन्द्रमा में, श्रोत्र दिशाओं में, शरीर शरीर पार्थिव तत्त्वों में लीन हो जाता है तब जीव का आधार कुछ भी बच नहीं रहता है, ऐसी हालत में जीव कहां रहता है ?

याज्ञवल्क्य ने कहा—अब हमको इस विषय में विचारने के लिए एकान्त में गमन करना चाहिए। ऐसा कह कर दोनों ने एकान्त में बातें कीं। तदनन्तर वे सारी बातें उसने लोगों के सामने कहीं—वे इस प्रकार हैं—कर्म के आधार पर ही जीव बना रहता है। ऊन्होंने कर्म की प्रशंसा की। पुण्य कर्म से पुण्य जीवन मिलता है, पाप कर्म से पापी जीवन मिलता है। आर्तभाग सन्तुष्ट होकर चुप हो गया।

राजा जनक की सभा में याज्ञवल्क्य तथा उषस्त चाक्रायण के संवाद का वर्णन करते हुए उपनिषद् कार कहते हैं :—

उषस्त चाक्रायण ने याज्ञवल्क्य से प्रश्न किया—हे भगवन् ! यह जो प्रत्यक्ष ब्रह्म है या जो सब शरीरों में आत्मा है उसके विषय में समझाने की कृपा करें। उषस्त चाक्रायण को प्रत्तर देते हुए याज्ञवल्क्य ने कहा—हे उषस्त ! सुन, जिस प्रकार तेरे शरीर में आत्मा है इसी प्रकार औरों के शरीर में भी आत्मा है। यह आत्मा प्राण द्वारा सबके जीवन में दिखलाई देता है, यही प्रत्यक्ष आत्मा है। जो अपान द्वारा सबके जीवन में दिखलाई देता है, यही प्रत्यक्ष आत्मा है। जो व्यान द्वारा, उदान द्वारा सब के भीतर दिखाई देता है वही प्रत्यक्ष आत्मा है। याज्ञवल्क्य ने उसे समझाया कि ये प्राण, अपान, व्यान, उदान जिस आत्मा के कारण गतिशील है, वह आत्मा इनसे पृथक् है। यदि ये प्रत्यक्ष हैं तो आत्मा भी इतना ही प्रत्यक्ष है। यह सुन उषस्त चुप हो गया।

राजा जनक की सभा में याज्ञवल्क्य और कहोल का संवाद करते हुए उपनिषद् कार कहते हैं :—

कहोल ने याज्ञवल्क्य से कहा—हे भगवन् ! आपने कहा है कि आत्मा सबके अन्दर विद्यमान है परन्तु हम तो भूख, प्यास से सताये जाते हैं, शोक, मोह, जरा और मृत्यु से आक्रान्त रहते हैं। आत्मा तो इन सब से परे है, फिर जो यह हमारे भीतर है, उसे आप आत्मा कैसे कहते हैं ?

याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया—हमारे अन्दर जो आत्मा है वह है जिसके जान लेने पर मानव पुत्रैषणा, वित्तैषणा, लोकैषणा से छूट जाता है। जब तक मनुष्य अपने भीतर के आत्मा को न जानकर संसार के विषयों में ही अपनापन देखता है तभी तक वह एषणाओं का शिकार रहता है। यह सुन कोहल चुप हो गये।

राजा जनक की सभा में याज्ञवल्क्य और गार्गी का संवाद लिखते हुए उपनिषद्-कार लिखते हैं —इसके बाद बहुत अधिक बोलने वाली गार्गी याज्ञवल्क्य से प्रश्न करने खड़ी हुई। उसने प्रश्न करने की झड़ी लगा दी। विभिन्न प्रकरण के भी वह प्रश्न करती रही। उसके इस अनर्गल प्रलाप को सुनकर उसे झिड़कते हुए याज्ञवल्क्य ने कहा—हे गार्गी! इस प्रकार बेकार प्रश्न करने से तू पागल हो जावेगी। हे गार्गी! सुन, ब्रह्म ऐसी सत्ता है जो उसको स्वीकार कर लेता है, मान लेता है उसके लिए कोई प्रश्न शेष नहीं रहता है। इस लिए उचित प्रश्न कर। बेकार की बातें करके समय को नष्ट न कर। यह सुन कर गार्गी चुप हो गई।

राजा जनक की सभा में याज्ञवल्क्य और आरुणि उद्दालक के संवाद को बतलाते हुए उपनिषद्कार लिखते हैं :—

इसके बाद उद्दालक ने याज्ञवल्क्य से पूछा—हे भगवान्! क्या आप उस 'सूत्र' को जानते हैं जिसमें सब लोक, परोक, सब भूतगण माला के मनके की तरह पिरोये हुए हैं? क्या तुम 'अन्तर्यामी' जानते हो जो इस लोक, परलोक और सब भूतों का नियमन करता है? याज्ञवल्क्य ने कहा—इसे मैं जानता हूँ। यह सुन उद्दालक बोले—यदि जानते हो तो बतलाओ।

याज्ञवल्क्य ने उत्तर देते हुए कहा—ब्रह्माण्ड में वायु और पिण्ड में प्राण ही वह सूत्र है जिसमें लोक, परलोक और सब भूतगण माला के मनके की तरह पिरोये हुए हैं। जब पुरुष के प्राण निकल जाते हैं तब उसके सब अङ्ग ढीले हो जाते हैं। जैसे माला के सूत्र के निकल जाने से सब मनके बिखर जाते हैं।

सब का नियमन करने वाले अन्तर्यामी के विषय में कहते हुए आगे कहते है—जो पृथिवी में रहता हुआ भी पृथिवी से अलग है, जिसे पृथिवी नहीं जानती, परन्तु जिसका पृथिवी ही शरीर है, जो पृथिवी के भीतर से उसका नियमन कर रहा है, वही सबका आत्मा है, वही अन्तर्यामी है, वही अमृत है।

जो जलों में रहता हुआ भी जलों से पृथक् है, जिसे जल नहीं जानते हैं, पर

जिसका जल ही शरीर है। जो जलों के भीतर से उसका नियमन करता है वही तेरा भी आत्मा है, वही अन्तर्यामी है वही अमृत है।

याज्ञवल्क्य ने यही बात अग्नि, अन्तरिक्ष, वायु, द्यु, आदित्य, दिशायें, चन्द्र-तारक, आकाश, तम, तेज आदि ब्रह्माण्ड के भौतिक पदार्थों तथा वाणि, चक्षु, श्रोत्र, मन, त्वचा, विज्ञान, रेतस् आदि आधिदैविक अर्थात् पिण्ड के पदार्थों के विषय में कही।

वह अन्तर्यामी द्रष्टा है, दृश्य नहीं है, श्रोता है, श्रुत नहीं है, मन्ता है, मत नहीं, विज्ञाता है, विज्ञात नहीं, विश्व में उसके बिना कोई द्रष्टा, कोई श्रोता, कोई मन्ता, कोई विज्ञाता नहीं है। यही अन्तर्यामी आत्मा ही परमात्मा है। इसकी प्राप्ति के बिना सब दुःख ही दुःख है। यह सुन कर उद्दालक चुप हो गये।

राजा जनक की सभा में याज्ञवल्क्य तथा गार्गी का पुनः संवाद दिखलाते हुए उपनिषद्कार लिखते हैं :—

गार्गी ने पण्डित सभा में कहा कि मैं याज्ञवल्क्य से दो प्रश्न और करूंगी यदि उनका उचित समाधान याज्ञवल्क्य ने कर दिया तो समझो आप में से इस ब्रह्मवेत्ता को कोई जीत नहीं सकता। सब ने एक स्वर में कहा—पूछो।

गार्गी ने पूछा—हे याज्ञवल्क्य ! जैसे कोई योद्धा युद्धभूमि में जाकर शत्रु को बींधने वाले दो पैने बाण चढ़ा कर सामने खड़ा हो, उसी तरह मैं दो प्रश्नों को लेकर तेरे सामने उपस्थित हुई हूँ। आप इनका उत्तर दो।

गार्गी ने प्रश्न किया—जो द्यु लोक से ऊपर है और जो पृथ्वी लोक से नीचे है, द्यु और पृथ्वी के बीच में जो है, जिसे भूत, भविष्यत्, वर्तमान कहा जाता है—वह सब किस में ओत प्रोत है ? यह सुन कर याज्ञवल्क्य ने कहा—आकाश में ! गार्गी ने कहा—ठीक है, तुझे मेरा नमस्कार है। गार्गी ने फिर दूसरा प्रश्न किया—इस प्रश्न में उसने पहला ही प्रश्न दोहरा दिया, याज्ञवल्क्य ने भी वही उत्तर दोहरा दिया। गार्गी ने देखा याज्ञवल्क्य चिढ़ा नहीं, अतः उसने साहस करके फिर दूसरा प्रश्न किया कि आकाश किसमें ओत प्रोत है ? याज्ञवल्क्य ने कहा—हे गार्गी ! आकाश जिसमें ओत प्रोत है उसे ब्रह्मवेत्ता लोग 'अक्षर' कहते हैं। वह अक्षर न स्थूल है, न अणु समान है, छोटा भी नहीं है, बड़ा भी नहीं है, वह जिह्वा का विषय भी नहीं है, वह आंख का विषय भी नहीं है, कान का विषय भी नहीं है और वह वाणी का विषय भी नहीं है।

इसी अक्षर (ब्रह्म) के सूत्र में बन्धे सूर्य और चन्द्र अपने अपने स्थानों में बन्धे

अपने को धारण किये हुए हैं। इसी अक्षर के नियमन में द्यु लोक और पृथिवी लोक अपने को धारण किये हुए स्थित हो रहे हैं। इसी अक्षर के शासन सूत्र में बन्धे निमेष, मुहूर्त्त, रात्रि, अर्धमास, मास, ऋतु, संवत्सर ठहरे हुए हैं। इसी अक्षर (ब्रह्म) के शासक सूत्र में बन्धी नदियां बह रही हैं।

वह अक्षर स्वयं अदृष्ट होने पर भी द्रष्टा है, अश्रुत होने पर भी श्रोता है, अमत होने पर भी अमन्ता है, अविज्ञात होने पर भी बिज्ञाता है। हे गार्गी ! उस अक्षर के सिवा कोई दृष्टा नहीं है। इसके सिवा कोई श्रोता, कोई मन्ता, कोई विज्ञाता नहीं है। वह अक्षर इस आकाश में ओत प्रोत है।

इस उत्तर को सुन कर गार्गी बोली—हे ब्राह्मणो ! तुम में से कोई भी इस ब्रह्मवेत्ता को नहीं जीत सकेगा। यह कह वह चुप होकर बैठ गई।

राजा जनक की सभा में याज्ञवल्क्य और विदग्धशाकल्य के संवाद को उपनिषद्कार लिखते हैं :—

विदग्धशाकल्य ने याज्ञवल्क्य से पूछा—हे याज्ञवल्क्य ! देवता संसार में कितने मानने चाहिएं ? इसके उत्तर में याज्ञवल्क्य ने पहले कहा देवता तीन हैं, फिर कहा देवता तीन सौ हैं, फिर कहा तीन हजार तीन हैं।

इस उत्तर से असन्तुष्ट हुए उसने फिर यही प्रश्न किया। उसके उत्तर में याज्ञवल्क्य ने कहा छः हैं, फिर कहा तीन हैं, फिर कहा दो हैं, फिर कहा एक और फिर अन्त में कहा ईश्वर एक है। तब शाकल्य ने याज्ञवल्क्य से कहा कि पहले तुमने तीन हजार तीन देवता क्यों कहे थे ? यह सुन कर याज्ञवल्क्य बोले—यह सब प्रभु की महिमा का वर्णन करने के लिए ही कहा था।

इसमें उपनिषद्कार कहते हैं कि एक देवतावाद को मानते हुए भी प्राचीन साहित्य में बहुदेवता वाद क्यों पाया जाता है ? देवता एक ही है, किन्तु उसकी महिमा का वर्णन करने के लिए तीन, तेतीत, तीन हजार तीन आदि देवता कहे हैं।

राजा जनक को जो याज्ञवल्क्य ने उपदेश दिया, उसका वर्णन करते हुए उपनिषद्कार लिखते हैं—

एक बार राजा जनक के पास याज्ञवल्क्य पहुँचे। राजा ने ऋषि याज्ञवल्क्य के आने का कारण पूछा और कहा—हे मुने ! क्या किसी पशु की तुम को आवश्यकता है ? या किसी सूक्ष्म तत्त्व पर विचार करने आये हो ?

राजा की बात सुन कर याज्ञवल्क्य ने जनक से पूछा—हे राजन् ! आप मुझे बतलावें आपके गुरुओं ने ब्रह्मज्ञान के विषय में आपको क्या क्या शिक्षायें दी हैं। उन पर ही यहां विचार करें।

राजा ने कहा—मेरे एक गुरु शैलिनि थे, उनका उपदेश था कि वाणी ही ब्रह्म है, उसी की उपासना करनी चाहिए।

मेरे दूसरे गुरु उदंक शौल्वायन थे। उनका उपदेश था कि प्राण को ब्रह्म मान कर उपासना करनी चाहिए।

मेरे तीसरे गुरु वक्र्यु वार्ष्ण थे। उनका उपदेश था कि चक्षु ही ब्रह्म है, उसी की उपासना करनी चाहिए।

मेरे चौथे गुरु गदर्भविपीत भारद्वाज थे। उनका उपदेश था कि श्रोत्र ही ब्रह्म है। उसी की उपासना करनी चाहिए।

मेरे पांचवें गुरु सत्यकाम जाबाल थे। उनका उपदेश था कि मन ही ब्रह्म है। उसी की उपासना करनी चाहिए।

मेरे छठे गुरु विदग्धशाकल्य थे। उनका उपदेश था कि हृदय ही ब्रह्म है। उसी की उपासना करनी चाहिए।

इसका उत्तर देते हुए याज्ञवल्क्य ने जनक को समझाया कि यदि वाणी ही ब्रह्म है तो गूंगा उसकी उपासना कैसे करेगा। अगर प्राण ही ब्रह्म है तो जो प्राण नहीं लेता वह उसकी उपासना कैसे करेगा। यदि चक्षु ही ब्रह्म है तो अन्धा उसकी उपासना कैसे करेगा। यदि श्रोत्र ही ब्रह्म है तो बहरा उसकी उपासना कैसे करेगा। यदि मन ही ब्रह्म है तो जिसका मन काम नहीं करता है वह ब्रह्म की उपासना कैसे करेगा। यदि हृदय ही ब्रह्म है तो हृदय शून्य व्यक्ति उसकी उपासना कैसे करेगा।

याज्ञवल्क्य ने कहा कि इन गुरुओं ने आपको जो उपदेश दिया है, वह ठीक है परन्तु यह ब्रह्म के एक अंश का उपदेश है, इससे ब्रह्म का बहुत बड़ा अंश बच रहता है। इन में से प्रत्येक के आयतन और प्रतिष्ठा को जान कर ही पूर्ण ब्रह्म को जाना जा सकता है। नींव को प्रतिष्ठा कहते हैं। नींव पर जो भवन बनता है उसे आयतन कहते हैं। इन सब की नींव आकाशरूप ब्रह्म है वाक्, प्राण आदि आयतन या ब्रह्म हैं।

उपनिषदों की विचार-धारा में पिण्ड का स्वल्प और ब्रह्माण्ड का अनल्प

पारस्परिक सम्बन्ध है। ये दोनों पिण्ड तथा ब्रह्माण्ड मिलकर ही विश्व की सत्ता बनाते हैं। इस सम्पूर्ण को उपनिषद्कार ब्रह्म कहते हैं। आत्मा से संयुक्त पिण्ड और ब्रह्म से संयुक्त ब्रह्माण्ड चेतन हैं। इसी चेतन ब्रह्म के पिण्ड में वाक्, प्राण, चक्षु, श्रोत्र, मन और हृदय के अंश हैं जिनको भिन्न-भिन्न गुरुओं ने जनक को ब्रह्म कहा है। याज्ञवल्क्य ने जनक को बतलाया कि ये ब्रह्म के अंश तो हैं पर ब्रह्म नहीं हैं। पिण्ड में ब्रह्म का एक वाक् ब्रह्माण्ड की अग्नि है। पिण्ड में ब्रह्म का एक अंश प्राण, ब्रह्माण्ड में चर-अचर जगत् का वायुमय जीवन है। पिण्ड में ब्रह्म का एक अंश चक्षु, ब्रह्माण्ड की आंख सूर्य है। पिण्ड में ब्रह्म का एक अंश श्रोत्र, ब्रह्माण्ड में दिशाएं हैं, जिनका काम शब्द ग्रहण करना है। पिण्ड में ब्रह्म का एक अंश मन, ब्रह्माण्ड में चन्द्र है, पिण्ड में ब्रह्म का एक अंश हृदय, ब्रह्माण्ड में जल है जो हृदय की शीतलता का प्रतिनिधि है। ये सब आयतन (भवन) हैं। ब्रह्माण्ड की इन वस्तुओं का पिण्ड की वाक्, प्राण, चक्षु, श्रोत्र, मन, हृदय से समरसता होने पर पूर्ण ब्रह्म की अनुभूति होती है। अग्नि, वायु, सूर्य, दिशाएं, चन्द्र, जल जिनको हमने वाक्, प्राण, चक्षु, श्रोत्र, मन, हृदय का आयतन (भवन) कहा है, इन सब की प्रतिष्ठा (नींव), इन सब की स्थिति आकाश में है। इन सबको एक साथ एक इकाई के रूप में जान लेना ही ब्रह्म का ज्ञान है। इनमें से एक एक को ही ब्रह्म मानना ब्रह्म के एक अंश का ज्ञान है।

जाग्रत्, स्वप्न, सुषुप्ति, तुरीय अवस्थाओं का वर्णन करते हुए उपनिषद्कार कहते हैं :—

याज्ञवल्क्य के उपदेशों से प्रभावित होकर जनक याज्ञवल्क्य को बोले—हे महाराज ! आप मुझे अपना शिष्य मान कर उपदेश दीजिए। जनक की नम्रता को देखकर याज्ञवल्क्य बोले—हे राजन ! आप ने ब्रह्म ज्ञान का सहारा लिया है। लोग आपकी पूजा करते हैं। आपने वेद शास्त्र पढ़े हैं। उपनिषद् का सारा ज्ञान आपने श्रवण कर लिया है। यदि आप और अधिक सुनना चाहते हैं तो आप बतलावें इस जगत् से छूट कर कहां जाओगे ? यह सुन कर जनक बोले—हे गुरो ! मुझे इसकी जानकारी नहीं है। याज्ञवल्क्य बोले कि मैं आपको बतलाऊंगा कि आप यहां से छूट कर कहां जाओगे। राजा ने कहा बतलाइए।

याज्ञवल्क्य बोले—हे राजन् ! जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति, तुरीय ये चार अवस्थाएं हैं। ये चारों अवस्थाएं पिण्ड तथा ब्रह्माण्ड इन दोनों में पाई जाती हैं। व्यक्ति के जीवन में और संसार में ये चारों अवस्थाएं हैं। व्यक्ति की जाग्रत्, स्वप्न, सुषुप्ति अवस्था का तो सब को अनुभव है, इन तीनों में आत्मा का शरीर के साथ सम्बन्ध बना रहता है।

चौथी अवस्था तुरीय है, उस अवस्था में आत्मा अपने स्वरूप में चला जाता है। इस अवस्था का 'न इति' 'न इति' इस प्रकार का वर्णन किया जा सकता है। तुरीय अवस्था में आत्मा का ग्रहण नहीं किया जा सकता है, वह छिन्न-भिन्न नहीं हो सकता, वह असंग है, बन्धन रहित है, दुःख रहित है, किसी को दुःख नहीं देता है, वह भय रहित है।

जैसे व्यक्ति के जीवन में जाग्रत्, स्वप्न, सुषुप्ति, तुरीय ये चार अवस्थाएं हैं, वैसे सृष्टि में भी चार अवस्थायें हैं। कार्य जगत् सृष्टि की जाग्रत् अवस्था है, स्वप्नावस्था में स्थावर, स्वेदज, अण्डज, जेरज की सृष्टि नहीं रहती है, परन्तु सूर्य, चन्द्र, पृथिवी आदि बने रहते हैं। तीसरी सृष्टि की अवस्था सुषुप्ति है, जिस में सब कुछ तन्मात्राओं में—कारणावस्था में चला जाता है। चौथी तुरीय अवस्था है जिसे अनिर्वचनीय कहा गया है। याज्ञवल्क्य कहते हैं मनुष्य की गति तुरीयावस्था की ओर जाने की है—आत्मा तथा सृष्टि नेति-नेति—इस अनिर्वचनीय अवस्था में जा रहे हैं जो सब की चरम अवस्था (अन्तिम अवस्था) है।

आत्मा ही स्वयं ज्योति है, इसका वर्णन करते हुए उपनिषद्कार कहते हैं—

याज्ञवल्क्य राजा जनक के यहां पहुँचे और उन्होंने मन में यह निश्चय किया कि वे वहां कुछ नहीं बोलेंगे। जनक इस बात को समझ गये। उन्होंने भी मन में यह निश्चय कर लिया कि इनको बुलवाना अवश्य है। एक बार याज्ञवल्क्य और जनक किसी अग्निहोत्र में दोनों इकट्ठे हो गये। उस समय याज्ञवल्क्य ने जनक से वर मांगने को कहा था। राजा ने 'काम प्रश्न' वर मांगा था अर्थात् जब मैं चाहूँ तब आपसे प्रश्न कर सकूं। याज्ञवल्क्य ने वर दे दिया था। इसी वर की याद दिला कर राजा जनक ने याज्ञवल्क्य से प्रश्न किया और उसका उत्तर याज्ञवल्क्य को देना पड़ा।

राजा ने पूछा—हे याज्ञावल्क्य ! पुरुष को ज्योति (प्रकाश) कहां से मिलती है ? याज्ञवल्क्य ने कहा कि सूर्य से ही ज्योति मिलती है। जब सूर्य अस्त हो जाता है तब उसे प्रकाश कहां से मिलता है यह बात जब जनक ने पुछी तो याज्ञवल्क्य ने कहा कि तब चन्द्र से प्रकाश मिलता है। जब चन्द्र और सूर्य दोनों ही न हों तब प्रकाश किससे मिलता है जनक के इस प्रश्न के करने पर याज्ञवल्क्य ने कहा कि तब प्रकाश अग्नि से मिलता है। जब सूर्य, चन्द्र, अग्नि तीनों ही न हों तब प्रकाश किससे मिलता है यह राजा का प्रश्न सुनकर याज्ञवल्क्य ने कहा कि वाणी से प्रकाश मिलता है। अन्धकार में वाणी ही काम देती है। जब अन्धकार में हाथ को हाथ भी नहीं सूझता है तब वाणी का ही सहारा लिया जाता है। राजा ने फिर पूछा कि जब सूर्य, चांद, अग्नि, वाणी का प्रकाश न मिले तब प्रकाश कहां से मिलता है ? याज्ञवल्क्य ने कहा तब आत्मा ही

मनुष्य के लिए ज्योति का काम देता है। स्वयं ज्योति का अर्थ है, अन्धेरे में बैठे रहने पर जब कुछ भी दिखाई न देता हो, देखने के साधन सूर्य, चन्द्र अग्नि, वाणी न होने पर मैं हूँ यह प्रतीति स्वयं ज्योति है, उस समय अपने होने का अनुभव अवश्य होता है। यही आत्मज्योति, स्वयंज्योति या अन्तःज्योति कही जाती है।

जाग्रत् तथा स्वप्न स्थान में आत्मा को जो अपना रूप अनुभव होता है, वह आत्मा का शुद्ध रूप नहीं है। आत्मा के शुद्ध रूप को उपनिषद्कार बतलाते हुए कह रहे हैं—जागते हुए मनुष्य जिन बातों से भयभीत हुआ है, स्वप्नस्थान में जाकर उन्हीं बातों से अविद्या के कारण भय मान कर समझता है कि मानो कोई उसे मार रहा है, मानो उसे कोई अपने वश में कर रहा है, मानो कोई उसके पीछे लगा हुआ है। परन्तु जिस स्यान में जाकर वह अपने आनन्दमय रूप में आ जाता है वह सुषुप्त स्थान है जिसमें आत्मा की स्वरूप स्थिति होती है, यही आत्मा का अपना रूप है।

यही आत्मा का अतिच्छन्द (आधिपत्य) रूप है। जब आत्मा इस सुषुप्त स्थान में स्थित हो जाता है तब उसे कोई कामना नहीं रहती है। उस समय उसे प्रभु समीपता के आनन्द की अनुभूति होती है। जिस प्रकार प्रिय की समीपता होने पर बाहर भीतर का ध्यान ही नहीं रहता है। यही आत्मा का 'आप्तकाम' रूप है। इसमें उसकी सब कामनायें पूर्ण हो जाती हैं। इस काल में आत्मा ही आत्मा शेष रह जाता है। इस अवस्था में आत्मा का अशोक रूप हो जाता है, उसे किसी प्रकार का भी शोक नहीं होता है।

इस रूप में पहुँचने पर न पिता पिता रहता, न माता माता रहती, न संसार संसार रहता, न देव देव रहता, चोर चोर नहीं रहता, श्रवण श्रवण नहीं रहता और तापस तापस नहीं रहता है। इस अवस्था में आत्मा हृदय रूपी समुद्र के सब शोकों को तैर कर पार पहुँच जाता है।

सुषुप्त स्थान में पहुँच कर आत्मा द्रष्टा होने पर भी देखता नहीं है क्योंकि वहां उसके अतिरिक्त देखने के लिए कुछ होता ही नहीं है। वह घ्राता होने पर भी कुछ सूंघता ही नहीं है क्योंकि वहां उसके अतिरिक्त सूंघने के लिए होता नहीं है, वह रसयिता होने पर भी कोई रस नहीं लेता है क्योंकि वहां उसके अतिरिक्त रस लेने के लिए कुछ होता नहीं है। वह वक्ता होने पर भी कुछ बोलता नहीं है क्योंकि वहां उस के अतिरिक्त बोलने के लिए कुछ होता ही नहीं है। वह श्रोता होने पर भी कुछ सुनता नहीं है क्योंकि वहां उसके अतिरिक्त सुनने के लिए कुछ होता ही नहीं है। वह मन्ता होने पर भी कुछ मनन नहीं करता है क्योंकि वहां उसके अतिरिक्त कुछ भी मनन करने

के लिए नहीं होता है। इसी को याज्ञवल्क्य ने आत्मा के लिए स्वयंज्योति शब्द का प्रयोग किया है।

पुनर्जन्म का वर्णन करते हुए उपनिषद्कार लिखते हैं—

पुनर्जन्म से पूर्व उपनिषद्कार पहले मृत्यु का वर्णन करते हुए कहते हैं—जीवन तभी तक रहता है जब तक आत्मा की शक्ति शरीर की इन्द्रियों में फैली रहती है। आत्मा जब तक अपनी शक्तियों को इन्द्रियों में डाले रखता है तब तक प्राणी जीवित माना जाता है। जब वह आत्मा इन्द्रियों में से अपनी शक्ति निकाल लेता है तब यह कहा जाता है कि प्राणी की मृत्यु हो गई है। जब आत्मा प्राणी में से अपनी शक्तियों को हटा देता है तब उस व्यक्ति के विषय में यह कहा जाता है कि इसे कुछ भी दिखाई नहीं देता है, यह सूंघ नहीं रहा है, यह रस नहीं ले रहा है, यह बोल नहीं रहा है, यह सुन नहीं रहा है, यह छू नहीं रहा है। उस समय अर्थात् मृत्यु के समय आत्मा द्वारा हृदय के अग्र भाग में प्रकाश हो जाता है। उस प्रकाश के साथ यह आत्मा शरीर से बाहर निकलता है। यह आत्मा या तो आंख से निकलता है, या मूर्धा से या शरीर के अन्य भाग से बाहर निकलता है। जब यह आत्मा निकल रहा होता है तब प्राण भी आत्मा के पीछे पीछे चलने लगता है। प्राण के निकलने के साथ अन्य प्राण भी उसके पीछे पीछे निकल पड़ते हैं। जब आत्मा इस प्रकार प्राण छोड़ रहा होता है तब वह ज्ञानवान् होता है। इस ज्ञान सहित आत्मा के साथ विद्या और कर्म साथ साथ गमन करते हैं। पहले जन्मों की बुद्धि, वासना, स्मृति तथा संस्कार आदि भी साथ होते हैं।

पुनर्जन्म का वर्णन करते हुए कहते हैं—जिस प्रकार सुंडी (कीड़ा विशेष) तिनके के सिरे पर पहुँच कर अन्य तिनके के सहारे को पकड़ कर अपने को समेट लेती है, इसी प्रकार यह आत्मा इस शरीर को छोड़ कर पहले तो ज्ञान शून्य हो जाता है फिर दूसरे शरीर का सहारा लेकर अपने आप को समेट लेता है।

जिस प्रकार सुनार सोने की एक मात्रा को लेकर उस सोने से सुन्दर आभूषण बना देता है, इसी प्रकार यह आत्मा इस पुराने शरीर को फेंक कर दूसरा नवीन शरीर धारण कर लेता है।

उपनिषद्कार कहते हैं कि यह आत्मा जिसके साथ अपसे सम्बन्ध जोड़ता है उसी उसी का वह रूप हो जाता है। यह आत्मा विज्ञान अर्थात् बुद्धि से जब सम्बन्ध जोड़ता है तव विज्ञानमय हो जाता है। मन के साथ सम्बन्ध जोड़ने से मनोमय, प्राण के साथ सम्बन्ध जोड़ने से प्राणमय, चक्षु और श्रोता से सम्बन्ध जोड़ने से चक्षुर्मय तथा

श्रोत्रमय, पृथिवी, जल, वायु, आकाश के साथ सम्बन्ध जोड़ने से पृथिवीमय, जलमय, वायुमय, आकाशमय हो जाता है। तेज के साथ सम्बन्ध जोड़ने से तेजोमय, कामना के साथ सम्बन्ध जोड़ने से काममय, क्रोध के साथ सम्बन्ध जोड़ने से क्रोधमय, कामना से सम्बन्ध तोड़ने पर अकाशमय, क्रोध के साथ सम्बन्ध तोड़ने से अक्रोधमय, पापकर्म करने से पापमय, पुण्य कर्म करने से पुण्यमय हो जाता है। आत्मा की जैसी कामना होती है यह वैसा ही काम करता है। जैसा कर्म करने लगता है तदनुसार ही प्रयत्न करने लगता है। जैसा यह कर्म करता है यह वैसा ही हो जाता है।

जब आत्मा के साथ इसका लिङ्ग शरीर तथा मन बन्ध जाता है तब यह मानो कर्मों से बन्धा सा उधर ही खिचा चला जाता है। उस कर्म को पूरा करने पर ही इसको छुट्टी होती है। वह कर्म इसके लिए लोक के समान बन जाता है। जब तक उस कर्म लोक का वेग रहता है तब तक किसी दूसरे कर्म को नहीं कर पाता है। जिस आत्मा में कोई कामना नहीं रहती वह आप्तकाम, या आत्मकाम हो जाता है। वह जीवन मुक्त हो जाता है।

जब मनुष्य के मन से वर्तमान कामनायें छूट जाती हैं तब यह मरणधर्मा मनुष्य अमर हो जाता है। संसार में रहता हुआ ही पर ब्रह्म को प्राप्त कर लेता है। जैसे सांप की केंचुली बाम्बी में रह जाती है इसी प्रकार कामनाओं से मुक्त व्यक्ति का शरीर पड़ा रह जाता है। याज्ञवल्क्य से यह उत्तम उपदेश सुन कर जनक ने उसे एक हजार गायें दीं।

कामनाओं से मुक्ति ही जीवन का लक्ष्य है। कामनाओं में फंसे रहने का अविद्या का मार्ग है। जो इस अविद्या के मार्ग में उलझे रहते हैं वे यहीं पर भटकते रहते हैं। ऐसे लोग आनन्दहीन लोकों को प्राप्त करते हैं जहां चारों ओर अन्धेरा है। ऐसे विद्वान् भी बुद्धिहीन हैं।

यदि कोई आत्म-साक्षात्कार कर ले फिर किस कामना या इच्छा से शरीर के पीछे पड़े रहने की इच्छा करेगा।

इस जन्मकाल में ही जिसने अपने को जान लिया उसका जीवन सफल है और जिसने इसको नहीं जाना मानो उसने अपना नाश कर लिया है। जो आत्मा को जान लेते हैं वे अमर पद को प्राप्त कर लेते हैं। ब्रह्मज्ञानी की महिमा यह है कि वह कर्म करता है पर इससे वह अपनी महिमा बढ़ी हुई नहीं मानता है और न छोटी हुई मानता है। कर्म करना उसका स्वभाव हो जाता है। वह कामना रहित, निस्संग होकर कर्म करता रहता है। वह ब्रह्म की तलाश में ही लगा रहता है। उस ब्रह्म को जानकर

वह कभी भी पाप में लिप्त नहीं होता है। जिसे आत्मा का इस प्रकार ज्ञान हो जाता है वह शान्त, दान्त, तितिक्षु और सभाहित होकर अपने यथार्थ दर्शन कर लेता है। ऐसा व्यक्ति निर्मल और ज्ञानी हो जाता है।

प्रजापति की देव, मनुष्य असुर ये तीन प्रकार की सन्तानें थीं। तीनों ने ब्रह्मचर्य पूर्वक पिता के समीप निवास किया। निश्चित समय तक जब उन्होंने ब्रह्मचर्य-व्रत पूरा कर लिया तो प्रजापति ने देवों को उपदेश 'द' दिया। देवों ने 'द' से समझा कि दमन करो। फिर मनुष्यों को भी 'द' का उपदेश दिया उन्होंने समझा कि दान करो। फिर असुरों को भी 'द' का उपदेश दिया, उन्होंने समझा दया करो।

देवों की निर्बलता है इन्द्रियों की शिथिलता, मनुष्यों की निर्बलता है संग्रह-शीलता, असुरों की निर्बलता है निर्दयता।

हृदय में तीन अक्षर हैं—हृ, द, य। हृ का अर्थ है लाना, 'द' का अर्थ है शुद्ध रक्त देना, 'यम्' का अर्थ है गति करना। रुधिर पहले हृदय में जाता है, फिर हृदय उसको शुद्ध कर शरीर को देता है, देने में रुधिर शरीर में गति करता है। इस प्रकार हृदय द्वारा शुद्ध रक्त का संचार ही स्वर्ग लोक है, ऐसा मानो।

तप किसे कहते हैं इसका वर्णन करते हुए उपनिषद्कार कहते हैं—रोग से पीड़ित होने पर भी दुःख न मानना तप है। मर जाने के बाद बन्धु-बान्धव मृत व्यक्ति को श्मशान भूमि में ले जाते हैं यह परम तप है।

कुछ लोग अन्न को ब्रह्म कहते हैं, पर यह बात ठीक नहीं है वह प्राण के बिना सड़ जाता है। कई प्राण को ही ब्रह्म कहते हैं परन्तु यह भी उचित नहीं है क्योंकि अन्न के बिना प्राण शुष्क हो जाता है। अन्न तथा प्राण दोनों ही मिल कर परमश्रेष्ठ रूप वाले बनते हैं। अन्न और प्राण को मिल कर काम करना चाहिए। अन्न भौतिक वाद की तथा प्राण आध्यात्मिकवाद को कथन करता है। जब दोनों मिल कर चलते हैं तभी जीवन की गाड़ी का प्रचलन होता है।

* श्वेताश्वतरोपनिषद् सार *

एक बार इकट्ठे होकर ब्रह्मवादियों ने सृष्टि के निर्माण पर तथा उसका संचालन कौन करता है इस पर विचार किया। उन्होंने सोचा क्या इस सृष्टि का निर्माण करने वाला ब्रह्म है या अन्य कोई कारण है ? हम सब कहां से उत्पन्न हुए हैं ? कौन इस विशाल सृष्टि की व्यवस्था कर रहा है। किसी की व्यवस्था से ये प्राणी सुख दुःख का अनुभव कर रहे हैं ?

कुछ कहने लगे सृष्टि का कारण 'काल' है। हम कहा भी करते हैं कि यह सब समय का फेर है। कुछ कहने लगे 'स्वभाव' कारण है। हर वस्तु का अपना अपना स्वभाव होता है—अग्नि का स्वभाव गर्म तथा जल का स्वभाव शीतल है। इसी प्रकार सृष्टि का निर्माण स्वभाव से ही हुआ है। कुछ कहने लगे सृष्टि के निर्माण का कारण 'नियति' है। हम देखते हैं कि हम चाहते कुछ और हैं और होता कुछ और है, तभी हम कहते हैं जो होना है वह होकर ही रहता है। कुछ कहने लगे सृष्टि निर्माण का कारण 'यहच्छा' Chance (मौका) है यदि सब कुछ नियत नहीं है तो जो कुछ हो रहा है, यूं ही हो रहा है, इसमें क्या कोई लक्ष्य नहीं है। कुछ कहने लगे इसमें 'पञ्च-महाभूत' कारण हैं, उन्हीं से इस सृस्टि का निर्माण हुआ है। कुछ कहने लगे इस सृष्टि निर्माण का कारण स्त्री और पुरुष ये दोनों हैं।

इस सृष्टि निर्माण का कारण काल, स्वभाव, नियति, यहच्छा, भूत नहीं हो सकते हैं क्योंकि ये सब जड़ हैं। जड़ किसी भी वस्तु का निर्माण स्वयं नहीं कर सकता है। स्त्री और पुरुष भी इस सृष्टि निर्माण के कारण नहीं हो सकते हैं क्योंकि उन को तो सुख दुःख होता है। वे अपने सुख दुःख के स्वामी नहीं हो सकते हैं। यदि उनके वश में सब कुछ हो तो वे अपने को कभी भी दुःख न होने दें तथा अपने को सुख ही देते रहें।

उन ब्रह्मवादियों ने पुनः सृष्टि निर्माण पर विचार किया तो उनको अनुभव हुआ कि परमात्मा की दिव्य शक्ति ही सृष्टि निर्माण कर रही है। वह निगूढ (गुप्त) शक्ति जो सर्वत्र विश्व में व्याप्त है वह दिखलाई नहीं दे सकती है। वही बस्तु दिखाई

दे सकती है जिसकी सीमा हो, निस्सीम वस्तु दिखाई नहीं दे सकती है। परमात्मा शक्ति तो निस्सीम है। वही परमात्मा की शक्ति काल, नियति, यहच्छा आदि को अपने अधिकार में रखे हुए हैं। वही शक्ति सब को व्यवस्थित रखती है।

यह सृष्टि ब्रह्म द्वारा चालित एक पहिये के समान है। परिधि पर यह सृष्टि-चक्र घूमता है। सतोगुण, रजोगुण, तमोगुण के घेरे से यह सृष्टि घिरी हुई है। इस पहिये के आगे पीछे, दायें और बायें ये मार्ग हैं। शुभ कर्म करने से शुभ फल मिलता है और पाप कर्म करने से पाप फल मिलते हैं। यह सृष्टि मोह के कारण संचलित है। मोह सुमार्ग की ओर भी ले जाता है और कुमार्ग की ओर भी ले जाता है। इसकी व्यवस्था भी भगवान् ही करता है। काल से लेकर आत्मा तक कोई भी इस सृष्टि की व्यवस्था करने में समर्थ नहीं है। काल, नियति आदि जड़ हैं वे व्यस्था नहीं कर सकते हैं। आत्मा स्वयं दुःख सुख का भोग करता है अतः वह भी इस व्यवस्था को करने वाला नहीं है। अतः परमात्मा ही इस सारी व्यवस्था को करता है।

ब्रह्माण्ड ब्रह्मचक्र पर घूम रहा है प्रभु की व्यवस्था से यह पिण्ड (शरीर) भी प्रचण्ड नदी के समान है। जैसे नदी का जल मानों पांच स्रोतों से फूटता है, वैसे शरीर रूपी नदी की पांचों ज्ञानेन्द्रियां इस पिण्ड रूपी नदी के पांच स्रोत हैं जिनसे ज्ञान रूपी जल फूट कर निकलता है। जैसे नदी के निकास का कारण पहाड़ होता है वैसे शरीर रूपी नदी के उत्पत्तिस्थल पांचों महाभूत पहाड़ के तुल्य हैं। जैसे नदी का वेग कहीं तेज और कहीं वक्र होता है वैसे मानव जीवन की प्रवृत्तियां कहीं तेज और कहीं वक्र होती हैं। जैसे नदी में तरंगें उठती हैं वैसे शरीर रूपी नदी में पांच प्राण उसकी तरंगें हैं। जैसे नदी का निर्गमन (निकलने का स्थान) स्थान होता है उसी प्रकार शरीर रूपी नदी का आदि मूल शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध ये पांच प्रकार की बुद्धियां हैं। जैसे नदी में भंवर होते हैं उसी प्रकार इस शरीर रूपी नदी में शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध इन विषयों में डुबा देने वाले ये ही भवर हैं। जैसे नदी में कभी ज्वार आता है, बाढ़ आ जाती है वैसे जीवन रूपी नदी में गर्भ, जन्म, जरा, व्याधि, मरण ये पांच प्रकार की बाड़ आती हैं।

इसी जीवन रूपी नदी को पार करने के उपाय हैं, उनमें जो संसार को धारण करने वाले प्रभु की शरण में चला जाता है वह इस नदी से पार हो जाता है। जो व्यक्ति अपने को तथा अपने प्रेरक को पृथक् पृथक् जान लेता है, वह उस प्रभु से प्रेम करने के कारण अमृतत्व को प्राप्त कर लेता है।

ईश्वर, जीव, प्रकृति का वर्णन करते हुए उपनिषद्कार कहते हैं—उस परमात्मा

में ईश्वर, जीव, प्रकृति ये तीनों अक्षर सुप्रतिष्ठत हैं। ब्रह्मवेत्ता इनके परस्पर भेद को जानकर ब्रह्म में रमण करते हैं। वे जन्म मरण के चक्र से मुक्त हो जाते हैं।

ईश्वर, जीव, प्रकृति ये सृष्टि में तीन तत्त्व हैं। इनमें प्रकृति क्षर भी है और अक्षर भी है। अर्थात् प्रकृति व्यवत भी है और अव्यक्त भी है। इसका क्षर रूप व्यक्त है और अक्षर रूप अव्यक्त है। ईश्वर ही प्रकृति को (इस) अव्यक्त से व्यक्त रूप में लाता है। प्रकृति को (भरण पोषण ईश्वर करता है)। ईश्वर सर्वशक्तिमान है और आत्मा अल्प शक्ति वाला है। यह आत्मा शरीर के पिंजरे में फंसा हुआ संसार के बन्धन में बन्ध जाता है। यही इस आत्मा का वध है। जब यह संसार को त्याग कर ब्रह्म को जान लेता है तब संसार के सारे बन्धनों से मुक्त हो जाता है।

परमात्मा सर्व 'ज्ञ' (ज्ञानवान्) है और आत्मा अल्पज्ञ 'अज्ञ' (ज्ञान रहित) है। तीसरी 'अजा' प्रकृति है। जो 'अज्ञ' (ज्ञानरहित) अजन्मा है। यह प्रकृति जीवात्मा की भोग्या है। परमात्मा इस प्रकृति का भोग नहीं करता है। जब ज्ञानी जीव, ईश्वर और प्रकृति को अपने अपने रूप में जान लेता है तब वह ब्रह्म के वास्तविक दर्शन कर पाता है। इस प्रकार ब्रह्मज्ञानियों ने सृष्टिचक्र के ईश्वर, जीव, प्रकृति कारण माने है। ईश्वर निमित्त कारण, जीव साधारण कारण तथा प्रकृति उपादान कारण है।

प्रकृति और जीव पर स्वामित्व परमात्मा का ही है। उसी के ध्यान से, उसी से सम्बन्ध जोड़ने से, उसी में अपने को लीन कर देने से यह जीवात्मा संसार की माया से मुक्त हो जाता है।

उस परमात्मा को जानकर संसार के अविद्या, क्लेश आदि सब बन्धन छूट जाते हैं। अविद्या क्लेश आदि के छूटने से जन्म मरण से छुटकारा हो जाता है। उस को जान लेना ही प्रर्याप्त नहीं है, जानकारी प्रर्याप्त कर उसके ध्यान करते रहने से उसकी अनुभूति प्राप्त होती रहती है। परमात्मा में ध्यान जम जाने से मनुष्य अपने को देह से भिन्न अनुभव करने लगता है। देह से भिन्न अपने को समझ लेने पर सब ऐश्वर्य प्राप्त हो जाते हैं। वह मनुष्य अनुभव करने लगता है कि वह ऐश्वर्यादि गुणों की खान है। उले संसार असार दीखने लगता है। अब तक वह प्रकृति के साथ बन्धा हुआ था। अब प्रकृति के बन्धन से छूट कर अपने केवल स्वरूप को प्राप्त कर लेता है। वह विषयों में न भटक कर आप्तकाम हो जाता है।

वह देव (परमात्मा) कहीं दूर नहीं है। वह अपने अन्दर ही विद्यमान है। उसे जान लेने पर सब कुछ जान लिया जाता है। जीवात्मा भोक्ता है, प्रकृति भोग्य है और परमेश्वर प्रेरक है।

जिस प्रकार अग्नि अपने व्यक्त रूप को छोड़ कर अपने कारण अव्यक्त रूप में चली जाती है, उस समय उसका व्यक्त रूप दिखाई नहीं देता है, पर उसका कोई न कोई चिह्न शेष रह जाता है जिससे हमको जानकारी हो जाती है कि यहां अग्नि थी। उस अग्नि को जिसका कारण इन्धन है, उसको हम फिर प्राप्त कर सकते हैं इसी प्रकार आत्मा और परमात्मा जो अमूर्त्त हैं वे दोनों ओङ्कार से ग्रहण किये जा सकते हैं।

अपने शरीर को नीचे की अरणी और प्रणव (ओङ्कार) को ऊपर की अरणी बना कर ध्यान की रगड़ के अभ्यास से अपने अन्त:करण के अन्दर गुप्त रूप से विद्यमान परमात्मा का दर्शन करो। जैसे अरणियों में अग्नि गुप्त रूप से रहती है वैसे ही परमात्मा भी विश्व में गुप्त रूप से रहता है।

जिस प्रकार तिलों में तेल, दही में घृत, जलस्रोतों में जल, अरणियों में अग्नि है इसी प्रकार परमात्मा को आत्मा में ग्रहण किया जाता है पर उसके दर्शन सत्य और तप की रगड़ से होते हैं।

प्राणायाम और योग का वर्णन करते हुए उपनिषद्कार कहते हैं—

प्राणायाम के समय सिर, गर्दन और छाती को उन्नत करके शरीर के शेष भाग को सम अवस्था में रखकर, इन्द्रियों को मन के अधीन करके और मनको हृदय में निविष्ट करके बैठ जावे फिर ब्रह्म रूपी नाव पर सवार होकर संसार रूपी नदी को पार करे। इस प्रकार ज्ञानी संसार रूपी नदी के जितने परम रूपी स्रोत हैं उनको वह पार कर जाता है।

प्राणायाम का आगे वर्णन करते हुए उपनिषद्कार कहते हैं—पूर्वकथित विधि से स्थित होकर श्वासों को बलपूर्वक भीतर रोक कर, अपनी सब चेष्टाओं को रोक कर, जब श्वास लेने की आवश्यकता प्रतीत हो तब नाक द्वारा दीर्घ श्वास से प्राणवायु को बाहर छोड़ दे जैसे दुष्ट घोड़े वाले रथ को वश में किया जाता है, उसी प्रकार ज्ञानी पुरुष इस प्राण को वश में करके मन को निरालस्य होकर वश में करे।

यह प्राणायाम विधि ऐसे स्थान पर करे जो स्थान सम हो, पवित्र हो, अग्नि, कंकड़, रेत आदि से रहित हो। जो जल के कल कल शब्द तथा जलाशय आदि के कारण मन के अनुकूल हो, जहां आंखों को कष्ट न हो, जहां वायु के झौंके न चलें।

जब योगी प्राणायाम द्वारा ब्रह्म का ध्यान करता है तब उसे प्रारम्भ में भिन्न-भिन्न रूप दिखाई देते हैं। कुहरा सा, धुआं सा, सूर्य, वायु, अग्नि, जुगनू, बिजली, स्फटिक,

चन्द्र इनकी ज्योतियां दिखाई देती हैं। ब्रह्म दर्शन से पहले ये रूप योग में ब्रह्म को प्रकट करने के लिए होते हैं।

योगि जब पृथिवी, जल, अग्नि, वायु, आकाश इन पञ्च महाभूतों को वश में कर लेता है, तब उसे न कोई रोग होता है, न बुढ़ापा और न मृत्यु होती है। उस समय उसका शरीर योगाग्नि को प्राप्त होने के कारण तेजोमय हो जाता है।

योग के कारण योगी का शरीर लघु, नीरोग हो जाता है और उसे लोलुप्ता नहीं रहती है। उसके स्वर में मधुरता आ जाती है, उसका मूत्र और पुरीष अल्प हो जाता है। योग में प्रवृत्ति का यह प्रथम फल है।

जैसे मिट्टी में धंसा स्वर्ण पिण्ड धोने से चमक उठता है, इसी प्रकार जो देह की मलिनता को धो कर आत्मतत्त्व को ठीक ठीक अपने शुद्ध रूप में देख लेता है वह मनुष्य सफल हो जाता है। वह वीत शोक हो जाता है।

जैसे दीप के प्रकाश से दूसरे पदार्थ देखे जाते हैं वैसे ही आत्मतत्त्व के प्रकाश से ब्रह्मतत्त्व को देख लेता है। तब उस शुद्ध रूप प्रभु के दर्शन से योगी शोक मुक्त हो जाता है।

वह परमात्मा सर्वत्र व्याप्त है। वह सृष्टि से पूर्व भी विद्यमान था। वह सृष्टि के बीच और अन्त में भी है। सब ओर ही उस प्रभु के दर्शन होते हैं। जो परमात्मा अग्नि में, जलों में, सम्पूर्ण भुवन में, सब औषधियों में, वनस्पतियों में है, उस प्रभु को नमस्कार करना चाहिए।

ईश्वर के सृष्टि में प्रत्यक्ष दर्शन का वर्णन करते हुए उपनिषद्कार कहते हैं— जो ईश्वर प्रत्येक व्यक्ति के सामने है, ऐसे प्रभु को न मानना बड़े आश्चर्य की बात है। यह सारा संसार ही मानो ब्रह्म का प्रत्यक्ष रूप है। उस प्रभु का मुख मानो सब ओर है, वह सब की प्रत्येक चेष्टा को मानो देखता रहता है। उसके नेत्र, उसका मुख, उसकी भुजाएं, उसके पांव सर्व व्यापक होने से सर्वत्र विद्यमान हैं। जैसे कोई लोहार किसी वस्तु की रचना करता हुआ हाथों से धोंकनी को धोंकता है वैसे ही अकेला परमात्मा सृष्टि को उत्पन्न करता हुआ मानो द्युलोक और पृथिवीलोक को धौंक रहा है। उसी के कारण मानो द्युलोक और पृथिवीलोक सुलग रहे हैं।

जो देवों (धर्मात्माओं) का उत्पन्न करने वाला है, जो विश्व का स्वामी है, जिसका रूप विचित्र है, जो महर्षि है, जिसने सृष्टि की रचना करते हुए हिरण्यगर्भ की सृष्टि की वह प्रभु संसार को सद्बुद्धि देता है।

वह परमात्मा आदित्य की तरह प्रकाशित है, अन्धकार से दूर है, जो उसको जान लेता है वह मृत्यु से पार हो जाता है। उस प्रभु की भक्ति के सिवा कोई मृत्यु से छुटकारे का साधन नहीं है।

जिससे न कुछ परे है न वरे है, जिससे कोई सूक्ष्म और बड़ा कोई नहीं है, जो अकेला वृक्ष की जड़ों की तरह पृथिवी में दृढता से खड़ा है, उसके शिखर की तरह द्युलोक में ऊपर उठा हुआ है। उस प्रभु से अणु अणु भरा हुआ है।

वही इस सृष्टि में दीख रहा है, उसका रूप इस दृश्यमान रूप से पृथक् है। वह रूप रहित है, जरा मरण से रहित है, जो उसके रूप को जान लेता है वह अजर, अमर हो जाता है।

जितने सृष्टि में मुख हैं, सिर हैं, गर्दनें हैं सब उसी परमात्मा के हैं। सब प्राणियों की हृदय रूपी गुफा में उसका निवास है। सब जगह वह व्याप्त है। वह सब का कल्याण करने वाला है। परमात्मा सर्वत्र व्याप्त है। सब जनों के हृदय में स्थित है। उसे हृदय से, बुद्धि से, मन से जाना जाता है। जो प्रभु को इस प्रकार जानते हैं वे अमर हो जाते हैं।

सृष्टि का दर्शन ही प्रभु का दर्शन है। वह प्रभु सहस्रों शिरों वाला है, वह सहस्र आंखों वाला, सहस्र पांवों वाला है। वह अपने हाथ से ब्रह्माण्ड को सर्वत्र स्पश किये हुए है।

उसमें सब इन्द्रियों के गुण भाषित हो रहे हैं, फिर भी वह सब इन्द्रियों से रहित है। सब संसार का वह स्वामी है। वह सब को शरण देने वाला है।

उसके अपने न हाथ हैं, न पांव हैं, इनके न होने पर भी वह गतिशील है। बिना हाथों के भी वह सबको पकड़े हुत है। नेत्र रहित होता हुआ भी वह सबको देख रहा है। बिना कानों के भी सब की बातों को सुनता है। वह समग्र ज्ञातव्य को जानता है, परन्तु उसको जानने वाला कोई नहीं है। वह प्रभु ही पुरुष तथा महापुरुष है।

वह अणु से भी अणु है, बह महान् से भी महान् है। वह मनुष्य की हृदय रूपी गुफा में स्थित है, वह कर्त्ता नहीं है, जो उस प्रभु को देख लेता है, वह शोक सागर से पार उतर जाता है।

प्रकृति, जीव, परमेश्वर वा अज तथा सुपर्ण रूप से वर्णन करते हुए उपनिषद्-कहते हैं—

वह प्रभु महान् शक्ति वाला है। उसने अपनी शक्ति से अनेक रूप और रग वाले पदार्थ बनाये हैं। वह स्वयं एक है पर अनेक वस्तुओं का निर्माता है। स्वयं अवर्ण है पर अनेक सवर्ण वस्तुओं को उत्पन्न करता है। स्वयं प्रयोजन रहित है पर प्रत्येक वस्तु को प्रयोजन वाली बनाने वाला है। वही अन्त में इस संसार का संहार करने वाला है परन्तु संसार का निर्माण भी वही करता है। ऐसा परमात्मा ही बुद्धि को पवित्र करता है।

वही देव अग्नि है, आदित्य है, वायु है, चन्द्रमा है, वही शुक्र है, वही ब्रह्म है, वही जल है, वही प्रजापति है। बच्चे से लेकर बूढ़े तक, स्त्री से लेके पुरुष तक उस प्रभु की ही सत्ता सब में विद्यमान है।

जीव तथा परमात्मा अज हैं, कभी भी उत्पन्न न होने वाले हैं। प्रकृति भी अजा है, यह भी कारण रूप से सदा विद्यमान रहती है, सतोगुण, रजोगुण, तमोगुण की समावस्था का नाम प्रकृति है। सतोगुण का प्रत्यक्ष रूप शुक्ल है। रजोगुण का प्रत्यक्ष रूप लोहित (लाल) है। तमोगुण का प्रत्यक्ष रूप कृष्ण है। इन तीनों गुणों के कारण ही प्रकृति को लोहित-शुक्ल-कृष्ण कहा है। यह अजा (प्रकृति) अपने जैसे अनेक प्रकार के पदार्थों की रचना करती है। उस अजा को दूसरा अज (जीवात्मा) भोग रहा है। तीसरा अज (परमात्मा) इस प्रकृति को छोड़ कर पृथक् रहता है, वह प्रकृति का भोग नहीं करता है।

दो सुन्दर सुपर्ण (पक्षी) हैं, वे दोनों परस्पर मित्रभाव से ही रहते हैं। दोनों एक ही प्रकृति रूपी वृक्ष पर बैठे हैं। दोनों में जीवात्मा तो उस वृक्ष के फल को खा रहा है और दूसरा (सुपर्ण) परमात्मा रूपी पक्षी उस फल-खाने वाले सुपर्ण (जीवरूपी पक्षी) को देख रहा है।

इसी विषय को फिर दूसरे प्रकार से उपनिषद्कार लिखते हैं—एक ही प्रकृति रूपी वृक्ष पर यह जीव फल भोगने में निमग्न हुआ बैठा है। उसे भोगता भोगता शक्तिहीन हो गया है अत: प्रकृति के मोह में पड़ा हुआ शोकसागर में डूब जाता है। जब वह देखता है कि दूसरे पुरुष (परमात्मा) की प्रकृति से अलग रहने के कारण उसकी सेवा हो रही है तब वह समझता है कि प्रकृति के भोगों में फंसना हानिकारक है। फिर वह भी उसी मार्ग को अच्छा मानकर प्रकृति के भोग को छोड़ कर शोक रहित हो जाता है। इसका यह भी भाव है कि जब प्रकृति के भोगों में फंसा व्यक्ति अपने दु:ख को देखता है और जो पुरुष प्रकृति में अनास्तक है उसके सुख को देखता है।

तब वह भोगों को हानिकर मानकर अध्यात्म मार्ग की शरण में चला जाता है। तब उसका भी कल्याण हो जाता है।

प्रकृति जीव, परमेश्वर का क्षर—अक्षर के रूप में वर्णन करते हुए उपनिषद्-कार कहते हैं—दो अक्षर (नित्य) हैं। ब्रह्म ही इनका लक्ष्य है। ब्रह्म ही इनका आधार है, ये ब्रह्म पर ही टिके हुए हैं। ये दोनों अनन्त हैं। इन दोनों में से एक में विद्या छिपे हुए रूप में विद्यमान है और दूसरे में अविद्या भरी पड़ी है। विद्या जीव का और अविद्या प्रकृति का गुण है। इनमें से जो अविद्या है वह टिकने वाली नहीं है और विद्या अमरता का प्रदान करने वाली है। प्रकृति और जीव से भिन्न एक अन्य और है जो विद्या और अविद्या का नियमन करने वाला है।

वह अकेला ब्रह्म प्रत्येक कारण का स्वामी है। जिस किसी के भी रूप का निर्माण होता है उन सब का अधिष्ठाता वही ब्रह्म है। सब का फल देने वाला वही है। वही इस समग्र विश्व का अधिष्ठाता है। प्रत्येक वस्तु के गुण का विनियोजन वही करता है।

जीव के विषय में विचार करते हुए उपनिषद्कार कहते हैं—

जीवात्मा सत्त्व, रज, तम इन तीन गुणों के पीछे चलने वाला है। जीवन में जो सुख दुःख मिलते हैं वे सब जीव के कर्मानुसार ही मिलते हैं। जो कर्म जीव करता है उसका फल उसे भोगना होता है। अच्छा कर्म करेगा तो सुख मिलता है और बुरा कर्म करने से दुःख मिलता है। जीव अपने कर्मों के फल के अनुसार सब प्रकार के रूपों को धारण करता है। सत्त्व, रज, तम तीनों गुणों के कारण जीवन के मार्ग भी तीन प्रकार के होते हैं। अपने कर्मों के कारण ही वह जीव संसार के चक्र में घूमता है।

वह जीवात्मा सूक्ष्म है, सूर्य के समान प्रकाश युक्त है, उसमें संकल्प और अहङ्कार भी रहते हैं। संकल्प मन या बुद्धि का गुण है। अहङ्कार आत्मा का गुण है। भौतिक तथा मानसिक गुणों से युक्त आत्मा सूई की नोक के बराबर है।

यह आत्मा अत्यन्त सूक्ष्म है। यदि बाल के अग्र भाग के सौ भाग किये जावें और फिर उसके भी सौ भागों की कल्पना की जावे तो उसका दस हजारवां भाग जीव है। एक बाल के अग्र भाग का दस हजारवां भाग कल्पना का ही विषय हो सकता है। यह जीव के परिणाम की कल्पना मात्र है अर्थात् जीव सूक्ष्म से भी सूक्ष्म है।

वह जीव न स्त्री है और न पुरुष है और न नपुंसक है। जिस जिस शरीर को यह ग्रहण करता है उसी उसी शरीर के लिंग के साथ उसका नाम रखा जाता है।

नैवस्मी न पुमान् एष: न चैव नपुंसक: ।
यद् यद् शरीरं आदत्ते तेन तेन स: पुज्यते ।।

जैसे घास जल के कारण बढ़ता है वैसे ही संकल्पन मोह, स्पर्शन मोह, दृष्टिमोह रूपी जल से आत्मा का प्रपंच पढ़ता है। यह आत्मा कर्मों के अच्छे और बुरे अनुक्रम से भिन्न भिन्न स्थानों में भिन्न भिन्न रूपों को प्राप्त करता है।

जीवात्मा स्थूल, सूक्ष्म तथा अनेक रूपों को अपने अच्छे या बुरे या सत्व, रज, तम आदि गुणों के कारण अनेक रूपों को ग्रहण करता है। ये गुण दो प्रकार से जीवात्मा के साथ आते हैं। एक प्रकार तो वह है जो जीवात्मा ने इस जन्म में क्रियाएं या कर्म किये होते हैं। दूसरा प्रकार वह है जो इसके पिछले जन्म के किये हुए कर्म होते हैं, जो इसके अपने गुण बन चुके होते हैं।

जीवात्मा अनादि और अनन्त है। वह विश्व का रचयिता है। उसके पृथिवी, जल, तेज, वायु, आकाश आदि् अनेक रूप हैं। उस ब्रह्म को जानकर ही वह संसार के बन्धनों से मुक्त होता है।

वह ब्रह्म भावना, श्रद्धा, भक्ति से प्राप्त होता है। उस ब्रह्म का कोई स्थान विशेष नहीं है। वह सर्वत्र व्याप्त है। वह कल्याण कारी है। वह इस सुन्दर सृष्टि का रचने हारा है। जो उसको जान लेता है उसे शरीर तथा संसार में आसक्ति नहीं रहती है।

जो विद्वान् इस सृष्टि का कारण स्वभाव या काल बतलाते हैं वे भूल में हैं, सृष्टि का कारण ब्रह्म ही है। वही इस ब्रह्म चक्र को घुमा रहा है। ब्रह्म ने इस सारी सृष्टि को ढका हुआ है। जो सर्वज्ञ है, जो कालस्रष्टा है, जो दया आदि गुण युक्त है, जो सब विद्याओं का ज्ञाता है उसी ने यह संसार बनाया है।

वह ब्रह्म सृष्टि के कार्य का संचालन करके फिर उसमें से निवृत्त हो जाता है। सृष्टि चलती रहती रहे इसके लिए वह तत्त्व का तत्त्व के साथ संयोग कर देता है।

ब्रह्म सृष्टि रूपी कर्म का तत्त्वों के संयोग से आरम्भ करता है। प्रारम्भ में सत्व, रज, तम इन तीन गुणों से युक्त कर्म को अपने मार्ग में प्रवृत्त कर देता है। प्रकृति का विकासोन्मुखी होना ही सृष्टि का आदि कर्म है। प्रकृति में सत्व, रज, तम ये तीन गुण हैं। इन तीनों गुणों वाली प्रकृति के विकास क्रम को आरम्भ करके उसमें

जीवात्मा के काम, क्रोध, मोह ग्रदि भावों को उसमें जड़ देता है। वही सृष्टि को ग्रारम्भ कर देता है। यदि काम, क्रोध, मोह ग्रादि को समाप्त कर दिया जावे तो जो कर्म किया है उसका नाश हो जाता है। कृत कर्म के नष्ट होने पर वह ग्रात्मा या परमात्मा सृष्टि को बनाने वाले ग्राठों तत्त्वों से पृथक् हो जाता है।

वह परमात्मा महान् है, देवों का देव है, स्वामियों का स्वामी है, वह सब से परे है, श्रेष्ठ है। उस परम देव के ज्ञान से कल्याण होता है।

उसको ग्रपने लिए कुछ भी कार्य नहीं है। वह जो कुछ करता है उसके लिए उसे किसी साधना की भी ग्रावश्यकता नहीं है। उसके समान कोई नहीं है। उससे महान् भी कोई नहीं, वह परम शक्ति है। उसमें ग्रनेक प्रकार की शक्तियों का निवास है। उसमें ज्ञान, बल, क्रिया स्वभाव से हैं। उससे बड़ा कोई शासक नहीं, उससे ग्रधिक कोई ऐश्वर्य शाली नहीं है। न उसका ग्रपना कोई चिह्न है, उसका कोई पैदा करने वाला नहीं है।

वह ब्रह्म एक ही है जो स्थावर जंगम सब में व्याप्त है। वह सबके कर्मों को यथावत् जानता है। सत्व, रज, तम इन प्रकृति के गुणों से रहित है।

वही ग्रकेला संसार में निष्क्रिय तत्वों में सक्रिय है। इन तत्वों को उसी ने ग्रपने वश में किया हुग्रा है। वह ग्रकेला बीज रूप प्रकृति से जो ग्रपने ग्राप में निष्क्रिय है ग्रनेक प्रकार के नाम रूप वाले संसार को बनाता है। वह प्रकृति के कण कण में व्याप्त है। जो उसको ग्रपने भीतर देख लेता है, उसे निरन्तर सुख प्राप्त होता है। दूसरों को सुख नहीं मिलता है।

जो नित्यों का नित्य है, चेतनों का चेतन है, जो ग्रकेला होता हुग्रा भी ग्रनेक जीवों की कामनाग्रों को पूर्ण करता है, जो सांख्य ग्रौर योग से जाना जाता है। यह जीवात्मा उस परमात्मा को जान कर सुख पाता है।

वहां न सूर्य चमकता है, न चन्द्र ग्रौर न तारों का वहां प्रकाश है, वहां बिजलियों की चमक भी नहीं है फिर ग्रग्नि का प्रकाश तो कहां होता। वह ब्रह्म स्वतः प्रकाश है। उसी के प्रकाश से सूर्य, चन्द्र, तारे, विद्युत ग्रौर ग्रग्नि को प्रकाश मिलता है। भाव यह है कि जब तक परमात्मा की कृपा नहीं होती है, तब तक सुख नहीं मिलता है।

॥ समाप्तम् ॥

विजय : पराजय

एक दिन—
सान्ध्य भ्रमण करने
मैं और मेरा यार
बाहर निकले।
कुछ देर चलने पर चुप चाप
हमने कहा मीत से, आप—
कोई सामाजिक चर्चा छेड़ो, यार,
व्यवस्था के कपड़े उधेड़ो यार।
यार ने—
यही प्रश्न हमको दोहराया,
और सहसा ही,
एक प्रश्न ने—
मस्तिष्क में चक्कर लगाया,
यार,
लोग अब सुसंस्कृत हो गए,
बढ़ती जन-वृद्धि की—
हानि को परख गए।
तुरन्त यार बोला—
नहीं यार,
अभी कहां ?
यों ही चेतना सो रही है,
औ' सरकार के माथे में—
स्वेद-बून्द चो रही है।
लेकिन हमने—
सरकार के कार्य क्षेत्र दिखाये
निरोध, नसबन्दी के उपाय बताये,
किन्तु दूसरे ही क्षण—
मीत जैसे होश में आए
मेरे तर्क पीछे हटाए।
अपना पक्ष किया अभिराम,
वक्तव्य था वह अविराम
अपने पक्ष को दिखा रहे थे,
युक्ति सबल दर्शा रहे थे।
सहसा दृष्टि ने दौड़ लगाई—
क्रीड़ा-स्थल में पंक्ति पाई।
दोनों हो गए वहीं अविचल,
अन्तर में थी उत्सुक हलचल।
काफी सोच विचार कर,
एक खिलाड़ी से पूछ बैठा—
क्यों जी ?
आप सब एक स्कूल में पढ़ते हो ?
या पड़ौस में रहते हो ?
वह मुस्कुराया—
क्यों ? एक शक्ल देख घबड़ा गए ?
ग्यारह भाइयों से ही हड़बड़ा गए ?
"बाप रे बाप, आगे कहो"
उत्तर मिला—
"जी, चुप रहो।
खाली समय गंवाते हो,
औ' हमको नजर लगाते हो !"
कुछ मौन रह कर,
हमने पूछा—
"जी……; पिता आपके—
श्रम कहो क्या करते हैं ?"
तपाक उत्तर मिला—
"काम यही तो करते हैं।"
मैंने तत्क्षण मीत निहारा,
मीत ने मृदु-मुस्कान से—
विजय में शीश उभारा।
विचारों ने थाह ली,
औ' पराजित हमने—
चुपक, घर की राह ली॥

—वीरेन्द्र विद्यालंकार

अशोक का सिंहासनारोहण

—अजित दलाल

कहते हैं महाराज बिन्दुसार के एक सौ एक लड़के थे। सुमन सबसे बड़े लड़के का नाम था। वह ही युवराज के पद पर भी थे। पिता की मृत्यु के बाद सिंहासन पर भी अधिकार उसी का था परन्तु उसके भाग्य में ऐसा बदा नहीं था।

बिन्दुसार की अनेक रानियां थीं। इसलिए एक सो एक पुत्रों का होना कोई असम्भव बात नहीं थी। अशोक भी उनमें से एक था। अशोक और उनकी माता के बारे में अनेक ग्रन्थों में ऐसा लिखा है—

पाटलीपुत्र के उत्तर-पूर्व में चम्पा नाम की एक नगरी थी। वहां एक निर्धन ब्राह्मण रहता था। उसके एक पुत्री थी। वह इतनी सुन्दर थी कि लेखनी और जबान उसका वर्णन नहीं कर सकती। दूर दूर से लोग इस लड़की को देखने आते थे। पिता ने ज्योतिषियों को बुलाया और उसके भविष्य के बारे में पूछा। उन्होंने बतया कि लड़की महारानी बनेगी और दो पुत्रों को जन्म देगी। एक सम्राट बनेगा और दूसरा महान् सन्त।

लड़की स्यानी हो गइ और आयु के साथ साथ उसका रूप भी निरखता गया। चलती फिरती लड़की को देख कर क्या वृद्ध और क्या जवान मुग्ध होकर खड़े हो जाते थे। ब्राह्मण ने विचार किया कि क्यों न इस अपनी पुत्री को सम्राट के महलों में उपहार के तौर पर भेज दिया जाए। उसने ऐसा ही किया।

जब लड़की रनवासों में पहुँची तो उसे देख कर सभी रानियां और दासियां चकित रह गईं। रानियों ने विचार किया कि यदि सम्राट को यह पता लग गया कि यह एक ब्राह्मण कन्या है तो वह अवश्य ही इससे विवाह कर लेगा और उनकी कोई पूछ नहीं रहेगी। इस लिए उन्होंने लड़की को नाई अर्थात् बाल बनाने और संवारने

का काम सिखा दिया। वह कुछ दिन में सम्राट के बाल बमाने लगी। सम्राट उसके काम से बहुत सन्तुष्ट थे। एक दिन उसने लड़की से कहा—"मैं तुम से बहुत प्रसन्न हूँ कोई भी वस्तु मांगो।" लड़की ने उत्तर दिया—"महाराज ! मेरी इच्छा है कि ग्राप मेरे से शादी करें।"

यह सुन कर राजत बोला—"लड़की ! यह कैसे सम्भव है। मैं क्षत्रि हूँ ग्रौर तुम नाई।" लड़की ने उत्तर दिया—"सम्राट, मैं नाईन नहीं वलिक एक ब्राह्मण कन्या हूँ। मेरे पिता ने मुझे उपहार के रूप में इसी लिए भेजा था कि मैं ग्रापकी रानी बनूं।" यह सुन कर राजा हैरान हो गया। उन्होंने पूछा कि यह काम उसे किसने सिखाया। लड़की ने सब बातें सम्राट को बता दीं। सम्राट को सारा मामला समझने में देर नहीं लगी। उन्होंने ग्रगले ही दिन विवाह कर लिया।

सम्राट उनके साथ क्रीड़ा ग्रौर रमण करने लगे। कुछ दिनों बाद उसे गर्भ रह गया ग्रौर समय ग्राने पर पुत्र को जन्म दिया। एक दिन पुत्र को देखने के लिए वे महल में गए ग्रौर रानी से पूछा कि राजकुमार का क्या नाम रखा जाए। रानी बोली—"महाराज, मैं पुत्र के जन्म से ग्रशोक हो गई हूँ ग्रर्थात् ग्रब मुझे कोई शोक नहीं रहा। इसलिए मेरी प्रार्थना है कि इनका नाम ग्रशोक रखा जाए। ऐसा ही किया गया। कुछ दिनों बाद रानी ने दूसरे पुत्र को जन्म दिया ग्रौर उनका नाम 'निगतशोक' रखा गया।

महाराज पुत्रों से बहुत प्यार किया करते थे परन्तु ग्रशोक से इतना नहीं। इस का कारण यह था कि ग्रशोक दूसरे राजकुमारों की भांति सुन्दर नहीं था। उसकी त्वचा भी मुलायम नहीं थी। शरीर पर बाल थे। इसलिए सम्राट उससे कटे कटे से रहते थे। समय बीतता गया ग्रौर राजकुमार बड़े होते चले गये। ग्रब राजा को यह चिन्ता थी कि इनमें सबसे योग्य कौन है ग्रौर उनके पश्चात् राज के भार को कौन संभाल सकता है।

एक दिन दरबार में एक विद्वान साधु का ग्रागमन हुग्रा। उनका नाम था परिब्राजक पिङ्गलवत्साजीव। सम्राट ने उनसे कहा मैं वृद्ध हो गया हूँ मुझे चिन्ता है कि मेरे बाद इस महान साम्राज्य के बोझ को कौनसा राजकुमार सम्भाल सकता है। इसलिए मैं चाहता हूँ कि राजकुमारों की परीक्षा ली जाए। ग्राप पधारे हुए हैं इसलिए कल ही क्यों न इनकी योग्यता की जांच करली जाए। साधु सहमत हो गए।

ग्रगले दिन नगर से कुछ दूरी पर इसका प्रबन्ध किया गया ग्रौर राजकुमारों को वहां पहुँचने के लिए सूचित कर दिया गया परन्तु ग्रशोक को सूचना नहीं दी गई।

सभी राजकुमार नियुक्त स्थान पर पहुँच गये। अशोश की माता को इस योजना का पता लग गया और उसने अशोक को भी वहां पहुँचने के लिए कहा। अशोक तैयार हो गया और एक हाथी पर सवार होकर रवाना हुआ। जाते समय अपनी माता से कहा कि उसके लिए वहां खाने के लिए भात चावल दही समेत वहां भेजने का प्रबन्ध करे समभव है वहां देर हो जाए।

राजकुमारों से अनेक सवाल पूछे गए। अशोक सब से योग्य प्रमाणित हुआ परन्तु साधु परिव्राजक को अशोक को सबसे योग्य बताने में डर लगता था क्योंकि महाराज का सुमन पर विशेष प्रेम था। जब सम्राट ने उनसे उनकी राय मांगी तो साधु ने केवल इतना ही कहा कि सम्राट वही बनेगा जिसका खान, पान और स्थान सब से आगे होगा। यह सुन कर सभी राजकुमारों ने यही समझा मैं सम्राट बनूंगा क्योंकि मेरा ही खान, पान और स्थान सबले श्रेष्ठ है।

जब सभी राजकुमार घर वापिस लौट रहे थे तो मार्ग में एक घटना घटी। सुमन और कुछ दूसरे राजकुमार रास्ते में खेलने लग गये। इतफाक से महाराज के प्रधान मन्त्री खल्लाटक का वहां से गुजर हुआ। सुमन ने पीछे से एक छोटी सी मिट्टी की डली उठा कर मन्त्री की ओर फैंक दी जो उसके सिर में लगी। खल्लाटक को यह बात अच्छी नहीं लगी। उन्हें क्रोध आ गया और मन में कहा कि राजकुमार आज तो मुझे ढेला मार रहा है और कल जब सम्राट बनेगा तो सम्भव है कि वह मेरा सिर काट ले। अतः उसी समय उसने निश्चय कर किया कि सुमन को सम्राट नहीं वनने दिया जायेगा यदि उनकी चली। बस उसी दिन से सुमन के विरुद्ध षड़यन्त्र रचने आरम्भ कर दिए।

सम्राट का स्वास्थ्य दिन पर दिन अधिक आयु होने के कारण गिरता जा रहा था। वह बिमार पड़ गए खल्लाक समझ गए कि सम्राट इस बार बच नहीं सकते। सुमन को राजधानी से दूर रखना आवश्यक था इसलिए प्रधान मन्क्षी ने तक्षिला में विद्रोह करवा दिया। सम्राट ने अशोक को आज्ञा दी कि वह तक्षिला पहुँच कर विद्रोह का दमन करे परन्तु खल्लाटक ने अशोक को समझा दिया कि वह वहां न जाए और बीमार होने का बहाना कर ले। ऐसे ही हुआ। खल्लाटक ने सम्राट को सलाह दी कि वहां सुमन को भेजा जाए। ऐसा ही किया गया।

सुमन शीघ्रता से विद्रोह को न दबा सका। सम्राट की दशा दिन पर दिन बिगड़ती गई और मृत्यु निश्चित हो गई। मरने से पहले शासन की वाग-डोर किसी न किसी को सौंपना आवश्यक था। सम्राट ने सुमन को बुलाने के लिए कहा। परन्तु

खल्लाटक ने उत्तर दिया कि समय थोड़ा है और तक्षिला दूर। सुमन को बुलवा भेजना सम्भव नहीं है। उसने सम्राट को समझाया कि अशोक को सुमन के आने तक सम्राट पद पर नियुक्त कर दिया जाए। उनके आने पर सुमन को सम्राट बना दिया जाएगा। सम्राट के लिए इसके सिवा कोई चारा ही नहीं था। अतः सम्राट ने अशोक को बुलाकर उसकी कमर में अपनी तलवार बान्ध दी और बिन्दुसार ने प्राण त्याग दिए।

सुमन को जब यह सब पता लगा तो आगबबूला हो गया और सेना सहित पाटलीपुत्र के लिए चल पड़ा। अशोक और खल्लाटक ने लड़ाई की तैयारी कर ली। किले से कुछ दूरी पर दुर्ग के चारों ओर एक खाई खोदी। उसमें लक्कड़ भर दिए। उसमें आग लगा कर ऊपर से ढक दिया गया। सुमन अपने दल-बल के साथ आया और किले पर अक्रमण किया। सेना बढ़ती गई और जब खाई पर से गुजरने लगे तो सब उसमें गिर पड़े और आन की आन में आग की नजर हो गये। अब निष्कंटक होकर अशोक गद्दी पर बैठे, यद्यपि लड़ाई चार साल तक चलती रही क्योंकि सुमन के और भी कई भाई थे परन्तु वे सब अयोग्य थे।

एक परिभाषा—

संग्रहकर्त्ता—वीरेन्द्र विद्यालंकार
गुरुकुल भैंसवाल कलां

* संसार में इतनी कोई वस्तु मनोहर नहीं है, जितनी सुशीला और सुन्दर नारी।

—हंट

* स्त्री एक कोमल लता है। उसे मधुर-प्रेम के जल से सींचो, क्रोध की उष्णता से नहीं, नहीं तो वह सूख जाएगी।

—वीरेन्द्र विद्यालंकार

* सर्प अत्यन्त निकट आने पर ही दंशित करता है, परन्तु नारी तुम्हें पर्याप्त दूरी से भी दंशित कर सकती है। सर्प का विष इस शरीर-मात्र को नष्ट करता है, पर वासना पारलौकिक जीवन में प्रवेश कर कई जन्मों को नाश कर देती है। वासना से घृणा करो, किन्तु नारी से नहीं।

—स्वामी शिवानन्द सरस्वती

आर्यसमाज, गौमाता व भक्त फूल सिंह जी

—राम स्वरूप

पुरानी सस्कृति वैदिक धर्म के अनुयायी महर्षि दयानन्द जी ने देश और धर्म सुधार के लिए जीवन खपा दिया। गौ के लिए तो उन्होंने बहुत जोर लगाया, गौ करुणानिधि की पुस्तक लिखी और रत्नात्मक काम के लिए गौशाला बनवाई। आर्य समाज ने गुरुकुलों के साथ गौशाला भी जरूरी समझी। गौरक्षा के लिए आर्य समाज, साधु समाज और दूसरी धार्मिक संस्थाएं और गौ प्रेमी आज तक सत्याग्रह और बड़े से बड़े कष्ट झेलते आ रहे हैं।

भक्त फूल सिंह जी महाराज ने तो अपनी जान की बाजी लगाए रखी। जब अंग्रेजी राज्य था मुसलमानों ने गांव समालखा जिला करनाल में बूचड़खाना बनाना शुरु कर दिय भक्त फूलसिंह जी को पता लगा तो गांव गांव में मुनादी कराई कि हर नौजवान अपने अपने हथियार लेकर आयें और एक दम चढ़ाई कर दी। जब सरकार को पता लगा तो डिप्टी कमिशनर व एस० पी० पूरी फोर्स लेकर आ गए। डी० सी० ने इतने लोगों को हथियार लेकर मरने मारने को तैयार देखा तो डी० सी० घबरा गया और भक्त फूलसिंह जी से हाथ जोड़ कर कहा हमने बूचड़खाना बन्द करा दिया है आप इन लोगों को वापिस भेज दो। इस घटना से समालखा और आस पास के गांवों में भक्त जी की श्रद्धा बढ़ गई और धाक बैठ गई। सरकार को चिड़ हुई, भक्त जी पर केस चलाया लेकिन भक्त जी दबने और डरने वाले नहीं थे क्योंकि जनता उनका हर प्रकार से साथ देती थी।

जीन्द के पास ललित खेड़ा गांव में भक्त जी गुरुकुल का चन्दा कर रहे थे तो घरों में पशु बन्धे देखे तो पूछने पर पता चला कि गौचरान नहीं है। भक्त जी के दिल पर ठेस लगी और कहा कि गौचरान तो होना ही चाहिए। लोगों ने कहा कि यह काम तो बड़ा मुश्किल है। एक फुट जमीन के लिए जमींदार मरने मारने पर तैयार हो जाता है, तो 4, 5 बीघे जमीन देना तो बहुत मुश्किल है। भक्तजी ने किसी की नहीं सुनी और गौचरान का प्रण कर लिया। भक्त जी चौपाड़ में बैठ गये। उनके पास कोई आदमी नहीं आता था, क्योंकि पास जाने पर जमीन देनी पड़ेगी यह डर सब को था। उपवास किये हुए 5 दिन हुए, 8 दिन हो गए तो लोग डरने लगे आखिर जब बिना खाए 15 दिन हो गए और उनका बोल मुश्किल से निकलने लगा तो लोग डर गए और लोगों ने 500 बीघे जमीन छोड़ने का वायदा कर लिया। तो भक्त जी ने सोलहवें दिन व्रत खोला। आज

भी इस गांव में भक्त फूलसिंह जी के नाम का एक जोहड़ और 500 बीघे जमीन गौ चरान है। ये भक्त जी की गौ सेवा और तप का फल है। जब भी गौ माता का सवाल आया है, भक्त जी के प्रेमी और संस्थाएं पीछे नहीं रही हैं।

1–1–80 में सन्त विनोबा भावे ने भारत में गौ वंश न कटे इस पर पाबन्दी लगवाने के लिए सरकार और जनता से अपील की तो हरियाणा में श्री निर्जन सिंह जी की अध्यक्षता में गौ रक्षा समिति बनाई। पता लगा कि तमाम भारत में सब से ज्यादा और बढ़िया गाय रोहतक डेरी से जाती हैं। तो रोहतक में गौ रोको कैम्प चलाया। रेलवे स्टेशन पर मालगाड़ी में तीन वेगन में गाय और बैल थे जो देहली से कलकत्ते जाने वाले थे। सत्याग्रही पटरी पर इञ्जन के आगे लेट गये। ड्राईवर ने भांप छोड़ा, फिर धूआं छोड़ा लेकिन सत्याग्रही वहां से डिगे नहीं, इतने में पुलिस और जनता आ गई। आखिर सरकार ने तीन वेगन गाय और बैल की वहीं पर छोड़नी पड़ी तब मालगाड़ी देहली की तरफ जाने दी। गुरुकुल खानपुर की तरफ से इस कार्यवाई में श्री रामस्वरूप भी शामिल थे और चौधरी माडूसिंह भी कई बार सत्यग्रहियों से मिलते रहे। 12 फरवरी सन् 1980 को शहर में जलूस निकाला गया। जलूस में गुरुकुल सिंहपुरा के ब्रह्मचारी शामिल थे और कन्या गुरुकुल खानपुर से काफी छात्राएं जलूस में शामिल हुईं। कुमारी शकुन्तला जी प्रिंसिपल डिग्री कालेज व ज्ञानवती जी एम० ए० प्रोफेसर डिग्री कालेज के प्रभावशाली व्याख्यान हुए। 150 रुपया चन्दा दिया गया। सन् 82 के आरम्भ में सोमसत्यग्रह में सैंकड़ों छात्राओं ने 24, 24 घंटे का उपवास रखा। दान की सहायता जारी है। अप्रेल में गुरुकुल की तरफ से श्री रामस्रूप जी बम्बई देवनार के कत्लखाने पर 50 दिन तक सत्याग्रह में शामिल रहे जहां पर हजारों पशु, बैल और बछड़ों का मांस और चमड़ा रोजाना अरब देशों में जाता है और इस व्यापार में लगे लोग थोड़े दिन में मालामाल हो गये। बम्बई में देवनार का कत्लखाना दुनिया में दूसरे और ऐशिया में सबसे बड़ा कत्लखाना है। इस से देश में हर प्रकार की हानि हो रही है। गरीब लोगों के रोजगार और कारोबार ठप होते जा रहे हैं। दयानन्द, भक्त फूलसिंह, गांधी जी और विनोबा भावे के विचारों के विरुद्ध व्यापारी और सरकार इस धन्धे को चला रहे हैं।

हम सब धर्म रक्षक, देशभक्त और गरीब किसान और मजदूरों की भलाई चाहने वाले हर नौ जवान और देश हितैषियों का कर्त्तव्य है कि इस महा पाप को जो देश की जड़ खोखली करता है मिटाने में सर-धड़ की बाजी लगाने की जरूरत है। हम भक्त जी के प्रेमियों का तो अवश्य ही कर्त्तव्य है कि हम भक्त जी के बताये रास्ते पर चल कर सन्तों और महात्माओं की बताई हुई परम्पराओं को बनाए रखें। ★★

भजन गौ माता का—

—राम स्वरूप

टेक—गौ माता है मानव माता, सबकी करे भलाई।
हिन्दु, मुस्लिम, सिख, पारसी, जैनी, बुद्ध, ईसाई ॥
दूध दही घी मक्खन मलाई छाछ होवे बलकारी,
जच्चा बच्चा जवान बूढ़ा, बिमार पुरुष और नारी।
बल बुद्धि को खूब बढ़ावे हर मौसम में हितकारी,
हर प्रकार के भोजन बनते पूरी और मिठाई ॥
गौ माता है मानव माता ॥
सोचोगे तो इसकी सारी चीजें बड़े काम की,
हड्डी से तो खाद बने और जूती बने चाम की।
खुर, चरबी और सींगों से वस्तु बने बड़े दाम की
गोबर से घर चूल्हा लिपता और पैशाब एक दवाई ॥
खेत बिगाड़े बहुत ही महंगा, नकली खाद मंगाओ
अनाज तो घर में रखो भूसा घास खिलाओ।
घर का खाद खेत में हो तगड़ी पैदावार बढ़ाओ,
घर में ही घर की चीजों से घर में बचे कमाई ॥
ऋषि मुनि विद्वानों ने गौ माता का गुन गाया,
विधान बना जब गांधी जी ने खास नियम बनवाया।
प्रधान मन्त्री मुरार जी ने भी विश्वास दिलाया,
जब इन्दिरा जी ने विनोबा जी की हां में हां मिलाई ॥
आजादी के नेताओं ने मिलकर बात विचारी,
दो बैलों के निशान से ही जीत होगी हमारी ॥
सब कौमों ने मिल कर बैलों की जीत करी भारी,
गाय बछड़े के निशान से जीती गई लड़ाई ॥
अकल के अन्धे धन के लालची, नेता बने हमारे
देहात का धन्धा चौपट करके विदेशों में पहुँचा रहे।
चमड़ा व गौ मास भेजकर डालर तेल मंगवा रहे,
इस भारत को ले डूबेगी ऐसी पाप कमाई।
दुनिया में दूसरे नम्बर का बम्बई में कत्लखाना,
पशु हमारे बैल और बछड़े कटते हैं रोजाना।
सन्त विनोबा चाहते थे इस देश से कलंक मिटाना,
राम स्वरूप वहां गये जेल बन के एक सिपाही ॥

ओ३म्
गुरुकुल चाय
खांसी, जुकाम, ज्वर, इन्फ्लूएन्जा, बदहजमी तथा थकान में मादकता रहित उत्तम पेय।
च्यवनप्राश
चरक संहिता अष्टवर्ग युक्त हिमालय की दिव्य जड़ी बूटियों से तैयार, शरीर की क्षीणता तथा फेफड़ों के लिए प्रसिद्ध आयुर्वेदिक रसायन। बाल, युवक तथा वृद्ध सबके लिये हितकर।
भीमसैनी सुरमा
आंखों को निरोग व शीतल रखता है।
पायोकिल
• दांतों का दर्द व टीस
• मसूढ़ों का फूलना
• मसूढ़ों में खून व पीप आना
• पायोरिया को जड़ से मिटाने के लिए उत्तम आयुर्वेदिक औषधि
गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी
ओ३म्
हरिद्वार
गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी
हरिद्वार
शाखा : चावड़ी बाजार, दिल्ली-६

Approved for Libraries by D.P.I's Memo No. 3/44—1961—B. Dated 8-1-62

Approved by the Chairman Central Library Committee, Panjab Vide their Memo No. PRD-Lib.-258-61/1257-639 dated Chandigarh, the 8th Jan., 1962.

'समाज सन्देश'—डाक घर गुरुकुल भैंसवाल कलाँ

Regd. No. P/RTK-21

सदस्य संख्या

नाम

स्थान

पत्रालय

जिला

व्यवस्थापक श्री धर्मभानु गुरुकुल भैंसवाल ने नेशनल प्रिंटिंग प्रेस, रोहतक में छपवा कर कार्यालय समाज सन्देश गुरुकुल भैंसवाल (सोनीपत) से मुद्रित तथा प्रकाशित किया।

समाज सन्देश

(हिन्दी मासिक-पत्र)

सांस्कृतिक, सामाजिक व साहित्यिक लेखों का संगम

प्रकाशन तिथि : 25 मार्च, 1983

वर्ष 23 ❀ मार्च — अप्रेल, 1983 ❀ अंक 11/12

हुतात्मा शहीद श्री भक्त फूल सिंह जी

वार्षिक चन्दा 10 रुपये

इस अंक में—

समाज सन्देश में छपे विचारों से हमारा सहमत होना या न होना आवश्यक नहीं। समाज सन्देश में हर व्यक्ति चाहे वह किसी भी मत से सम्बन्ध रखता हो अपने लोकहितकारी विचार अथवा लेख प्रकाशनार्थ भेज सकता है। उसकी मौलिकता का लेखक स्वयं उत्तरदायी होगा।

—सम्पादक

लेख भेजने तथा अन्य विषयक पत्र व्यवहार का पता :—

धर्म चन्द शास्त्री

प्रकाशन प्रबन्धक

C/o नेशनल प्रिंटिंग प्रेस, झज्जर रोड, रोहतक फोन : 2662

सम्पादकीय

गुट निरपेक्ष शिखर सम्मेलन

7 मार्च 1983 से 12 मार्च 1983 तक दिल्ली में सातवां गुट निरपेक्ष सम्मेलन बड़ी धूमधाम से मनाया गया। इसमें 100 देशों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया। गुट निरपेक्ष आन्दोलन का श्रीगणेश स्वाधीनता से पूर्व अन्तरिम सरकार के उपाध्यक्ष पं० जवाहरलाल नेहरु ने 7 सितम्बर 1946 की सन्ध्या को आकाशवाणी के प्रसारण से किया था। उन्होंने कहा—हमारा विचार है कि जहां तक हो सकेगा हम गुटों की सत्तागत राजनीति से अलग रहेंगे जो एक दूसरे के विरुद्ध बन गए हैं। 23 मार्च 1947 को उन्होंने ऐतिहासिक पुराने लाल किले में ऐशियाई क्षेत्रीय सम्मेलन बुलाया। इसमें एशिया के 20 देशों ने भाग लिया। आजादी के बाद 4 दिसम्बर 1947 को विदेश नीति की चर्चा करते हुए विदेश नीति का प्रतिपादन किया। उसमें कहा था हम शान्ति स्वाधीनता के पक्ष में हैं। ऐशियाई देशों की आजादी चाहते हैं। ऐशियाई देशों पर साम्राज्यवादी देश अपना कब्जा छोड़ दें। 1948 में गुट निरपेक्ष नीति के कारण ही हालैण्ड की इण्डोनेशिया पर हमला करने के कारण भर्त्सना की गई। इसके बाद कोरिया तथा इण्डो चीन भारत की मध्यस्था के लिए सहमत हो गये। भारत ने कोरिया में बन्दी कैदियों का प्रत्यावर्तन कराया। इस तरह 1954—1960 में गुट निरपेक्ष देशों के उच्च अधिकारियों, विदेश मन्त्रियों एवं राष्ट्राध्यक्षों की समय-समय पर मीटिंगें होती रहीं। यह तो गुट निरपेक्ष देशों के शिखर सम्मेलन की स्थापना की पृष्ठभूमि हुई। इसका प्रथम अधिवेशन बेलग्रेड में 9 सितम्बर 1961 में हुआ जिसमें अफ्रीका तथा एशिया देशों के 26 देशों ने भाग लिया। दूसरा सम्मेलन 1964 में काहिरा में हुआ, इसमें -7 देशों ने भाग लिया। इसमें भारत की ओर से श्री लाल बहादुर शास्त्री ने प्रस्ताव द्वारा आणविक निशस्त्रीकरण की मांग की। तीसरा सम्मेलन 1970 में जाम्बिया की राजधानी लुसाका में हुआ। इसमें 56 देशों ने भाग लिया। भारत की प्रधान मन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने अपने सुझाव में गुट निरपेक्ष देशों की शान्ति तथा अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग पर बल देना चाहिए।

चौथा सम्मेलन 1973 में अलजीरिया की राजधानी अल्जीर्यस में हुआ। इसमें 75 राष्ट्रों ने भाग लिया। पांचवां शिखर सम्मेलन 1976 में कोलम्बो में हुआ। इसमें भारत के प्रस्ताव को मान्यता प्रदान की गई जिसमें हिन्दमहासागर को शान्ति क्षेत्र घोषित करने की मांग की गई थी। इसमें 85 देशों ने भाग लिया। छठा शिखर सम्मेलन 1979 में क्यूबा की राजधानी हवाना में हुआ। इसमें 92 देशों ने भाग लिया। जिसमें प्रेक्षक

विश्व अर्थात् अफ्रीका के 50 देश, एशिया के 31, स्पेनिश भाषी अमेरिका के 21, यूरोप के 10 प्रतिनिधि शामिल थे। सातवां शिखर सम्मेलन 7 मार्च 83 से 12 मार्च 83 तक नई दिल्ली में हुआ। इसमें 100 देशों ने भाग लिया। शिखर सम्मेलन जिस देश की राजधानी में मनाया जाता है उस देश का प्रधानमन्त्री या राष्ट्राध्यक्ष तीन वर्षों तक या अग्रिम अधिवेशन तक सम्मेलन का प्रधान चुना जाता है, ऐसी प्रथा है। अतः 7 मार्च को विधिवत् श्रीमती इन्दिरा गांधी को प्रधान चुना गया। यह घोषणा पिछले सम्मेलन के प्रधान क्यूबा के राष्ट्रपति श्री कास्त्रो ने की। दिल्ली के विज्ञान भवन में इसकी बैठकें हुई। अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति पर खुले दिमाग से विचार रखे गये। परस्पर सहयोग, गुट निरपेक्ष देशों के आर्थिक बैंक तथा साम्राज्यवाद का अन्त आदि अनेक प्रस्तावों पर विचार हुआ। ईराक-ईरान युद्ध समाप्ति, अफगानिस्तान में रूसी सेनाओं की उपस्थिति एवं आणविक अस्त्रों की होड़ पर रोक आदि पर खुले तौर पर विचार किया गया। इसके सब प्रकार के प्रबन्ध की मुक्त कण्ठ से विदेशियों द्वारा भी प्रशंसा की गई। टी. वी. प्रसारण, रेडियो प्रसारण, टेलीफोन व्यवस्था, यातायात व्यवस्था बड़े सुचारु रूप से की गई। हजारों की संख्या में आये प्रेक्षक, विदेशमन्त्री, सम्वाददाता व अन्य स्टाफ के आगमन पर दिल्ली राजधानी में विदेशी नागरिकों की आतिथ्य के लिये विशेष प्रबन्ध किये गये। बिजली, संचार व्यवस्था, सफाई, पानी प्रबन्ध की समुचित व्यवस्था थी।

इसी तरह से एशियाड में भी सुन्दर व्यवस्था रही थी। हमारे देश में दिखावे के लिये बहुत कुछ किया जाता है, यह प्रबन्ध चिरस्थायी हो जावे तो यह देश स्वर्ग स्थली बन सकता है। यह सब चिरस्थायी तब हो सकता है जब सरकार नेता, अधिकारीगण, कर्मचारीगण नैतिक कर्त्तव्य समझ कर कार्यरत हो।

सातों शिखर सम्मेलनों की तालिका निम्न प्रकार है—

	तिथि	स्थान	देशों ने भाग लिया
प्रथम अधिवेशन	सितम्बर 1961	बेलग्रेड	26 देश
दूसरा अधिवेशन	अक्तूबर 1964	काहिरा	45 देश
तीसरा अधिवेशन	1970	लुसाका (जाम्बिया)	53 देश
चौथा अधिवेशन	सितम्बर 1973	अल्जीयर्स	75 देश
पांचवां अधिवेशन	1976	कोलम्बो	85 देश
छठा अधिवेशन	1979	क्यूबा	92 देश
सातवां अधिवेशन	मार्च 1983	भारत (दिल्ली)	100 देश

मंजिल दूर नहीं है—

—डा० चन्द्रदत्त कौशिक
'साहित्यमार्तण्ड

थक कर बैठ गये क्यों राही, मंजिल दूर नहीं है ।
रजनी का घट रीत गया, अब ऊषा दूर नहीं है ॥

लहू-लुहान हुए क्या पग,
घटा घोर छाई है ?
दुर्वह बना अरे ! क्या पथ,
बाधा जहां छाई है ?

बाधाओं से भय खाये जो, सच्चा शूर नहीं है ।
थक कर बैठ गये क्यों राही, मंजिल दूर नहीं है ॥

साथी-संगी छूट गये क्या,
रहा न कोई सहारा ?
अनसूझी राहें क्या तेरी,
सूझे नहीं किनारा ?

लक्ष्य हाथ पर पर हताश जो, प्रण का पूरा नहीं है ।
थक कर बैठ गये क्यों राही, मंजिल दूर नहीं है ॥

दिशाभाल देदीप्यमान अब,
फैला चहुँ ओर सवेरा ।
देर लगा मत, चल आगे तू—
निर्भय अरे ! अकेला ।

भाग्य और पुरुषार्थ तुम्हारा पथ प्रतिकूल नहीं है ।
थक कर बैठ गये क्यों राही, मंजिल दूर नहीं है ॥

देश भक्ति का भजन

—मास्टर मुरलीधर रावल

टेक:— भारत का सम्राट बिधाता बोष बंगाली करदे
सूखा पड़ी चमन के अन्दर तू हरियाली करदे

अंतरा—समय-समय पर प्रभु आपने देश का संकट टारा
फिर सच्चाई की जीत हुई अधर्म ने किया किनारा
अब तो गरीबी दूर करो का खाली चल रहा नारा
मजलूमों से तंग होती कैसे हो गुजारा

तोर— दुष्टों का संहार करा कर शासक हाली करदे भारत का सम्राट

अंतरा—बाड़ खेत को खान लगै जब नहीं गुजारा होता
बाज़ झपट से घायल पक्षी बैठा बैठा रोता
नेता जो बनैं मिनिस्टर वही बीज कुराह के बोता
जुल्मों की भरमार देख कर सिंह जाग जा सोता

तोर— सुदर्शन चक्र हाथ में देकर कृष्ण पाली करदे। भारत का......

अंतरा—अन्नदाता जिसको कहते उसी को रोटी मिलती ना
खून पसीना एक करें फिर भी गाड़ी चलती ना
नौकर कोई भूख से मरजा क्या मालिक की गलती ना
किसान मजदूर इकट्ठे रहते तो इनकी गद्दी हिलती ना

तोर— प्रेम का जाम पिला कर इनको तु खुशहाली करदे। भारत का......

अंतरा—छोटूराम से नेता होते हमको परवाह होती ना
रक्षक मिनिस्टर होते हमारे शान हमारी खोती ना
शीत से बच्चें थर थर कांपें जिन पै कुरता टोपी ना
स्कूल में जाकर क्या कर लेंगे जब कोई बस्ता पोथी ना
मुरली ऐसा विधान बने जो दूर कंगाली करदे। भारत का......

भारतीय आलोचना-पद्धति

—जयदेव सिंह विद्यालंकार

★

आजकल के काव्यानुसंधान के अनुसार भारत का काव्य शास्त्र बहुत ही प्राचीन है और लोक गाथाएं, कथाएं तो इससे भी बहुत ही प्राचीन समय की हैं और उनकी आलोचना का जन्म भी काव्यशास्त्र से पूर्व हुआ है। हमको भरत मुनि के नाट्य-शास्त्र से यह पता चलता है कि नाटकों की सफलताओं या असफलताओं का अनुमान तो लोगों के हर्षोल्लास, हंसने और साधुवाद से लगाया जाता था। यह एक प्रकार की प्रभावोत्पादक आलोचना होती थी और सामूहिक होने से आलोचना का मूल्य भी बढ़ जाता था। भरत मुनि ने वहां पर इस प्रकार लिखा है—

"स्मितार्धहासातिहासा साद्वहो कण्टमेव वा।
प्रवृद्धनादा च तथा ज्ञेया सिद्धिस्तु वाङ्मयी।।"

अर्थात् भरत मुनि का यहां पर विचार यह है कि नाटक की सफलता और असफलता लोगों के हास और परिहास पर ही निर्भर थी।

कवि और काव्य—जैसा हमारे यहां आलोचना का प्रारम्भिक रूप रहा है मेरा विचार है प्राय: सभी देशों में ऐसा ही रहा होगा। हमारे यहां आलोचना करने वाले लोग भावक कहलाते थे और इन्हीं के आधार पर प्रतिभा के दो भेद किये थे—कारयित्री और भावयित्री। कवि प्रतिभा को कारयित्री और भावक की प्रतिभा को भावयित्री कहते हैं। इनकी व्याख्या आचार्य शेखर ने इस प्रकार से की है :—

"सा च कवे: श्रम-अभिप्रायं च भावयति।
तत: खलु फलित: कवेर्व्यापारतरू: अन्यथासोऽवकेशी स्यात्।।"

अर्थात् भावक का कार्य केवलमात्र कवि के गुण-दोषों का ही विवेचन करना ही नहीं अपितु उसका कर्तव्य यह भी वनता है कि वह पुस्तक को सफल बनाने में अपना

पूर्ण योगदान दें। इसलिए आलोचक को कवि का मित्र, शिष्य, आचार्य आदि माना जाता था।

"स्वामी मित्रं च मन्त्री च शिष्यश्चाचार्य एव च।
कवेर्भवति हि चित्रं किं हि तद्यन्न भावकः॥"

तीसरी बात हमारी आलोचना पद्धति के अन्दर पृथक् प्रतिभाएं हैं। हमारे आलोचना काव्य-शास्त्र के अन्दर कवि और भावक की प्रतिभा को पृथक्-पृथक् माना है। 'एक सूते कनकमुपलः स्यात् परीक्षाक्षमोऽन्यः।' वास्तव में आलोचक ही कवि की विशेषताएं बतलाता है। यथा—

"उपमा कालिदास्य भारवेरर्थगौरवम्।
दण्डिनः पदलालित्यं माघे सन्ति त्रयो गुणाः॥"

किसी सूक्ति में कवियों को श्रेणीबद्ध किया गया है :—

"सूर सूर तुलसी ससी उडुगन केशवदास।
अब के कवि खद्योत सम जहँ-तहँ करत प्रकाश॥"

चौथी बात यह है कि किसी भी काव्य के गुण-दोष विवेचन करना भी भारतीय पद्धति रही है। दोषों को दिखलाने के लिए आलोचना :—

'अकाण्डे छेदा यथा वीर चरिते द्वितीयेऽङ्के राघवभार्गवयो धाराधिरूढे वीर रसे कङ्कण मोचनाय गच्छमि इति राघवस्योक्तौ।'

अर्थात् रामचन्द्र और परशुराम के बीच वीररस की बातों में कङ्कण खुलवाना दोष माना गया है। विभाव की कष्ट कल्पना करना—

"परिहरति रतिं मतिं लुनीते स्खलति भृशं परिवर्तते च भूयः।
इति बतविषमा दशाऽस्यदेहं परिभवति प्रसभं किमत्र कुर्मः॥"

अर्थात्—अरे इस नायिका के शरीर की विषम दशा हो गई है। सांसारिक चीजों की ओर उसकी रूचि नहीं है। उसकी नायिका की बुद्धि तो लुप्त हो गई है। वह बार-बार भूल करती है अब हम क्या करें। इस स्थान पर रूचि का छूट जाना आदि अनुभव करुण रस के भी हो सकते हैं, इसलिए इन अनुभवों के साथ यह मुश्किल से कल्पना की जा सकती है कि यह बात किसी कामिनी के बारे में कही गई है, यह दोष है और इसी प्रकार के गुणों के उदाहरण भी 'काव्य प्रकाश' के सातवें और आठवें उल्लास में बहुत ही अधिक मात्रा में भरे पड़े हैं।

हमें प्राचीन टीकाएं केवल मात्र काव्य सम्बन्धी अर्थ का बोध ही नहीं करातीं वरन् ये हमको काव्य-सौष्ठव और आन्तरिक भाव को दर्शाती हैं। उदाहरण के लिए जैसे सुबोधिनी टीका आदि और भारतेन्दु ने भी ऐसी टीका लिखी हैं। देखिए :—

"तजि तीरथ हरि-राधिका-तन-दुतिवर अनुराग।
जिहि ब्रज-केलि-निकुञ्ज-मग-पग-पग होत प्रयाग।।"

इस बिहारी के दोहे की व्याख्या भारतेन्दु ने इस प्रकार की है :—

"पग-पग होत प्रयास सरस्वती पद की छाया।
नभ की आभा गंग छांह सम दिन कर जाया।।
छन छवि लखि 'हरिश्चन्द' कलय कोटिन लव सम।
भजु मकरध्वस मन मोहन मोहत तीरथ तजि।।

कथावाचकों की आलोचनाएं रामायण आदि की टीकाओं में कथावाचक लोग एक-एक शब्द की व्याख्या में संस्कृत ग्रन्थों में उनके स्रोत खोलकर बतलाते हैं। मूल्यांकन सम्बम्धी आलोचना भी मिलती हैं। संक्षेपतः भारतीय आलोचना का ज्यादा झुकाव शास्त्रीय आलोचना की ओर रहा है। किन्तु अन्य प्रकार की आलोचनाओं की भी ओर कभी नहीं रही है। अब यहां एक मतीराम के छन्द की आलोचना आपके सामने उदाहरण के लिए दी जाती है :—

"बसत तरंगिनी में तीर ही तरल आय,
ग्रस्यो ग्राह पांव, खैंचि पानी बीच तरज्यो।
असरन-सरन विरद को परज देख्यो,
पहले गरज भई, पीछे गज गरज्यो।।"

ये तो हुई प्राचीन भारतीय आलोचना शैली और इस प्रकार में ज्यादा गहराई में न जाता हुआ अन्त में आधुनिक भावक भाइयों से प्रार्थना करता हूँ कि वे इसी रीति के अनुसार वे पुस्तक की अच्छाई और बुराई दोनों भली-भान्ति स्पष्ट करें। इसी में हमारे राष्ट्र का भला और साहित्य की रक्षा है।

कायर और कमज़ोरों की ये धरती नहीं बनाई····

—मास्टर मुरलीधर रावत

★

टेक—जिसकी लाठी भैंस उसी की दुनिया कहती आई।
कायर और कमजोरों की ये धरती नहीं बनाई॥

भारत के मजदूर किसानो अब तो होश सम्भालो,
बच्चों को शिक्षा देकर अभिमन्यु वीर बनालो।
व्यूह के अन्दर दाखिल होकर कर दो शुरू लड़ाई,
जिसकी लाठी······

पांचवां हिस्सा शहरी जनता जो तुम पै रौब जमावै,
उनके बच्चे ऐश उड़ाते तू दिन और रात कमावै।
मौका निकला तेरे हाथ से ना तैने तेग़ चलाई।
जिसकी लाठी······

बच्चे तेरे सैनानी बनकर देश की रक्षा करते,
तू अन्न की पैदावार बढ़ाता ध्यान लगाकर हरि ते।
फिर भी बच्चे भूखे रहते ना हो कहीं सुनाई।
जिसकी लाठी······

मण्डी में बेकदरी होती, जिन्स पै बोली लगती,
तेरे माल के शहरी मालिक तेरी चिलम सुलगती।
आढ़ती भी तेरे पट्टी बांधै तोहै चाय की प्याली प्याई।
जिसकी लाठी······

तेरी कमाई का आधा हिस्सा वकील डाकटर खाते,
कुछ गुन्डे सरकारी अफसर रिशवत भी ले जाते।
गुन्डा गर्दी मची भारत में इन की मिलकर करो पिटाई।
जिसकी लाठी······

यूनियन बनाओ लड़ना सीखो जो अपनी कीमत चाहो,
बिना संगठन काम चलैना चाहै कितनौ ही शोर मचाऔ।
इसी लगन में मुरली बैठा सुमिर रहा रघुराई।
जिसकी लाठी भैंस उसी की दुनिया कहती आई,
कायर और कमजोरों की ये धरती नहीं बनाई॥

नैतिक शिक्षा

—श्रीमती सुशीला देवी घनघस
M. A. (Hist. & Hindi), B. Ed.

भ्रष्टाचार और अनैतिकता ऐसा कैंसर है, जिसका कोई इलाज नहीं। जिस राष्ट्र में यह व्याप्त हो जाता है, वह विनाश के कगार पर शीघ्र ही पहुँच जाता है। किसी भी राष्ट्र की आन्तरिक एवं बाह्य उन्नति उस राष्ट्र की शिक्षा पर अवलम्बित होती है। वह राष्ट्र जिसके पास सुशिक्षत नागरिकों की अथाह निधि का भण्डार है, वह संसार रूपी आकाश का सबसे वड़ा देदीप्यमान नक्षत्र है। प्रत्येक बच्चे में सीखने के अंकुर होते हैं, इन अंकुरों को प्रतिकूल जलवायु से सुरक्षित रख, अनुकूल पौष्टिक खाद्यान्नों से सिंचित करते हुए छायाशील पेड़ बना देने का नाम ही शिक्षा है। पूर्ण शिक्षा का तात्पर्य है—शिक्षा द्वारा आयोजित नैतिक गुणों का समावेश।

नैतिकता स्वयं में पूर्ण शब्द है। इसके अन्तर्गत कर्तव्यपरायणता, अनुशासन-बद्धता, नियमितता, विनयशीलता, आज्ञाकारिता, आत्मत्याग, संयम, निष्पक्षता, सहानुभूति, दया, क्षमाशीलता, प्रेम, शिष्टाचार इत्यादि सभी गुण आ जाते हैं। नैतिकता वह स्वच्छन्द प्रवाहमान निर्झरिणी है, जिसके स्वच्छ जल में सुन्दर एवं परिपूर्ण व्यक्तित्व की निर्मल छाप स्पष्ट प्रतिबिम्बित होती है। आज का छात्रवर्ग नैतिकता के अभाव में पतनोन्मुख हो रहा है। दुर्भाग्य का विषय है कि, दुःख दावानल से दग्ध वसुन्धरा जिन भारतीय आदर्शों की बाट जोहती थी, जो देश सांस्कृतिक तथा आध्यात्मिक क्षेत्र में जगद् गुरु के नाम से विख्यात था, समग्र विश्व का अग्रदूत था, आज उसी देश का विद्यार्थी शिष्टाचार से अपरिचित, विनय से शून्य, काव्य एवं धर्मदर्शन के तथ्यों से अनभिज्ञ होकर हो-हल्ला करने, उधम मचाने, तोड़-फोड़ करने में ही अपनी सफलता समझता है। आज का छात्रवर्ग उत्तरदायित्वहीनता, उद्दण्डता, आलस्य, असत्य आदि दुर्गुणों की समष्टि हो गया है। दिनों दिन शिक्षण संस्थाएं अखाड़े बनती जा रही हैं। इस तथ्य से इन्कार नहीं किया जा सकता कि वर्तमान शिक्षा प्रणाली, पाठ्यक्रम और पाठ्यविधियां भी इसके लिए उतनी ही उत्तरदायी हैं जितना कि आधुनिक सामाजिक वातावरण। क्योंकि समाज का मार्ग दर्शन शिक्षक तथा विद्यालय ही करते हैं। क्या कभी शिक्षक वर्ग की दृष्टि इन दुष्परिणामों की ओर जाती है? यदि हां! तो क्यों

नहीं वह अपने उत्तरदायित्व का भार अपने सबल एवं सशक्त कन्धों पर लेता है ? क्यों नहीं एक शिक्षक व्यावसायिकता की निम्म सतह से उठ कर आदर्श बन पाता ?

यदि शिक्षा में नैतिकता का प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से समावेश किया जावे तो प्रत्येक विद्यार्थी अपने जीवन को सत्यम्, शिवम्, सुन्दरम् में ढालने में समर्थ हो सकेगा। देश की संस्कृति का निस्सीम विस्तार करेगा। अनैतिक गुणों का समाधान है—"मनन द्वारा समस्याओं का मन्थन।" इसके लिए किसी प्रयोगशाला की आवश्यकता नहीं, बल्कि शिक्षकों का मिस्तिष्क ही वास्तविक प्रयोग शाला है। इसके लिए सर्वप्रथम शिक्षक स्वयं एक आदर्श हो। शिष्य को वह अपना अंश मानकर चले। प्राथमिक शिक्षा से लेकर महाविद्यालय के शिक्षण सोपान तक छात्रवर्ग अध्यापकों, प्राध्यापकों का अनुकरण करते हैं। यदि अध्यापक वृन्द मन में उषाकालीन उत्साह भर कर, मध्याह्न का सा तेज धारण कर, गोधूलि सी शिक्षण के प्रति ममता लेकर, अपने विद्यार्थियों में विचरण करें तो एक स्वच्छन्द वातावरण की उत्पत्ति हो सकेगी।

दूसरे—शिक्षा में परोक्ष रूप से आध्यात्मिक सिद्धान्तों को स्थान देना। धर्म, नैतिकता का मूल है। श्रद्धा की सशक्त नींव पर खड़ा महल कभी ध्वस्त नहीं होता। इसके अभावों में ही वर्तमान अराजकता के कटु एवं शुष्क फल उत्पन्न हुए हैं।

तीसरे—पाठ्यक्रम में से पुस्तकीय ज्ञान की नीरसता को हटाकर सृजनात्मक, रचनात्मक, पठ्यविषयों को रखना। 'लेखनी के शूर' उत्पन्न करने की अपेक्षा हृदय तथा हाथ एवं मस्तिष्क को व्यस्त रखने वाली शिक्षण सामग्री को रखा जावे।

चौथे—शारीरिक शिक्षा भी नैतिकता के क्षेत्र में महत्वपूर्ण भाग अदा करती है। व्यायाम द्वारा शरीर की गति पर नियन्त्रण रहता है। बच्चों में साहस, निश्चय, सहानुभूति, प्रत्युत्पन्भवि, पराज्य में विजय का अनुभव सहयोग तथा सामाजिक समायोजन की प्रवृतियों का प्रतिकरण हो जाता है। फ्रोबेल ने कहा है—"Play is the Handmaid to moral education". मन की स्वस्थता में ही नैतिक गुणों को ग्राह्य करने की शक्ति होती है।

पांचवें—शिक्षा की नींव मनोवैज्ञानिक पृष्ठाधार पर होनी चाहिए। क्योंकि संवेगात्मक विकृति का प्रादुर्भाव बच्चे के सुषुप्त मन से तरंगित होकर विपरीत दशा में प्रवाहमान हो जाती है। मानसिक थकान मस्तिष्क को शैतान बना देती है।

[शेष पृष्ठ 10 पर]

ब्रह्मचर्य

—योगेन्द्र सिंह विद्यालंकार

अति सृष्टि अयां वृषभोऽतिसृष्टा अग्न्यो दिव्य: ।
रुजन्यरिरुजन्मृणन्प्रमृणन् ।।
आको मनोहारवनो निर्दाद: आत्मदूषिस्तनूदूषि ।
इदं तमति सृजामि तम माभ्यवनितंक्षि ।।

भारत के प्रत्येक नर को यह मन्त्र याद दिलाता है, कि वीर्य का नाम "अय:" यह शब्द संस्कृत की धातु रूट 'आप्लृ व्याप्तौ' से सिद्ध होता है, अत: ठीक तो यह है कि व्याप्त रहने वाला वीर्य मनुष्य के सारे शरीर में, रक्त के एक एक कण में फैला रहता है। अत: मैं इसे कुछ स्पष्ट करना चाहूँगा। सुनिये—

पुरुष के अण्डकोष (Testicles) वीर्य का उत्पत्ति प्रमुख स्थान होता है। इसी में उत्पन्न होने के कारण एक धारा से वीर्य शुक्रकोश Semenal vesicle नाम की एक थैली में जो ज्ञानेन्द्रिय के मूल में मूत्राशय और शौच शम के बीच में होता है। चला जाता है, शुक्र में संगृहीत होने वाला वीर्य सन्तानोत्पत्ति के काम में आता है। दूसरी धारा से वीर्य पुरुष के रक्त में मिलता रहता है।

रक्त में मिलने वाले को औज के नाम से कहा जाता है। इसी औज के कारण मनुष्य के शरीर में कान्ति आती हे, बल और अंगों की बढ़ोतरी होती है। मस्तिष्क बढ़ता है, बल, उत्साह प्रकट होता है, तथा शारीरिक और मानसिक फुर्तीलापन उत्पन्न होता है। मनुष्यों का जीवन स्वाभाविक हो तो शुक्रकोष के भरा रहने से हमारे शरीर में कान्ति, मुस्कराहट, मस्तक, बल की अधिक वृद्धि करेंगे। हम अपने जीवन को स्वाभाविक नहीं रखते, हमारा खाना पीना, रहन सहन, वेष-भूषा, और संगति चाहे किन्हीं की क्यों न हो, या अश्लील पुस्तकों की—ये सब इस प्रकार के हैं कि रात दिन में अनेक बार हमारे अन्दर कुवासनाएं जागृत होती हैं, जिस का फल यह होता है कि हम जानबूझ कर अपना वीर्यपात कर लेते हैं—कुवासना से या दु:स्वप्नों से, इस प्रकार से शुक्रकोश खाली हो जाता है। आगे पीछे भी शुक्रकोष बहुत

बार खाली होता रहता है। इसके खाली होते ही इसे भरने वाली वीर्य वाहिनी नाड़ियां अण्डकोषों में वीर्य को खींच कर लाती हैं। इसे भरती हैं। इसका फल यह होता है कि रक्त में जाने वाले वीर्य की मात्रा कम हो जाती है इसका प्रभाव हमारे शरीर यानि कि सारे जीवन पर पड़ता है।

हमारी कान्ति कम होने लगती है बल यानि उत्साह तथा फुर्तीलापन समाप्त होने को जाता है। जब तक यह प्रक्रिया तेज नहीं होती हमें अपनी कमजोरी का पता नहीं होता। उत्तेजना बढ़ जाने पर उसे शान्त करने के लिए वीर्यपात कर देने में जो तामसिक आनन्द आता है, यहीं तक नहीं बल्कि उसी आनन्द को बार-बार प्राप्त करने के लिए श्रृंगार के विचार पैदा होते हैं। यदि हमने शुक्र का पतन किया और श्रृंगारित विचारों को सोचने का आनन्द लेते रहे तो रात में हमारा वीर्य जाता रहता है। पर इतना सामर्थ्य कहां कि वे रात को स्वप्नों तक ठहर सके, वह उसी समय जान-बूझकर अपनी नाश की गति को प्राप्त कर लेता है। इस प्रकार अभ्यास बढ़ता जाता है, ये तो सब जानते हैं कि किसी भी वस्तु का अभ्यास करने से उसमें काफी आनन्द हमें धीरे-धीरे से प्राप्त होता है।

इस प्रकार से वीर्यपात के तरीके सूझते जाते हैं। और मनुष्य अपने आपको तथा दूसरों को भी ले बैठता है। यह स्वाभाविक क्रिया निरन्तर बढ़ जाती है, उसके निरन्तर बढ़ने से ही रक्त में वीर्य भेजने वाली धारा सर्वथा बन्द हो जाती है। तथा रक्त को औज न मिलने से हमारे शरीर की कान्ति जाती रहती है, और अंगों की वृद्धि रुक जाती है। बल, उत्साह, कान्ति शारिरिक और मानसिक फुर्तीलापन समाप्त हो जाता है। तथा अण्डकोष वीर्य बनाना बन्द कर देते हैं। उस समय आदमी की अवस्था बहुत अधिक खराब हो जाती है। ऐसा जीवन बीताने के लिए जिसको अनेकों बीमारी घेरे में डाल लेती हैं इसमें थकावक, अति परिश्रम और अत्यधिक कमजोरी महसूस होने लगती है। अत: हमें इन बुरे व्यसनों से बचना चाहिए। यदि मनुष्य चाहे तो अपना बचाव आसानी से कर सकता है।

यदि कोई श्रृंगार के विषयों में फंस जाता है तो उसका उद्धार होना बहुत मुश्किल है। अत: मैं यही कहूँगा कि तुम अपने अन्दर काम, श्रृंगारिक विचार, व्यवहारों और चेष्टाओं को उत्पन्न मत होने दो, इन्हें दूर फैंको। जिसके कारण तुम्हारी कान्ति मस्तिष्क तथा बल बढ़ता है, सभी शक्तियां विकसित होती हैं, उसे काम की आग से पिघलने न दो, इस आग को बुझे रहने दो। यदि अपने वीर्य को पिघलाकर बहने दिया तो याद रखें कि हमारी बुरी दशा होगी, ये अद्भुत् और सुन्दर चोला नष्ट हो जायेगा और परमात्मा से दोबारा जन्म लेने की दुआ करनी होगी।

वीर्यपालन का एक ही तरीका है— "इन्द्रस्य वै इन्द्रस्येणामिपिष्टखेतस्या" अर्थात् मेघ जैसे वनस्पति औषधियों की उत्पत्ति के लिए वर्षण करता है, उसी प्रकार सन्तानोत्पत्ति में ही वीर्य से सेचन करो। हमें मन माना उपयोग नहीं लेना चाहि। हमें इन्द्रिय को भगवान की देन समझना चाहिए। जब हम इन्द्र का काम करना चाहें, अर्थात् सन्तान उत्पन्न करना चाहें तभी हमें अपनी ज्ञानेन्द्रिय का प्रयोग कर उसके द्वारा वीर्य का संचन करना चाहिए। अन्यथा उद्देश्य से वीर्य स्खलित करना मृत्यु को पास बुलाना है।

वेद सूक्ति के अनुसार सर्वकल्याण मार्ग पर चलो, या सर्वनाश मार्ग पर किसी एक मार्ग पर चलो, जो तुम्हें पसन्द हो, तुम्हारे हाथ में है, काम विकारों को दूर फेंक दो और अपने जीवन को उन्नत बनाओ तभी कल्याण होगा, नहीं तो मृत्यु भी जल्दी से बुलावा दे रही है। स्त्रियों में भी ये वासनाएं इसी प्रकार से उत्पन्न होती हैं जिस प्रकार पुरुषों में। मैं अब अधिक इस विषय में नहीं जाना चाहता। अतः हमें इन कुवासनाओं से बचने का यत्न करना चाहिए।

मानव जीवन को उन्नत बनाने के लिए ब्रह्मचर्य की आवश्यकता उसी प्रकार है जिस प्रकार किसी सुदृढ़ भवन का निर्माण करने के लिए गहरी नींव की। ठीक इसी प्रकार जिस मनुष्य में ब्रह्मचर्य का अभाव है, वह कदापि उन्नतिशील नहीं बन सकता।

महर्षि दयानन्द के जीवन से कोई ही अपरिचित होगा। दयानन्द एक बार लाहौर में ब्रह्मचर्य की महिमा का प्रचार कर रहे थे। उसी वक्त एक बैरिस्टर वहां आया और स्वामी जी से कहा—आप भी बाल ब्रह्मचारी हैं, कोई चमत्कार दिखाइए। स्वामी जी उस वक्त तो कुछ न बोले। जिस समय सभा समाप्त हुई, वह बैरिस्टर अपनी चार घोड़ों से जुड़ी बग्गी में जाने लगे तो स्वामी जी ने पीछे से बग्गी को पकड़ लिया। फिर बग्गी जरा सी दूर न जा सकी वहीं पर जाम हो गई। पीछे देखा तो स्वामी जी पकड़े हुए थे। इस दृश्य को देख कर जनता ने ताली बजाई और सभा-मण्डप तालियों से गूंज पड़ा और बैरिस्टर क्षमा के लिए याचना करने लगा।

इसलिए वेद में कहा है— 'ब्रह्मचर्येणतपमादेवा मृत्युपाघ्नत।' ब्रह्मचर्य के बल से देवताओं ने मृत्यु को जीत लिया।

ब्रह्मचर्य की रक्षा ही जीवन है। वीर्य नाश ही मृत्यु है। सिंह जंगल का राजा होता है, वह नित्य ही जंगल में अकेला घूमता है। उसकी गर्जना सुनकर बड़े-बड़े शूर-वीरों के छक्के छूट जाते हैं, शिकारी की गोली के आगे भी वह चलता है। जानते हो

क्यों ? इसीलिए कि वह अपने जीवन में केवल एक बार ही ब्रह्मचर्य का खण्डन करता है। हाथी इतना विशाल काय होते हुए भी कायर होता है। डर के कारण अकेला नहीं रहता झुण्ड में रहता है। इतना ही नहीं बल्कि सोते समय हाथियों के झुण्ड में से एक हाथी पहरा दिया करता है। कहीं सिंह न आ जाए और जहां कहीं सिंह की गर्जना सुनी तो सब तितर-बितर हो जाते हैं। वह बड़ा कामी होता है। अतः हमें इसी उदाहरण से समझ लेना चाहिए।

ब्रह्मचर्य न होने से भीतर काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार आदि रोग मनुष्य को घेर लेते हैं और आंखों की ज्योति कम हो जाती है। जिस प्रकार एक गाड़ी भर फूल एकत्रित किए जायें और उन फूलों का रस तैयार किया जाए, इस फूल के रस को तैयार होने पर नाली में डाल दिया जाए तो मूर्खता ही होगी। वह मूर्खता हम कर बैठते हैं जिसकी एक बूंद लाखों करोड़ों रुपयों से बढ़ कर है। यदि हम उचित प्रयोग करें तो हनुमान, भीष्म, शंकराचार्य, महर्षि दयानन्द, देवताओं एवं महापुरुषों का नित्य जन्म होता रहेगा। आशा है प्यारे दोस्तो, इन थोड़ी सी बातों पर जरूर ध्यान देंगे। मैं आपका कृतज्ञ रहूँगा।

---★

(पृष्ठ 6 का शेष)

शैक्षणिक वातावरण का निर्माण सामाजिक क्षेत्र के आधार पर किया जावे। बच्चों में स्वाध्याय की आदत डालना बहुत ही वांछनीय है। चलचित्रों की हानियों के प्रति बच्चों को जागरुक बनाना आवश्यक है। प्रार्थना सभा के उपरांत कुछ विचार रखने का उपक्रम करना चाहिए। इसके उपलक्ष में संगोष्ठियों का निर्माण, सांस्कृतिक कार्यक्रम, बालसभाओं द्वारा चित्र निर्माण सम्बन्धी बातें बतलाने का आयोजन किया जावे।

निष्कर्षतः नैतिक शिक्षा के अभाव में शिक्षा अधूरी तथा अस्तत्वहीन है। यदि शुद्ध चारित्रिक विद्यार्थियों की पीढ़ी तैयार करनी है तो हमें शिक्षा, शिक्षालयों, शिक्षण-साधनों एवं शिक्षकों के द्वारा उन्हें पग-प्रतिपग, सोपान दर सोपान, नैतिक गुणों द्वारा देशोन्नति के योग्य बनाना होगा। नैतिकता के अभाव में शिक्षा केवल पुस्तकीय तथा एकांकी व केवल शिक्षा-शिक्षा के लिए रह जायेगी। आधुनिक युग में प्राचीन पद्धति द्वारा निर्मित आदर्शों को छोड़ कर, हमारे लिए यथार्थ के धरातल पर उतरना ही श्रेस्कर है। ★★

याराना

—वीरेन्द्र विद्यालंकार

पथ से विहीन है भटकता मनुज कोई,
तृषित क्षुधित होके कोई जब मरता।
पथिक को पान्थ मिले तब वह फलता;
तृषित को पेय, कन्द क्षुधित को मिलता।
दारिद्रय में दीन जब द्रविण विलोकता;
औ' नीर के निधि में तृण डूबते को मिलता।
उसके ही सम सुख मुझे तब मिलता है;
जब कोई प्रेम जल मुझ पे उगलता॥

बैठा जब निर्जन में, कहीं कुछ सोचता हूँ;
यार का याराना नख-शिख हूँ विलोकता।
धन के आधीन देखी मित्रता की चित्रता;
औं यार के याराने में भी धन-दुर्गन्धता।
कर ले आदर्श चाहे मीठी ये सरलता;
इनसे तो किसी का भी स्वार्थ नहीं फलता।
सार को ना जाना तूने, धन ना विपुल किया
प्रेम की तो आशा फिर किस लिए करता?

प्रेम से है दीप पर गिरता पतंग कोई;
आनन उठा के यह चातक पुकारता।
प्रणय से बुलबुल पाटल को चूमती है;
प्रणय को देख प्रेमी उच्च उच्च हंसता।
पतंग के प्राण गए प्रणय प्रदान कर;
हिमकण चातक के प्रणय का फल है।
प्रणयिनी बुलबुल कुसुम निलय हुई;
चहुँ दिशि देखो यह कैसा अट्टहास है।

चिरकाल मनुज अजस्र जब चलता है;
फिर कहीं एक सच्चा मीत उसे मिलता।
जाना नहीं छोड़ कभी धन में लोलुप हो के;
धन से अखण्ड नहीं प्यार कभी ठनता।
धन की गति दो देखी वृद्ध कभी बाल होना;
लिए इसी को प्रेम वह घटता औ' बढता।
प्रेम नहीं, मनुज में द्वेष वह फलता;
बदले में धन देना वणिग् की क्षमता॥

बिगाड़वा

—राम स्वरूप

दुर्जन सिंह स्वभाव से नटखट और शरारती था, परन्तु काम करने में निपुण, कर्मठ और विवेकशील था। वह क्षणभर भी निठला नहीं बैठ सकता था। उसका स्वभाव व कर्म करने की सामर्थ्य उस बन्दरी के बच्चे के समान थी जिसे शराब पिला दी गई हो और बिच्छू ने काट लिया हो। उसके युवक होने पर उसके स्वभाव में उत्तरोत्तर वृद्धि होती गई। उसके चंचल स्वभाव में सुधार लाने के लिए उसके परिवार जनों ने भरसक प्रयत्न किया परन्तु घर वाले जितना सुधार का प्रयत्न करते उस से द्विगुणित अनुपात से उसके स्वभाव में वृद्धि होती जाती। घर वाले, गली मुहल्ले, गांव वाले, यहां तक कि जो भी उसके सम्पर्क में आया, सभी तंग हो गये थे। सभी उससे अपना पिंड छुड़ाना चाहते थे। उसकी कार्यकुशलता, क्षमता, कर्मठता से सभी उसे चाहते थे, परन्तु उसकी नटखटता, शरारत से सभी उसे घत्ता बताना चाहते थे। कुल मिलाकर उस से सारा गांव तंग आ गया और उसे गांव की पंचायत ने उसके घर वालों की शिकायत पर उसे गांव छोड़ने का आदेश दे दिया।

गांव के इस आदेश की अनुपालना करने के उद्देश्य से वह गांव छोड़ कर अपनी उदरपूर्ति हेतु इधर उधर घूमने लगा। वह कई स्थान पर गया। उसने कई जमींदारों के घर, खेत का काम करने के लिए नौकरी की। जहां जहां भी वह जाता यही शर्त रखता था कि मैं पल भर भी निठल्ला नहीं रहूँगा। यदि आप मुझे काम नहीं दे सकोगे तो मैं निठल्ला होते ही कोई न कोई उपद्रव मचा दूंगा। यहां तक कि काम न मिलने पर आपके मकान को गिराना आरम्भ कर दूंगा। कई भू-स्वामियों ने उसकी शर्त को मान कर, उसे केवल रोटी-वस्त्र पर नौकर रखा, परन्तु कुछ ही दिनों में उसे चलता कर देते। यह सिलसिला काफी दिन तक चलता रहा। दुर्जन सिंह भी अपने स्वभाव से तंग आ गया परन्तु वह स्वयं अपने स्वभाव में सुधार लाने में लाचार था। दुर्जन सिंह जहां भी जाता उसकी शौहरत की सुगन्धी उससे पहले पहुँच जाती। दस-बीस मील के इलाके में वह अपनी करतूतों के कारण नाम कमा चुका था। यद्यपि सब लोग उसे शक्ल से नहीं जानते थे परन्तु नाम लेते ही उसे चलता करने का प्रयत्न करते।

दुर्जन सिंह अपने स्वाभाविक गुणों के कारण दुःखी होकर पेट की अग्नि शान्त करने की गरज से अपने इलाके से बहुत दूर चला गया। चलते चलते सायंकाल हो गई। दुर्जन सिंह एक गांव के नामी-ग्रामी, 2000 बीघे के मालिक घमण्डी लाल, जो अपने नाम के अनुकूल आस-पास के इलाके में दुर्जन सिंह की भांति नाम पा चुका था, के पास गया। गांव के लोगों ने दुर्जनसिंह को बताया कि घमण्डी लाल के पास नौकरी करना खाला जी का घर नहीं है। घमण्डी लाल के घर शैतानों का शैतान भी नौकरी नहीं कर सकता। घमण्डी लाल भी दुर्जन सिंह की भांति नौकरों से काम लेने, उन्हें तंग करने, मार पीट करने के लिए दूर दूर ख्याति प्राप्त कर चुका था। नौकरी लगने वाले उसके नाम से कांपते थे। गांव के लोगों ने दुर्जन सिंह को घमण्डी लाल के सभी गुणावगुणों का इतिहास कह सुनाया। गांव के लोग घमण्डी लाल के अवगुणों का जितना अधिक वर्णन करते, दुर्जनसिंह मन ही मन में उतनी ही उसकी करतूतों की चुनौतियों को द्विगुणित शक्ति से चुनौति देता। लोग घमण्डी लाल के अवगुणों को जितना अधिक बढ़ा-चढ़ा कर पेश करते, दुर्जन सिंह का मनोबल उतना ही अधिक पुष्ट होता।

घमण्डी लाल भारी भरकम शरीर, बिच्छू की पूंछ नुमा बड़ी बड़ी काली मूछें, चौड़ी छाती, छोटी गर्दन, नाटा मंजला कद, सेवड़े जैसी लाल आंखें, गोल-मटोल चेहरा, इन्द्रधनुष सदृश तनी भृकुटी, देखने में साक्षात्कार दैंत, चौडे भारी पलंग पर बैठा हुक्का गुड़गुड़ा रहा था। साधारण व्यक्ति उसके चेहरे-मोहरे से ही आतंकित हुए भी नहीं रह सकता था। दुर्जन सिंह के साथ गांव के कुछ लोग उसे घमण्डी लाल के पास छोड़ने के लिए, तो कुछ अन्य लोग नवागन्तुक की पिटाई होते देख, आनन्द लेने के लिए तमाशबीन के रूप में पीछे-पीछे चले। घमण्डी लाल के मकान के निकट पहुँचने पर अधिकांश लोग धीमे कदमों से चलने लगे और पीछे रहने के लिए इधर-उधर बगलें झांकने लगे। घमण्डी लाल से सीधे मुंह बातें करने का साहस बिरला ही कर सकता था। दुर्जन सिंह भी गांव के लोगों के किनारा करने से घमण्डी लाल के स्वभाव की अनुभूति पा चुका था, परन्तु भयभीत नहीं था। घमण्डी लाल के मकान तक पहुँचते-पहुँचते केवल तीन व्यक्ति दुर्जन सिंह के साथ रहे।

घमण्डी लाल आते हुए आदमियों को देख कर खंखारा और अपने स्वभावानुसार भयंकर मुद्रा से उन्हें गौर से देखने लगा। गांव के लोगों ने घमण्डी लाल पर अहसान जिताने के लिए एक स्वर में कहा—चौधरी साहब हमें आप का बड़ा ख्याल है, हम आप के खेत के काम के लिए एक नौकर लाए हैं। नौकर बात-चीत चाल-ढ़ाल से आपके अनुकूल प्रतीत होता है।

घमण्डी लाल—हूँ······कौन सा है ऐसा नौकर······जो मेरे पास इस वेला में आया है।

दुर्जन सिंह—मैं हूँ, चौधरी साहब ! आपका सेवक, दुर्जन सिंह।

घमण्डी लाल—अच्छा दुर्जन सिंह, नाम तो बड़ा भयंकर है। क्या नाम की सार्थकता के गुण भी हैं आप में, या नाम को ही लजा रहे हो।

दुर्जन सिंह—चौधरी साहब ! मैं आप की भूरी-भूरी प्रशंसा सुन कर ही आपकी सेवा में उपस्थित हुआ हूँ।

घमण्डी लाल—अच्छा तो आप क्या-क्या कर सकते हो ? आपका दूसरा नाम क्या है ?

दुर्जन सिंह—चौधरी साहब ! मैं आपके सभी काम करने का प्रयत्न करूंगा और मुझे लोग बिगाड़वा कहते हैं।

घमण्डी लाल—आपकी नौकरी की शर्तें क्या हैं ? क्या नौकरी लोगे, कितना काम करोगे ? मेरे घर बिगाड़वों का सुधार केन्द्र होने के नाते मुझे लोग घमण्डी कहते हैं।

दुर्जन सिंह ने घमण्डी लाल की सभी बातों का एक ही वाक्य में उत्तर देते हुए कहा—चौ० साहब ! मैं तो कुल्ली-गुल्ली-जुल्ली के बदले आपके सभी कार्य कर दूंगा और निठल्ला होने पर आपके मकान तक को गिरा दूंगा। निठल्ला होने पर भयानक शरारत कर बैठूंगा।

दुर्जन सिंह की बातें सुन कर घमण्डी लाल के हृदय में कुछ सरसराहट तो हुई परन्तु अपने नाम अनुसार साहस बटोर कर कहने लगा—अच्छा तेरी शर्तें मन्जूर हैं, कल से काम पर आ जाना, तेरे जैसे कई जीव-जन्तु खेत में पड़े रहते हैं, तुम भी उनमें शामिल हो जाना। तेरी सभी शर्तें मंजूर हैं।

दुर्जन सिंह—कल से कहां मैं तो अभी से काम पर तैनात हो जाऊंगा।

गांव के लोग दोनों के वार्तालाप से इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि दोनों में सिकन्दर-पौरस की टक्टर है। देखते हैं ऊंट किस करवट बैठता है।

घमण्डी लाल जितना कार्य बताता, दुर्जन सिंह उसे तुरन्त समाप्त कर, अगले काम की मांग कर देता। यह सिलसिला कई मास चलता रह। इस अवधि में दोनों में

कोई टकराव नहीं हुआ। दुर्जन सिंह हर समय अपने गुण का प्रदर्शन करने की घात में रहता था और घमण्डी लाल के घमण्ड को चकना चूर करना चाहता था।

गांवों के लोगों में बिगाड़वा–घमण्डी के सम्बन्ध में स्थान-स्थान पर चर्चा होती। कुछ घमण्डी का पक्ष लेते तो दूसरे बिगाड़वा की हिमायत पर तन जाते, परन्तु अभी तक दुर्जन सिंह ने कोई ऐसा कार्य नहीं कर दिखाया था जोकि उसके नाम "बिगाड़वा" की सार्थकता को सिद्ध करता। अधिकांश लोग घमण्डी को विजयी मानने लगे। यह बात दुर्जन सिंह के भी कानों में पड़ी।

दुर्जन सिंह अपने नाम की सार्थकता स्वाभाविक गुणों का प्रदर्शन करने के माकूल अवसर की तलाश में रहता। वर्षा ऋतु आरम्भ हो चुकी थी। एक दिन रात्रि के अन्तिम प्रहर में कड़ी वर्षा से भूतल जलप्लावित हो गया। आज दुर्जन सिंह को खेत व घर से पूर्ण अवकाश था। घमण्डी लाल की सुसराल 5 किलोमीटर की दूरी पर थी। दुर्जन सिंह से उसके प्राय: सभी सम्बधियों का सामान्य परिचय हो चुका था। घमण्डीलाल की पत्नी कर्मकाण्डी, जादू टूने में विश्वास करने वाली, शीघ्र ही किसी की बात पर विश्वास व अमल करने वाली थी। घमण्डी लाल अपनी पत्नी के इन कार्यों से खिन्न रहता था। कभी कभी उसे डांट-डपट देता था। दुर्जन सिंह घमण्डी लाल के विरुद्ध उस की पत्नी के हृदय में अपना प्रभाव जमा कर उसका विश्वास पात्र बन चुका था। घमण्डी लाल की पत्नी भूलां देवी अपने पति की अपेक्षा दुर्जन सिंह पर अधिक विश्वास करती थी। इस बात का विश्वास दुर्जन सिंह को भी हो चुका था।

घमण्डी अब दुर्जन से सभी प्रकार से निश्चिन्त था। दुर्जन ने अपने कार्यकलापों से घमण्डी पर छूमन्त्र का सा प्रभाव डाल कर उसे निश्चिन्त प्राय कर दिया था। घमण्डी अब दुर्जन को अपना वफादार सेवक अनुभव करने लगा था परन्तु दुर्जन के मन में एक 'कोना' था।

बरसात के कारण अब सभी को राहत व अवकाश मिला था इस शुभ अवसर को दुर्जन सिंह हाथ से नहीं खोना चाहता था।

दुर्जन सिंह भूलां देवी के पास गया और कहा कि घमण्डी लाल स्वयं दुश्चरित है और अपने दोष को छिपाने के लिए तुझे दुश्चरित कहता है। वह सदा आपको सन्देह की दृष्टि से देखता है तथा इसी कारण आप पर विश्वास नहीं करता। यही कारण है कि आपकी गोद अभी तक फूल रहित है। वह आपको समाप्त करने की परियोजनाएं घड़ रहा है। मौके की ताक में है। दुर्जन सिंह की यह विषाक्त बातें सुनकर भूलां

तिलमिला उठी। दुर्जन सिंह ने आगे कहा कि दुश्चरित व्यक्ति की कमर जीभ से चाटने पर नमकीन (खारी) लगती है। आप इसकी परीक्षा करके स्वयं देख लें। घमण्डी के अविश्वास का प्रमाण यह है कि वह आप को अपनी कमर की ओर कभी नहीं जाने देता। दुर्जन की बात ने भूलां की क्रोधाग्नि पर जलती में तेल का काम दिया और अब वह अपने पति की परीक्षा करने की ठान चुकी थी। दुर्जन भूलां के मन में घमण्डी के प्रति अविश्वास पैदा कर घमण्डी के पास गया और बातों ही बातों में कहने लगा कि आपके गांव में बहुत सी स्त्रियां छोटे बच्चों को मार कर खाने वाली स्याहरी हैं और आपकी पत्नी उन सब की सरदार कही जाती है। आप यदि चाहो तो मैं स्याहरी स्त्री (आपकी पत्नी) के गुण बता सकता हूँ।

घमण्डी एक साधारण व्यक्ति की भांति अपनी पत्नी में इस प्रकार का दोष अपने वफादार नौकर से सुन कर लज्जा-मिश्रित आवेश से तपत हो उठा। वह दुर्जन की चाल में आ गया। दुर्जन ने घमण्डी के तमतमाते चेहरे, तनी हुई भृकुटियों को देख कर अपने जादू का असर होता अनुभव कर आगे और कहा कि—चौ० साहब ! यह सभी बातें, मैं आपका नौकर होने के नाते नहीं आपके परिवार की मान-मर्यादा को अपनी इज्जत मानकर ऐसा रहस्योदघाटन इसलिए कर रहा हूँ कि कहीं आप भी उस की लपेट में न आ जाए। मैंने आपका अन्न व नमक खाया है। अत: मैं नमकहराम नहीं बनना चाहता और यदि आपको मेरी बात पर विश्वास न हो तो आप आज ही इस बात की परीक्षा कर लेना। आज अमावस्या है यह दिन ऐसी स्त्रियों के लिए उपयुक्त माना जाता है। जब आप भोजन करने लगोगे आपकी पत्नी आप की कमर को जीभ से चाटेगी और फिर अपने मुग्ध-मन्त्र से आपको अपने जाल में फंसा लेगी। दुर्जन घमण्डी के मन में शैतान छोड़ कर खेत में जाने का बहाना बना कर उठ खड़ा हुआ।

घमण्डी का खेत उसकी सुसराल की ओर ही था। दुर्जन बहुत शीघ्रता से लपका और घण्टा भर में घमण्डी लाल की सुसराल जा पहुँचा। घमण्डी के चारों साले उसे घर ही मिले। राजी खुशी की बताए पूछे बिना ही अपना तीर छोड़ते हुए उसने कहा—भाई साहब ! बैठे क्या हो ? आपकी बहन केवल दो घण्टे की महमान है। आपका बहनोई और उसका भाई-चारा आज दोपहर को उसे मार डालने की परियोजना तैयार कर चुके हैं। यदि बहन चाहते हो तो दलबदल सहित वहां पहुँच कर उसकी रक्षा करो। यदि आपको मेरी बात पर विश्वास न आता हो तो आप उनके चौबारे में छिप कर बैठ जाना। यदि कोई मारपीट होती नजर आवे तो अपनी बहन को बचा लेना। बिना कुछ अन्न जल ग्रहण किए अपना अमोघ तीर छोड़ कर उल्टे पांव लौट आया।

गांव में पहुँच कर घमण्डी के चाचे, ताऊ आदि अन्य परिवार जनों के कानों लग कर कई जाने माने लठेत नवयुबको को कहने लगा। भाई साहबान—मेरा अकेले का कोई चारा नहीं चलेगा लेकिन आज का दिन घमण्डी के लिए कहर का दिन है। घमण्डी का घमण्ड चूर करने के लिए तथा उसकी सम्पत्ति प्राप्त करने के लिए अपनी बहन के सहयोग एवं संकेत पर उसके साले योजना बद्ध कार्यक्रमानुसार उसका दोपहर को बध कर डालेंगे। वे लाठी एवं जेलियों से लैस होंगे। यदि भाई चाहते हो तो उसका बचाव करो और यदि हकशुफा करके उसकी जमीन हड़पना चाहते हो तो उसे मरने दो। घमण्डी की बिरादरी के भाइयों ने घमण्डी को बताए बिना ही उसे बचाने की योजना बना ली और इधर-उधर लुक छिप कर बैठ गए।

दूसरी ओर घमण्डी के साले सात-आठ की संख्या में लाठी ले दुर्जन के बताए संकेत स्थल पिछवाड़े से चढ़ कर चौबारे में बैठ गए और मौके की इन्तजार करने लगे।

दुर्जन सिंह ने चारों पक्षों को मजबूत कर, स्वयं भी घमण्डी के मकान के पास बैठ गया ताकि सुस्त पक्ष को घटना की समय पर सूचना दे सके।

घमण्डी ठीक 12½ बजे भोजन करने के लिए गया। वह अपने बचाव के लिए बगल में छुरी दबा कर ले गया। भूलां देवी ने भोजन परोस कर आसन बिछाया। घमण्डी भोजन करते हुए कनखियों से भूलां की गतिविधियों को ताकता रहा। दूसरी ओर भूलां अपने पति पर आजमाइश की कौशिश करने के विचार से दबे पांव उसकी पीठ की तरफ बढ़ने लगी। घमण्डी भूलां की गतिविधियों से सतर्क तो था ही, ज्यों ही भूलां पीछे की ओर आई घमण्डी ने उस पर छुरी का वार किया जिससे भूलां आहत हो जोर-जोर से चिल्ला कर रोने लगी। बस क्या था भूलां के भाई पल भर में घमण्डी पर लठों की बौछार करने लगे। घमण्डी की हा-पुकार सुन कर उसके भाई आदि भी उन पर पिल पड़े। यह चौपक्षीय युद्ध द्वितीय विश्वयुद्ध से कम नहीं था। कई आदमी लहूलूहान हुए, कई अपंग हो गए। गांव के लोगों ने बीच में पड़ कर युद्धविराम करवाया।

गांव के समझदार लोगों ने युद्ध के पक्षों से लड़ाई का कारण पूछा। सभी ने कहा—हमें यह सूचना दुर्जन सिंह द्वारा दी गई थी। दुर्जन की करतूतों पर गांव के नवयुवकों का खून उबाल खा गया और दुर्जन पर टूट पड़े। बुरी तरह घायल हो गया और मृत्यु आसन्न अनुभव कर गांव वालों से कहने लगा—मेरी अन्तिम इच्छा यह है कि जब मैं मर जाऊं तो मेरे मुंह में खूंटा ठोक देना। उसने अपनी अन्तिम इच्छा प्रकट कर दम तोड़ दिया।

गांव के लोगों ने दुर्जन सिंह (बिगाड़वा) की अन्तिम अभिलाषा पूर्ति हेतु उसके मुंह में एक लकड़ी का डंडा गाड़ कर कफन डाल दाह-संस्कार हेतु अर्थी उठा कर शमशान भूमि की ओर सड़क-सड़क चल पड़े। संयोगवश शमशान भूमि तक पहुँचने से पहले हल्के का दारोगा पांच सिपाहियों सहित आगे से आ गया। उसने दुर्जन की अर्थी को भूमि पर रखवा लिया और उसके मुंह में डण्डा देख कर कहने लगा—तुम लोगों ने इसका वध किया है अत: आप सभी इस शव सहित थाने चलो। लोगों के अनुनय-विनय, समझाने का दारोगा पर कोई प्रभाव न पड़ा और बिगाड़वा की अर्थी सहित गांव वालों को थाने जाना पड़ा। थाने में जाकर क्या हुआ होगा यह पाठक भली प्रकार समझ सकते हैं।

भविष्य के बाजार भाव

अगर रोका न गया भावों का चढ़ाव,
पांच साल बाद छापेंगे, अखबार
ये भाव।

गेहूं दस पैसे जोड़ी,
चावल पचास पैसे कोड़ी।

चना एक रुपये के पचास।
पांच रुपये किलो घास॥

दूध एक रुपये की बूंद,
घी एक रुपये दस पैसे की सूंघ।

चालीस पैसे तोला आम कच्चे,
एक रुपये में पांच बच्चे॥

—भारत भूषण भगत
नवी करीम, हापुड़

भारतीय संस्कृति की नारी

—वीरेन्द्र विद्यालंकार

वैदिक साहित्य के अनुशीलन (अनुसन्धान) से यह विदित होता है कि वैदिक काल में स्त्री का स्थान गौरवास्पद था। पत्नी रूप में वह आदर्श-गृह-स्वामिनी के पद से अलंकृत थी। श्वशुर और सास आदि के मध्य उसका प्रतिष्ठित स्थान था।

साम्राज्ञी श्वशुरे भव सम्राज्ञीश्वश्र्वां भव।
ननान्दरि सम्राज्ञी भव सम्राज्ञी अधिदेवृषु ॥ ऋग् ॥

आदि ग्रन्थ ऋग्वेद में कन्याओं की शिक्षा-व्यवस्था का निर्देश मिलता है। पुत्र और पुत्री में भेद नहीं माना जाता था। पुत्र के समान ही उनके भी उपनयन आदि संस्कार होते थे। वेदाध्ययन में भी भारतीय नारी का समान अधिकार था। ऋग्वेद में जहां मन्त्रद्रष्टा ऋषि दृष्टिपथ में उतरते हैं, वहां मन्त्रदर्शिका ऋषिका भी पीछे नहीं रही हैं। ऋग्वेद की कुछ मन्त्र का दर्शन करने वाली ऋषि (स्त्रियां) ये हैं :—

श्रद्धा, कामायनी, शची, यमी, इन्द्राणी, अदितिः, जुहूः, ब्रह्मजाया, अपाला, आत्रेयी, शश्वती, आङ्गिरसी, विश्ववारा, लोपामुद्रा, रोमशा, ब्रह्मवादिनी, घोषा, उर्वशी, सूर्या, सावित्री, गोधा, सिकता, निवावरी इत्यादि। मन्त्र दर्शन से इनका गौरव, वैदुष्य और आदर्श रूप परिलक्षित होता है।

स्त्रियों के अधिकार एवं कर्त्तव्य :—

नारी पुरुष से हीन कभी नहीं रही। वह पुरुष की सहयोगिनी रूप होकर पुरुष के साथ यज्ञ आदि उत्कृष्ट कार्यों का सम्पादन भी करती थी। भारतीय नारी ने आवश्यकता पड़ने पर भीषण युद्ध में सेनानी पद को भी अलंकृत किया है।

वैदिक स्त्री 'अबला' नहीं है। वरन् ऋग्वेद में सुवीरा, शूरपत्नी, इन्द्रपत्नी इत्यादि गौरवशाली पदों से उसका गौरव हमारे सामने आता है। भारतीय आदर्श

नारी दुर्जन, कामुक और धृष्ट पुरुष के सामने अबला न होकर सुवीरा के रूप में परिलक्षक्षित होती है। आचार शुद्धि, जागरूकत्व और श्रेष्ठ सन्तति का निर्माण करना भारतीय नारी का परम कर्त्तव्य है। अथर्ववेद में स्त्री-गुणों का वर्णन आता है, कि—नारी तेजस्विनी, कुलपा, पतिहितकारिणी, मृदुभाषिणी, सरला, अक्रोधधना, पतिव्रता, आज्ञाकारिणी और स्वस्थ चित्त हो। पतिव्रता वह नारी मधुलिप्त मधुर वाणी बोले। पति की शुश्रूषा कर सुखदा बने। नित्य यज्ञ करे। सौम्य तथा दयालु स्वभाव नारी का आभूषण है।

पितृ सम्पत्ति से भी कन्या बिल्कुल च्युत नहीं है। निरुक्त में भी महर्षि यास्क ने इस विषय को परिपुष्ट किया है। ऋग्वेद ने तो यहां तक कह दिया है :—

जमाजूरिव पित्रोः सचा सती।

समानादा सदसस्त्वामिये भगम् ॥ ऋग्वेद ॥

ब्राह्मण ग्रन्थों में नारी का स्वरूप :—

शतपथ ब्राह्मण आदि ग्रन्थों में नारी के उत्कृष्ट स्वरूप का वर्णन आया है। वहां नारी की विशिष्टताओं [का वर्णन किया गया है। पति का अनुसरण करना भारतीय नारी का परम कर्त्तव्य है। 'विवाह-संस्कार' में भी 'ध्रुवं पश्य', 'अरुन्धतीं पश्य' आदि भारतीय संस्कृति को चमत्कृत करने वाले वाक्यों का उच्चारण किया जाता है। स्त्री-ताड़ना का निषेध है। ब्राह्मण ग्रन्थ कहते हैं :—

'स्त्री सावित्री।' (जै० उ० ब्रा० ४-२७-१७)

'पतयो ह्येव स्त्रियै प्रतिष्ठा'। (श० ब्रा०)

'तस्मात् स्त्रियः पुंसोऽनुवर्त्मानो भावुकाः'। (शत० ब्रा०)

'अवीर्या वै स्त्री'। (शत० ब्रा० २-५-२-३६)

'न वै स्त्रियं हनन्ति'। शत० ब्रा० ११-४-३-२)

भारतीय नारी केवल अपने पुरुष (पति) का ही अनुगमन करती है। वह पति की अर्धांगिनी है। इसीलिए पत्नी के बिना तो यज्ञादि कार्यों की पूर्णता भी स्वीकार नहीं की जाती। गृहस्थ जीवन को प्रदीप्त रखने वाली अग्नि स्त्री ही है। पत्नी से ही मानव की पूर्णता होती है, ऐसा हमारे ब्राह्मण ग्रन्थ दर्शाते हैं :—

'वरुण्यं वा एतत् स्त्री करोति यदन्यस्य सत्यन्येन चरति'। (शत०)

'अथो अर्धो वा एष आत्मनः, यत् पत्नी'। (तैत्ति०)

'अयज्ञो वा एषः। योऽपत्नीकः'। (तैत्ति०)

'सा होवाच—यस्मै मां पिताऽदात्, नैवाहं तं जीवन्तं
हास्यामीति'। (शत० ब्रा०)

'जाया गार्हपत्योऽग्निः'। (ऐत० ब्रा०)

'यावद् जाया न विन्दते नैव तावत् प्रजायते,
असर्वो हि तावद् भवति।' (शत० ब्रा०)

स्मृतिग्रन्थों में नारी का रूप :—

मनुस्मृति में नारी का स्वरूप बड़े ही उत्कृष्ट रूप से प्रतिपादित है। जहां योषिता का सम्मान है, वहीं पर सब क्रियाओं की सफलता मानी है। इसके अभाव में सभी कृत्यों की निष्फलता स्वीकार की गई है :—

'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता।
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रियाः ॥ मनु० ३-५६ ॥

इसलिए भूषण आच्छादन आदि से नारी का सदा सत्कार करना चाहिए। नारी के सन्तुष्ट और प्रसन्न होने पर उस कुल की श्रीवृद्धि होती है। इसीलिए महर्षि मनु लिखते हैं कि जहां 'दम्पति' में सामञ्जस्य और पारस्परिक सन्तुष्टि रहेगी, वहीं पर कल्याण का निवास होगा। स्त्री महत्व को दर्शाते हुए मनु जी लिखते हैं कि—स्त्री तो रत्नस्वरूप है। अतः यह रत्न जहां से भी मिले, ग्रहण कर लेना चाहिए।

रामायण और महाभारत काल में नारी की स्थिति :—

रामायण और महाभारत में स्त्री शिक्षा की सुव्यवस्था देखी जाती है। रामायण में 'कौशल्या' और 'तारा' नामक स्त्रियां वेदान्तवित् थी। सन्ध्या करती हुई जानकी का वर्णन भी मिलता है। रामायण एवं उत्तर रामचरित में 'अत्रेयी' वेदान्त विद्या में निष्णात सुनी जाती हैं। महाभारत में 'सुलभा' और द्रोपदी के पाण्डित्य का वर्णन मिलता है। स्त्रियों की संगीत, नृत्य आदि कला भी उस समय विकसित थी। रामायण में एक पत्नीव्रत का अनूठा उदाहरण है। महाभारत में अकारण भार्या परित्याग की निन्दा की गई है। नारी पुरुष की अर्धांगिनी है। मातृरूप में वह भूमि से भी विशाल

है। मातृ-क्लेशकारी कहीं सुख लाभ नहीं कर सकता। महाभारत में उसे 'अवध्या' कह कर गौरवान्वित किया है। महाभारत में लिखा है कि सत्कृत नारी ही साक्षात् लक्ष्मी होती है।

उपसंहार :—

इस प्रकार भारतीय संस्कृति की नारी दीन हीन न हो कर एक आदर्शरूप में हमारे सामने आती है। बृहदारण्यक उपनिषद् में तो एक ही आत्मा के दो भेदों को स्त्री पुरुष कहा है। और स्त्री की आकाश से उपमा दी है :—

'स्त्री पुंमासौ संपरिष्वक्तौ, स इनमेवात्मानं द्वेधाऽपातयत्,
ततः पतिश्च पत्नी चाभवताम् ॥'

'……अयम् आकाशः स्त्रियाः पूर्यते।' (बृहदा०)

यजुर्वेद में भी नारी का गौरवास्पदत्व स्वीकार किया गया है—

'तस्मै नमन्तां जनयः सुपत्नीः'। (यजु०)

ऋग्वेद में इडा नामक मानव की अध्यापिका का वर्णन मिलता है :—

'इडामकृण्वन् मनुषस्य शासनीम्'। (ऋग्०)

अथर्ववेद में भी स्त्री का धातृत्व प्रतिपादित किया गया है :—

'सुमङ्गली प्रतरणी गृहाणां सुशेवापत्ये श्वशुराय शंभू' ॥ अथर्व० ॥

इस प्रकार हमारी प्राचीन संस्कृति यह पुष्ट करती है कि नारी का महत्त्व कम नहीं है। नारी की प्रसन्नता में ही गृहस्थ जीवन की सफलता है। जैसा कि मनु जी ने भी लिखा है :—

'स्त्रियां तु रोचमानायां सर्वं तद् रोच्यते कुलम्।
तस्यां त्वरोचमानायां सर्वमेव न रोचते ॥

तपस्या

टेक—"तपस्वी जीवन बड़ा निराला है।
तपस्या करने को मन उतवाला है।।"

शिव जी ने है तपस्या की घोर घने जंगलों में,
तपस्वी होने के ही कारण खूब हुआ मतवाला है।
तपस्वी जीवन बड़ा निराला है। तपस्या करने को मन उतवाला है ।। १ ।।

विद्यार्थी काल भी तपस्या काल है बतलाया,
जो तपस्या इसमें करता वह रहता सबसे निराला है।
तपस्वी जीवन बड़ा निराला है। तपस्या करने को मन उतवाला है ।। २ ।।

पार्वती ने भी तपस्या की कोई हीरा पाने के लिए,
तपस्या आखिर सफल हुई शिवजी उसने वर बना डाला है।
तपस्वी जीवन बड़ा निराला है। तपस्या करने को मन उतवाला है ।। ३ ।।

वहुत से हैं तपस्वी हुए थोड़ा मुझको ज्ञान नहीं,
दधीची को ही ले लो अस्थि देने से वह रखवाला है।।
तपस्वी जीवन बड़ा निराला है। तपस्या करने को मन उतवाला है ।। ४ ।।

इस युग में जो करे तपस्या नहीं है किसी व्यसन में फंसा,
ऐसा है वह महा मुनि जो बहुत ही निराला है।।
तपस्वी जीवन बड़ा निराला है।
तपस्या करने को मन उतवाला है ।। ५ ।।

—राम करण मलिक

आंखों देखा सच भी झूठ

—अजीत दलाल

सावन का सुहावना महीना था। मन्द-मन्द हवा के झोकों में हरित लता बेली झूम रही थी। आकाश मेघाच्छादित था। कहीं-कहीं बाग-बगीचों में कोयलें कूक रही थीं, तो कहीं-कहीं मोर मोरनियों के मध्य मदमस्त हो कर नाच रहे थे। मोरों की मधुर ध्वनियां आकाशीय होकर मेघों की गर्जन में ताल-मेल मिला रही थी। कुल मिलाकर वातावरण अत्यन्त मनोरम था।

महाराजा अकबर अपने नवरत्नों में तारों में चन्द्रमा के समान जगमगा रहा था। उस सुहावने वातावरण में किस का हृदय बाहर घूमने को नहीं करता।

महाराजा अकबर काम की अधिकता होने पर भी प्रभावित हुए बिना नहीं रह सके। उन्होंने अपने प्रमुख साथी बीरबल से शिकार खेलने की इच्छा प्रकट की। राजा की इच्छा पर शिकार की तैयारियां आरम्भ होने लगीं। वीर-योधाओं की भुजाएं फड़कने लगीं।

अकबर, बीरबल और अन्य अनुभवी साहसी वीरोंसहित शिकार के लिए चल पड़े। सभी शिकारी अपने-अपने घोड़ों पर सवार हो, शिकार के शस्त्रास्त्रों से सुसज्जित थे। शिकारी दल का प्रत्येक सदस्य अपने बाहुबल पर नाज करता था। शिकारी दल के तुरंग तरल तरङ्गों की भांति अबाध गति से आगे बढ़ रहे थे। इस प्रकार घूमते हुए शिकारी दल एक बीहड़ जगल में प्रविष्ट हुआ। अकबर और बीरबल दोनों चपलाश्वों पर बराबर बराबर आगे बढ़ रहे थे और एक सच्चे शिकारी की प्रतिज्ञा का पालन करने के उद्देश्य से अर्थात् शिकार करने के पश्चात् ही वापिस लौटने की प्रतिज्ञा का पालन करने की कामना हृदय में संजोए हुए थे। शिकारी टोल बहुत समय तक शिकार की तलाश में इधर-उधर घूमता रहा परन्तु शिकार करने में असफल रहा। इस प्रकार घूमते हुए रात्रि के काले परदे ने समस्त भूमण्डल को आच्छादित कर दिया। राजा के लिए बिना शिकार किए घर लौटना एक प्रश्न चिह्न बन कर सामने चुनौती दे रहा था। राजा के लिए ऐसा अवसर परीक्षा की घड़ी बन गया।

राजा के शिकार गमन की सूचना पाकर रंग महल में प्रसन्नता का वातावरण उत्पन्न हो गया परन्तु रात गए तक न लौटने पर वह प्रसन्नता, चिन्तापलावित हो गई।

राजा के शयन कक्ष की सफाई करने वाला भंगी राजा की रात देर तक प्रतीक्षा करता रहा। वह कभी बाहर झाँकता कभी अन्दर देखता, इस प्रकार करते करते राजा की बिछी हुई सेज को देखकर उसके मन में उस पर लेट लगाने की कामना तीव्रतर हो चली। रानी भी राजा की प्रतीक्षा करते करते राजा की सेज पर देर तक नहीं आई। महल के शान्त, एकान्त एवं सूने वातावरण को देख कर भंगी पुरुष के मन में राजा की सेज पर एक बार सोने की भावना प्रबल हो चली और वह उपयुक्त अवसर पाकर, साहस करके राजा की सेज पर लेट गया। वह केवल लेट कर देखना चाहता था परन्तु नरम मुलायम सेज की नरमी और निद्रा देवी की अपार कृपा से वह शीघ्र ही नींद में खर्राटे भरने लगा और राजा की चादर ओढ़ कर गहरी नींद सो गया।

दूसरी ओर रानी भी राजा की प्रतीक्षा करते करते अपने रंग महल में आराम करने लगी और सो गई। ठीक अर्ध रात्रि को रानी की अचानक आंखें खुलीं और वह उठ कर राजा के महल में उनींदी सी आंखें मलती हुई प्रविष्ट हुई और राजा की सेज पर सोए हुए भंगी को राजा समझ कर उसके पास सो गई। रानी के मन में भंगी रूपी राजा को जगा कर शिकार के सम्बन्ध में पूछने के विचार कई बार रह रहकर आए परन्तु यह सोच कर कि राजा शिकार के कारण थका हुआ है अतः प्रातःकाल ही सब वृत्तान्त पूछूंगी और बिना कुछ कहे सुने उसके पास लेट गई और गहरी नींद सो गई।

राजा अपने शिकार करने के उद्देश्य को बड़ी कठिनाई से परिपूर्ण कर सका। शिकार की तलाश में राजा राजधानी से बहुत दूर चला गया था। अब उसे भूख प्यास ने भी तंग करना शुरू किया। राजा अपने शिकारी दल सहित घर की ओर चल पड़ा। सारा दिन घूमते रहने के कारण उनके घोड़े भी थक चुके थे। अब न घोड़ों में वह स्फूर्ति थी और न युवकों में पहले जैसी चपलता चंचलता। थके मांदे घर की ओर चल रहे थे। बहुत लम्बा रास्का तय करके रात्रि के अन्तिम प्रहर में घर पहुँचे। राजा अपने महल के पिछवाड़े से गुजर रहा था। अपने शयन कक्ष की खिड़की को खुला देखकर अचानक उस की दृष्टि उस झांकी में से अन्दर गई और उस की सेज पर सोये हुये व्यक्ति पर पड़ी। राजा घोड़े से नीचे उतरा और झांकी के पास जाकर क्या देखता है कि रानी किसी पर पुरुष के पास सो रही है। वह पर-पुरुष और रानी दोनों गहरी नींद में सोए हुए थे और दोनों के मुख पर के कपड़े दूर पड़े थे। राजा अपनी आंखों से इस दृश्य को स्वयं देखकर क्रोध में आपे से बाहर हो गया और उन दोनों को तुरन्त तलवार की भेंट चढ़ाने की सोचने लगा, परन्तु अपनी इज्जत बचाने के लिए अपनी क्रोधाग्नि को दबा कर मन मसोस कर राजभवन में चला गया। समय उठने का हो चुका था राजा आराम

करने के विचार से राजभवन में लेट गया परन्तु वही विचार रह रह कर मन में ग्रा रहे थे ग्रौर ज्यों ज्यों सूर्य उदयाचल की ग्रोर बढ़ रहा था त्यों त्यों राजा की खिन्नता ग्रौर रानी के प्रति कुविचार दृढ़तर होते जा रहे थे। इसी उधेड़बुन में राजा पल भर भी न सो सका।

सूर्य बिना किसी की इन्तजार किए ग्रपने निर्धारित समय पर उदय हुग्रा। राजा ग्रपनी रानी को उसके ग्रपराध के लिए उसे कठोर सजा देकर ग्रपनी क्रोधाग्नि को शान्त करने के लिए उतावला हो रहा था। राज दरबारी यथावत् राजदरबार में उपस्थित हुए। राजा की इन्द्रधनुष के तुल्य तनी हुई भृकुटियों को देखकर प्रज्ञावान व्यक्ति इस रहस्य को जानने के लिए एक दूसरे के कानों लगने लगे। परन्तु कोई भी इस रहस्य को उद्‌घाटित न कर सका।

राजा दरबार में ग्राया ग्रौर ग्राते ही कुछ सेवकों को पास बुला कर ग्रादेश दिया कि शीघ्र जाग्रो ग्रौर रानी को बन्दी बना कर कैद में डाल दो। सेवक राजा की ग्राज्ञा का पालन करने के लिए चल पड़े।

दूसरी ग्रोर रानी सूर्य उदय से पहले ही उस भंगी रूपी राजा को सोया हुग्रा छोड़ कर ग्रपने महल में चली गई। उसने उसे इसलिए नहीं उठाया कि राजा देर से थका मांदा ग्राया था इसे ग्राराम करने दे। महल में जाकर रानी ने नौकर-नौकरानियों से स्वादिष्ट भोजन तैयार करने के ग्रादेश दिए। सभी ग्रपने काम में व्यस्त थे।

उस भंगी की नींद पूरी होने पर ग्रांखें खुलीं ग्रौर देखा कि राजा की सेज पर सोया हुग्रा है तो मन में बहुत भयभीत हुग्रा ग्रौर भौचक्का सा चारों ग्रोर देखने लगा। परन्तु जब उसने देखा कि महल में उसके सिवाय कोई ग्रन्य व्यक्ति नहीं है तो मन में कुछ धैर्य धारण कर उठ खड़ा हुग्रा ग्रौर शीघ्र ही ग्रपने काम में लग गया।

राजा के ग्रतिरिक्त यहां तक कि न रानी ग्रौर न भंगी इस रहस्य को जानते थे। रानी के हृदय में राजा से मिलने की भावनायें तरल तरंगों की नाई उद्वेलित हो रही थी। विधि की विडम्बना ग्रौर भाग्य के थपेड़ों का पूर्वानुमान कोई नहीं कर सकता। रानी प्रसन्नता से फूली नहीं समा रही थी कि ग्रचानक राजा के नौकर उसे बन्दी बनाने के लिए ग्रा पहुँचे। रानी को बिना कुछ बताए, बिना कुछ उसकी सुने उसे जंजीरों में जकड़ लिया ग्रौर साथ चलने का ग्रादेश दिया। रानी ने कुछ ग्रनुनय विनय की, परन्तु उसकी किसी ने एक भी न सुनी। ग्रन्त में विवश होकर रानी उनके साथ चल पड़ी ग्रौर कैद कोठड़ी में डाल दी गई।

प्रत्येक व्यक्ति का रानी के पास जाना सख्त वर्जित कर दिया गया उसे बासी कुसी बचा खुचा खाना दिया जाने लगा। रानी अपने भाग्य को कोसती, सोचती विचारती परन्तु अपराध के विषय में अनभिज्ञ असमर्थ जान कर अन्त में अपने पूर्व जन्म के बुरे कर्मो का यह लेख जान कर मन को मसोस कर रह जाती। यह सिलसिला कई महीने तक चलता रहा परन्तु राजा के अतिरिक्त किसी को इस का ज्ञान न था। किसी मन्त्री सन्त्री या दरबारी को भी इस सम्बन्ध में जबान खोलने की हिम्मत न थी। प्रत्येक व्यक्ति दूसरे की आग में पड़ कर अपने को भस्मासात् नहीं करना चाहता था। दूसरे की आपत्ति में कोई विरला वीर ही पड़ने का साहस कर सकता है परन्तु राजा के सामने ऐसा साहस करने की किस में हिम्मत थी। राज दरबार में इस सम्बन्ध में अनेक प्रकार की अटकलें लगाई जा रही थीं परन्तु सत्यता से प्रत्येक कोसों दूर था।

कई मास व्यतीत होने पर रानी कैद कोठड़ी में रहने की अभ्यस्त हो गई। समव के साथ साथ उसकी बेचैनी, उद्विग्नता, आदि कम होती जा रही थी। रानी ने कई सेवकों के माध्यम से राजा के पास अपनी अपील पहुँचाने की कोशिश की परन्तु राजा ने हर बार उसकी अपील को बेदर्दी से ठुकरा दिया। रानी के कोमल हृदय पर इस घटना ने इतना प्रबल कुठाराघात किया कि रानी को सोचते, जागते, उठते बठते यही बात रह रह कर कचोटती थी कि "मेरा दोष क्या है ?" कई बार रात्रि में सोई हुई बुड़बुड़ाकर नींद में भी यही कह उठती कि हे महाराज कम से कम मेरा दोष तो बता दो। परन्तु बताए कौन ?

एक दिन राजा शहर का गश्त करने के लिए वेश बदल कर बाहर निकला और गश्त करता हुआ उसी कैद कोठड़ी की खिड़की के पीछे खड़ा हुआ कि उसे कैद कोठड़ी में कुछ बुड़बुड़ाहट सुनाई पड़ी। राजा का सन्देह रानी के चरित्र के प्रति सावन की घटा के समान और अधिक गहरा हो गया और राजा ने सोचा कि रानी कैद में भी पर-पुरुष से यथावत् सम्बन्ध बनाए हुए है, परन्तु राजा ने इस बार कुछ धैर्य से काम लिया और सोचा कि अब की बार रानी और उस पर पुरुष दोनों को फांसी पर लटका दिया जाए। यह विचार ले, राजा खिड़की की विरल से कान लगाकर ध्यानपूर्वक सुनने लगा। रानी के चेतनाचेतन मन से हर बार यह आवाज निकली कि हे राजा आप युग युग तक जीवो, फलो फूलो, विश्व पर राज्य करो—मेरी यही अन्तिम कामना है, परन्तु महाराज मैंने ऐसा कौनसा पाप किया है जिसके फलस्वरूप मैं कैद में डाल दी गई। मुझे जीने की चाह नहीं है और मरने का भय भी नहीं है परन्तु मेरी अन्तिम इच्छा यही है कि मेरा कसूर क्या है ? जिसके कारण मुझे यह दण्ड दिया गया है। राजा के कानों में बार बार जब यही ध्वनि सुनाई पड़ती रही तो राजा का कठोर हृदय कुछ नरम हुआ। राजा वहीं

से वापिस अपने महल को लौट आया और ठण्डे मन एव मस्तिष्क से इस विषय पर सारी शेष रात सोचता रहा। कैद में पड़ी हुई रानी बुड़बुड़ाहट ने राजा को द्विधा में डाल दिया। यदि राजा इस बात का समाधान करने के लिए किसी सलाहकार से सलाह लेता है तो राजमहल की मर्यादा भंग होती है और राजकुल पर कलंक लगता है। यदि नहीं पूछता तो समस्या का समाधान नहीं हो पाता। राजा एक ओर अपनी आंखों से रानी को पर-पुरुष के पास सोए हुए देख चुका है और दूसरी ओर अपने कानों से रानी की बुड़बुड़ाहट सुन चुका है। राजा किस पर अधिक विश्वास करे—आंखों पर या कानों पर? अन्त में राजा ने आंखों को अधिक उपयुक्त एवं सत्यता के निकट समझकर रानी को **फांसी देने के अन्तिम निर्णय की घोषणा कर दी।**

क्या तुम्हें स्वीकार है ?

—कु० रेखा त्यागी (प्री. आयुर्वेद)
खानपुर कलां (सोनीपत)

नव प्रेरणा से अनुप्राणित
नव चेतना से अभिभूत
शाबाशियों से दूर
दलबन्दियों से दूर
कंगुरा बनने की कामना से दूर
कलश कहलाने की वासना से दूर
उदय के लिए आतुर
चिल्ला रहा है समाज,
नींव का पत्थर किधर है ?
नौजवानों यह चुनौती—
क्या तुम्हें स्वीकार है ?

स्मरण शक्ति के चार प्रमुख साधन

—वीरेन्द्र विद्यालंकार
गुरुकुल भैंसवाल कलां

★

सभी विद्यार्थी परीक्षा में अधिकाधिक अङ्कों का संचय करना चाहते हैं। अतः 'मेधावी' अलंकार धारण करने के लिए चार साधनों का होना अनिवार्य है। वैसे तो ईश्वर की कर्म फल-व्यवस्था से ही सब को बुद्धि मिलती है, परन्तु बहुधा विद्यार्थी मेधा से परिपूरित होते हुए भी संस्कारों को जागृत करने वाले साधनों (उपायों) के अभाव में पिछड़ जाते हैं। दूसरी बात यह है कि मनुष्य कर्म करने में स्वतन्त्र है। कुछ फलों की प्राप्ति इसी जन्म में हो जाती है, और कुछ जन्मान्तरों में। फिर क्यों नहीं इसी जीवन में सुकृत्य करके अपने को लाभान्वित किया जाए? क्योंकि परिश्रम कभी निष्फल नहीं जाता।

जीवन को समुन्नत करने के लिए हमारे शास्त्रों ने पर्याप्त प्रकाश डाला है। मैं भी उन्हीं शास्त्रोक्त चार साधनों का आपके सामने प्रकटीकरण करता हूँ। स्मरण शक्ति की वृद्धि एवं स्थिरता के लिए वे चार साधन हैं—ब्रह्मचर्य, पौष्टिक भोजन, ईश्वर भक्ति और अभ्यास।

1. ब्रह्मचर्यः —

'ब्रह्मचर्य' में बहुत सी बातें हैं, परन्तु मुख्य रूप से 'मातृवत् परदारेषु, परद्रव्येषु लोष्ठवत्' है। अर्थात् पराई स्त्री का माता के सदृश सम्मान करना, और पराये धन को अपने लिए मिट्टी ही समझना। कुत्सित दृष्टि न रखना। मनसा, वाचा भी पाप से डरना तथा वीर्य रक्षा ब्रह्मचर्य है। क्रोध, मोह, लोभ को आदर्श रूप से भोगना, उनमें आसक्त न होना ही ब्रह्मचर्य है। श्रीधर पाठक लिखते हैं—

काम, क्रोध अरु लोभ, मोह भी जीवन के सहयोगी हैं।
इनके वश में जो पड़ता है, उसके ये प्रतियोगी हैं॥

जब उपरोक्त प्रकार से प्रथम साधन का पालन होगा, तो तब मिलेगी स्मरण-शक्ति और तभी मनुष्य को यह अलंकार प्राप्त होगा। विविध कलाओं में निष्णात

मनुष्य भी ब्रह्मचर्य से शून्य हो जाने पर नीरस तरुवर की भांति दशा वाला हो जाता है। इसीलिए हमारे शास्त्रों ने सदाचार का उपदेश दिया है। सदाचार से विभूषित कैसे अपने को मतिमान् नहीं बनाएगा ?

2. पौष्टिक भोजन :—

जहां शिक्षेच्छु को ब्रह्मचर्य की आवश्यकता है, वहां स्मरण शक्ति की स्थिरता के लिए पौष्टिक भोजन की भी आवश्यकता है। यह बहुत जरूरी नहीं है, कि किसी को प्रतिदिन ही घी दूध मिले और घी, दूध में यथेच्छ स्नान किया जाए। हां, यदि मिले तो बहुत ही अच्छा है।

पौष्टिक भोजन का वास्तविक अर्थ यही है कि भोजन में पवित्रता, सात्त्विकता एवं प्रेम हो। कुत्सित प्रेम न हो। जिस भोजन से शरीर में कुछ विकारों की सम्भावना हो, उसका सर्वथा परित्याग करना चाहिए, और फिर 'केवलाघो भवति केवलादि' की पुनीत भावना से शरीर में जो पुष्टि आती है, वह अवर्णनीय है। सात्त्विक भोजन पर प्रकाश डालते हुए भगवान् कृष्ण गीता के सतरहवें अध्याय में कहते हैं—

आयु: सत्त्वबलारोग्य-सुखप्रीति विवर्धना।
रस्या: स्निग्धा: स्थिरा हृद्या आहारा: सात्त्विका: प्रिया: ।। गीता ।।

अर्थात् आयु, बुद्धि, बल, आरोग्य, सुख और प्रीति को बढ़ाने वाले एवं रसयुक्त, चिकने पदार्थ सात्त्विक भोजन के अन्तर्गत आते हैं।

जो खाद्य पदार्थ हमें प्राप्त हो, उसे प्रेम से खायें। भोजन स्वास्थ्य एवं बुद्धि-वर्धक हो। जीने के लिए खायें। खाने के लिए जीने की भावना न होवे। तब होगी स्मरण-शक्ति की प्राप्ति।

3. ईश्वर-भक्ति :—

ईश्वर-स्तुति का वातावरण एवं ईश्वर भक्ति का समय प्रायश: गुरुकुलों में तो सुलभ है, परन्तु स्कूलों में या अन्य कई शिक्षण संस्थाओं में तदभाव है। मन को एकाग्र कर प्रात: एवं सायंकाल संध्या के लिए कुछ समय निर्धारित कर लेना चाहिए। मैं यह नहीं कहता कि सन्ध्या वा यज्ञ आदि में हठात् इतना ज्यादा समय लगाया जाए, कि मन में अश्रद्धा एवं व्याकुलता पैदा हो जाए। परन्तु जितने समय तक मन हर्षोल्लास में स्नान करता रहे एवं श्रद्धासमन्वित रहे, उतने समय तक ईश्वर भक्ति करने से आत्मिक शान्ति के साथ स्मरण शक्ति भी अवतार लेती है। परन्तु आज तो—

दु:ख में सुमरन सब करैं सुख में करे न कोय।
जो सुख में सुमरन करैं, तो दु:ख काहे का होय ।।

कवि ने बिल्कुल ठीक लिखा है। क्योंकि जिस शक्ति ने इस जगत् की रचना की है, उसकी उपासना मन की स्वच्छता के लिए परमावश्यक है। किसी वस्तु की प्राप्ति के लिए उसके गुणों का वर्णन आवश्यक होता है। कवि के शब्दों में—

ध्यान लगाके जो तुम देखो, ईश्वर की सुघराई को ॥
बात बात में पाओगे उस ईश्वर की चतुराई को ॥
उस कारीगर ने कैसा यह, सुन्दर चित्र बनाया है।
कहीं पै जलमय, कहीं रेतमय, कहीं धूप, कहीं छाया है ॥

इसलिए ईश्वर की व्यापकता को जानते हुए, ईश्वर से स्मरण शक्ति रूप को धारण करने के लिए 'ईश्वर-भक्ति' अपना विशेष महत्त्व रखती है।

4. अभ्यास :—

जहां उपरोक्त तीन बातें जरूरी हैं, वहां ज्ञान-पिपासक को अभ्यास की भी आवश्यकता होती है। यद्यपि यह सामान्य सी बात लगती है। परन्तु—

करत करत अभ्यास के जड़मति होत सुजान।
रसरी आवत जात से, शिल पर परत निशान ॥

यह है अभ्यास की महिमा। अर्थात् सुकोमल रस्सी से सुदृढ़ शिला पर भी निशान हो जाते हैं। पुनः पुनः के अभ्यास से जड़मति सुजान (मतिमान्) बन जाता है। इसका उदाहरण है—बालक एकलव्य। जिसने अभ्यास से ही धनुर्विद्या में दक्षता प्राप्त कर ली थी। अच्छे विद्यार्थी के ये लक्षण होते हैं कि वे गुरु जी के पढ़ाए पाठ का नित्य स्मरण करते एवं अभ्यास करते हैं।

इसलिए स्मरण शक्ति की वृद्धि के लिए इन चार साधनों का पालन करना अत्यावश्यक है, और जिनके पास स्मरण शक्ति है, उन्हें भी स्मरण शक्ति की स्थिरता के लिए इन साधनों का परिपालन करना चाहिए।

Statement about ownership and other particulars about newspaper "SAMAJ SANDESH" to be published in the first issue every year after the last day of February.

FORM IV

(See Rule 8)

1. Place of Publication ... Gurukul Bhainswal (Sonepat)

2. Periodicity of its Publication ... Monthly

3. Printer's Name ... Dharam Bhanu
   Nationality ... Indian
   Address ... Gurukul Vidyapeeth Haryana
   Bhainswal Kalan, Distt. Sonepat

4. Publisher's Name
   Nationality
   Address } Same as above No. 3

5. Editor's Name
   Nationality
   Address } Same as above No. 3

6. Name and address of individual who own the news paper and partners or share-holders holding more than one per cent of the total capital. } Mahasabha
   Gurukul Bhainswal Kalan
   (Sonepat)

I, DHARAM BHANU, hereby declare that the particulars given above are correct to the best of my knowledge and belief.

(Sd.) DHARAM BHANU
Publisher,
SAMAJ SANDESH

Dated : 25-3-1983

गुरुकुल
चाय
खांसी, जुकाम,
इन्फ्लूएन्जा, बदहजमी
तथा थकान में मादकता
रहित उत्तम पेय।
च्यवनप्राश
चरक संहिता अष्टवर्ग युक्त
हिमालय की दिव्य जड़ी
बूटियों से तैयार, शरीर
की क्षीणता तथा फेफड़ों
के लिए प्रसिद्ध
आयुर्वेदिक रसायन।
बाल, युवक तथा वृद्ध
सबके लिये हितकर।
भीमसैनी
सुरमा
आंखों को निरोग
व शीतल रखता है।
पायोकिल
दांतों का दर्द व टीस
मसूढ़ों का फूलना
मसूढ़ों में खून व पीप
आना
पायोरिया को जड़ से
मिटाने के लिए उत्तम
आयुर्वेदिक औषधि
गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी
ओ३म्
हरिद्वार
गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी
हरिद्वार
शाखा : चावड़ी बाजार, दिल्ली-६

Approved for Libraries by D.P.I's Memo No. 3/44—1961—B. Dated 8-1-62

Approved by the Chairman Central Library Committee, Panjab Vide their Memo No. PRD-Lib.-258-61/1257-639 dated Chandigarh, the 8th Jan., 1962.

'समाज सन्देश'—डाक घर गुरुकुल भैंसवाल कलाँ
Regd. No. D/RTK-21

सदस्य संख्या
नाम
स्थान
पत्रालय
जिला

व्यवस्थापक श्री धर्मभानु गुरुकुल भैंसवाल ने नेशनल प्रिंटिंग प्रैस, रोहतक में छपवा कार्यालय समाज सन्देश गुरुकुल भैंसवाल (सोनीपत) से मुद्रित तथा प्रकाशित किया।